ॐ

श्रीजिनदत्तसूरिप्राचीनपुस्तकोद्धारफण्ड ग्रन्थाङ्कः २५

अर्थसहित

जीवविचारादिप्रकरणसंग्रहः ॥

तथा आगमसार-नयचक्रसारः ।

जैनाचार्यश्रीमज्जिनकृपाचन्द्रसूरीश्वरजी महाराज साहिबके सदुपदेशसे हैदराबाद निवासी रायबहादुर दीवानबहादुर राजाबहादुर शेठ थानमलजी लुनीयाकेसहायसे छपवाया ।

प्रकाशक श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार, मु. सुरत, जहेरी पानाचन्द्र भगुभाई

निर्णयसागरयन्त्रणालये कोलभाटवीथ्यां २६-२८ तमे रामचंद्र येसु शेडगेद्वारा मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।

विक्रम संवत् १९८५. सपाद रूप्यकं १। क्राइस्ट १९२८.

जीवविचारसूची ।

१	मंगलाचरण	गाथा. १
२	जीवकेभेद	२
३	पृथ्वीकायकेभेद	३–४
४	अप्पकायभेद	५
५	अग्निकायकाभेद	६
६	वाउकायकाभेद	७
७	वनस्पतिकायसाधारणभेद	८–९–१०–११–१२
८	प्रत्येकवनस्पतिभेद	१३
९	सूक्ष्मथावरस्वरूप	१४
१०	बेइंद्रीभेद	१५
११	तेइंद्रीभेद	१६–१७
१२	चोरिंद्रीभेद	१८
१३	पंचेंद्रीभेद नारकीभेद	१९
१४	जलचरथलचरखचरतिर्यंचऔरमनुष्यभेद	२०-२१-२२-२३
१५	देवताकाभेद	२४
१६	सिद्धोंकाभेद	२५
१७	पांचद्वार	२६
१८	शरीरप्रमाणद्वारअवगाहना	२७-२८-२९-३०-३१-३२-३३
१९	आयुप्रमाणद्वार	३४–३५–३६–३७–३८–३९
२०	कायस्थितिप्रमाणद्वार	४०–४१
२१	प्राणप्रमाणद्वार	४२–४३–४४
२२	योनिद्वार	४५–४६–४७
२३	सिद्धकास्वरूप	४८
२४	संसारस्वरूप	४९–५०
२५	जीवविचारउद्धारस्वरूप इति।	५१

नवतत्वसूची ।

१	नवतत्वनाम	गाथा १
२	नवतत्वभेद	२
३	जीवकाभेद	३—४
४	जीवलक्षण पर्याप्तिप्राण	५—६—७
५	अजीवभेदस्वभाव	८—९—१०
६	पुद्गलस्वरूप मुहूर्तमें आवलि	११—१२
७	कालस्वरूप परिणामीगाथा	१३—१४
८	पुण्यतत्वभेद	१५—१६—१७
९	पापतत्वभेद	१८—१९—२०
१०	आस्रवतत्वभेद	२१—२२—२३—२४
११	संवरतत्वभेद	२५-२६-२७-२८-२९-३०-३१-३२-३३
१२	निरजरातत्वभेद	३४—३५
१३	बंधतत्वभेदकर्मस्वभावस्थितिजघन्योत्कृष्ट	३६—३७—३८—३९—४०—४१—४२
१४	मोक्षतत्वभेद मार्गणाद्वार	४३—४४—४५—४६—४७—४८—४९—५०
१५	सम्यक्तस्वरूपमाहात्म्य	५१—५२—५३
१६	पुद्गलपरावर्त्तनस्वरूप	५४
१७	१५ भेदेंसिद्ध	५५—५६—५७—५८—५९
१८	सिद्धिगमनप्रमाण	६०

इति ।

दंडकसूची ।

१	मंगलाचरण	गाथा १
२	२४ दंडकनाम	२

३ द्वारगाथा संग्रहणी २४ द्वार गाथा ३—४
४ १ शरीरद्वार २ अवगाहनाद्वार वैक्रियश०प्र०काल ५—६—७—८—९—१०
५ ३ संघयणद्वार ११
६ ४ संज्ञाद्वार ५ संस्थानद्वार १२—१३
७ ६ कषायद्वार ७ लेश्या ८ इंद्रियद्वार १४—१५
८ ९-१० समुद्घातद्वार ११ दृष्टिद्वार १५—१६—१७—१८
९ १२ दर्शनद्वार १३ ज्ञानद्वार १९—२०
१० १४ योगद्वार १५ उपयोगद्वार २१—२२
११ १६—१७ उपपातच्यवणद्वार
१२ १८ स्थितिद्वार १९ पर्याप्तिद्वार २४-२५-२६-२७-२८
१३ २० किमाहारद्वार २१ तीनसंज्ञाद्वार २९—३०—३१
१४ २२ गतिद्वार २३ आगतिद्वार ३१—३२—३३—३४—३५—३६—३७
१५ २४ वेदद्वार व पुनः अल्पाबहुत्वद्वार गाथा३८—३९—४०
१६ स्तुति करतानाम ४१—४२

इति ।

जंबूद्वीपसंघयणीसूची ।

मंगलाचरण द्वारगाथा १ खंडवाद्वार गाथा १—२—३—४—५
२ योजनद्वार परधिगणितपद ६—७—८—९—१०
३ खेत्रद्वार ४ पर्वतद्वार ११—१२
५ कूटद्वार १३—१४—१५—१६—१७
६ तीर्थद्वार ७ श्रेणीद्वार १८—१९
८ विजयद्वार ९ द्रहद्वार २०
१० नदीद्वार २१—२२—२३—२४—२५—२६
परवतप्रमाण २७—२८—२९

इति ।

आगमसार अनुक्रमणिका।

विषय	पत्र
१ चरणकरण समकितज्ञाननिश्चयव्यवहारस्वरूप	५१
२ षट्द्रव्यकास्वरूपगुणपर्याय	५२
३ आठपक्ष स्वद्रव्यादि	५४
४ सातनयकास्वरूप ,,	५७
५ च्यार निक्षेपा ,,	६०
६ च्यार प्रमाण ,,	६६
७ सप्तभंगी त्रिभंगीसामान्यस्वभावआयतन	६६
८ निगोद विचार ,,	६८
९ साधु श्रावककाव्रत ,,	७१
१० च्यार ध्यान ,,	७३
११ भावना १२-४ ,,	७६
१२ समकित १० रूचि ८ गुण ५ भूषण	७७
१३ निश्चयव्यवहारस्वरूप	८०
१४ पंचसमवाय ,,	८३
१५ प्रस्तावना	८४
१६ थपना निखेपा निरूपण शब्द रयमें अशुद्धि-	८५

इति सूची ॥

नयचक्रसार अनुक्रमणिका

विषय	पत्र.
१ मंगलाचरण । चार अनुयोग तथा गुणठाणा आ श्रीजीवकाभेद और साधारण वैराग्य उपदेश तथा भवकी सामान्य विवक्षा और मीमांसादिक अर्थ दर्शनोका विचार.	९१
२ द्रव्यका गुणका और पर्यायका लक्षण नय निक्षेपादिक सहित इणुके अन्तरभूत अन्यदर्शनीयोकी उन्मार्गता इत्यादिक.	९४
३ पंचास्तिकायका स्वरूप तथा एकेक द्रव्यका भिन्न भिन्न लक्षण इत्यादि.	९६

विषय	पत्र.
४ पंचास्तिकायका सामान्य विशेष धर्म.	१०१
५ अस्तिस्वभावका लक्षण और नास्तिस्वभावका लक्षण.	१०२
६ अर्पित अनर्पितपणे एकधर्म सप्तभंगी देखाइ है.	१०५
७ अत्यंत विस्तारसहित स्वरूपपणे सप्तभंगी देखाइ है	१०८
८ गुणनी सप्तभंगीआ देखाई है.	११३
९ नित्यानित्यस्वभावमें और अस्ति नास्ति स्वभावमें उत्पाद व्ययका एक भेद दुसरा.	११४

	विषय	पत्र.
१०	भेद तीसरा भेद चौथा भेद पांचमा भेद छठा भेद सातमां इत्यादि.	११५
११	एकस्वभाव अनेकस्वभाव भेदस्वभाव अभेद स्वभाव भव्यस्वभाव अभव्यस्वभाव वक्तव्य स्वभाव अवक्तव्यस्वभाव परमस्वभाव इत्यादिकका स्वरूप जूदा जूदा जाणवा.	११८
१२	निक्षेपाधिकार.	१२७
१३	नयज्ञानकरणेका अधिकार.	१२८
१४	प्रमाणका स्वरूपके साथ ज्ञानस्वरूपका ओलखाणा आवर्जिकरण इत्यादि.	१४४
१५	दर्शनज्ञान चारित्ररूप मोक्षमार्ग निरूपण.	१४७
१६	स्वकुल प्रकाशन.	१५१

श्रीजिनदत्तसूरिपुस्तकोद्धारफंडग्रंथाङ्क २५।

जीवविचारप्रकरणम्।

प्रणम्य श्रीवर्द्धमानं, सर्वज्ञं सर्वदर्शिनं, जीवविचारबोधार्थं, क्रियते लोकभाषया १ व्याख्या इतिशेषः।

भुवणपईवं वीरं, नमिऊण भणामि अबुहबोहत्थं। जीवसरूवं किंचिवि, जह भणियं पुव्वसूरीहिं ॥१॥

(भुवणपईवं) तीनभुवनरूप संसारमें दीपकके समान, (वीरं) भगवान् महावीरको, (नमिऊण) नमस्कार करके, (अबुहबोहत्थं) अज्ञ लोगोंको ज्ञान करानेके लिये, (पुव्वसूरीहिं) पुराने आचार्योंने, (जह भणियं) जैसा कहा है वैसा, (जीवसरूवं) जीवका स्वरूप, (किंचिवि) संक्षेपसे (भणामि) मैं कहता हूँ॥ १॥

प्रश्न—जीवका स्वरूप जाननेसे क्या लाभ है? उत्तर—उनको हम अपनी आत्माके समान समझ कर उनसे बर्ताव करें—उनको तकलीफ न पहुँचावें.

१—शास्त्रका फरमान है कि—"पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्वसंजए। अन्नाणी किंकाही? किंवा नाहीय सेय पावगं?" पहले ज्ञान होगा तब ही अहिंसाधर्मका पालन हो सक्ता है.।

प्र०—यदि हम उनको सतावेंगे तो क्या होगा? उ०—वे भी हमें सतावेंगे—बदला लेंगे, इस वक्त कमजोर होनेके सबब वे बदला न ले सकेंगे तो दूसरे जन्ममें लेंगे.

प्र०—भगवान्को भुवन-प्रदीप क्यों कहा? उ०—जैसे दीपक घट-पट आदि पदार्थोंको प्रकाशित करता है वैसे भगवान् सारे संसारके पदार्थोंको प्रकाशित करते हैं-खुद जानते हैं तथा समवसरणमें औरोंको उपदेश देते हैं-इसलिये उनको भुवन-प्रदीप कहते हैं.

प्र०—यहां अज्ञ किनको समझना चाहिये? उ०—जो लोग, जीवके स्वरूपको नहीं जानते उनको.

प्र०—पुराने आचार्य कौन हैं? उ०—गौतम स्वामी, सुधर्मा स्वामी आदि.

जीवा मुत्ता संसारिणो य, तस थावरा य संसारी। पुढवी-जल-जलण-वाऊ, वणस्सई थावरा नेया॥२॥

(जीवा) जीव, दो प्रकारके हैं (मुत्ता) १ मुक्त (य) और (संसारिणो) २ संसारी हैं. (तस) त्रस जीव, (य) और (थावरा) स्थावर जीव, (संसारी) संसारी दोप्रकारके हैं. त्रसके भेद आगे कहेंगे (पुढवी जल जलण वाऊ वणस्सई) पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतिको (थावरा) स्थावर (नेया) जानना॥ २॥

भावार्थ—जीवके दो भेद हैं;-मुक्त और संसारी. संसारी जीवके दो भेद हैं;-त्रस और स्थावर. स्थावर जीवके पाँच भेद हैं;-पृथ्वीकाय, जलकाय-अप्काय, अग्निकाय-तेजःकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय.

प्र०—जीव किसको कहते हैं? उ०—जो प्राणोंको धारण करे. प्राण दो तरहके हैं, भाव-प्राण और द्रव्य-प्राण कहते हैं. चेतनाको भाव-प्राण कहते हैं. पाँच इन्द्रियाँ—आँख, जीभ, नाक, कान और त्वचा; त्रिविध बल-मनोबल, वचनबल और कायबल; श्वासोच्छ्वास और आयु ये दस द्रव्य-प्राण हैं.

प्र०—मुक्त किसको कहते हैं? उ०—जिसका जन्म और मरण न होता हो—जो जीव, जन्म-मरणसे छूट गया हो.

प्र०—संसारी किसको कहते हैं? उ०—जो जीव जन्म-मरणके चक्करमें फँसा हो.

प्र०—त्रस किसको कहते हैं? उ०—जो जीव, सर्दी-गरमीसे अपना बचाव करनेके लिये चल-फिर सके, वह त्रस.

प्र०—स्थावर किसको कहते हैं? उ०—जो जीव सर्दी-गरमीसे अपना बचाव करनेके लिये चल-फिर न सके, वह स्थावर।

प्र०—पृथ्वीकाय आदिका क्या अर्थ है? उ०—कायका अर्थ है शरीर; जिस जीवका शरीर पृथ्वीका हो, वह पृथ्वीकाय; जिसका शरीर जलका हो, वह जलकाय; जिसका अग्निका हो, वह अग्निकाय; जिसका वायुका हो, वह वायुकाय; जिसका वनस्पतिका हो, वह वनस्पतिकाय.

फलिहमणि-रयण-विद्दुम-, हिंगुल-हरियाल-मणसिल-रसिंदा ।
कणगाइ-धाउ-सेढी-, वन्निअ-अरणेट्टय-पलेवा ॥ ३ ॥

अब्भय-तूरी-ऊसं, मट्टी-पाहाण-जाइओ णेगा । सोवीरंजण-लूणा-इ, पुढवि-भेआइ इच्चाई ॥ ४ ॥

(फलिह) स्फटिक, (मणि) मणि-चन्द्रकान्त आदि, (रयण) रत्न-वज्रकर्केतन आदि, (विद्रुम) मूंगा, (हिंगुल) हिङ्गुल-ईंगुर, (हरियाल) हरताल, (मणसिल) मैनसिल-मनःशिला, (रसिंद) रसेन्द्र-पारा-पारद, (कणगाइ धाउ) कनक आदि धातु-सोना, चान्दी, ताम्बा, लोहा, राँगा, सीसा और जस्ता, (सेढ़ी) खटिका-खड़िया, (वन्निअ) वर्णिका-लाल रङ्गकी मिट्टी, सोनागेरु (अरणेट्टय) अरणेट्टक-पत्थरोंके टुकड़ोंसे मिली हुई पीली मिट्टी, (पलेवा) पलेवक-एक किस्मका पत्थर ॥ ३ ॥ (अब्भय) अभ्रक-अबरक, (तूरी) तेजनतूरी (ऊसं) क्षारभूमिकी-ऊसरकी मिट्टी, पापडखार (मट्टी पाहाण जाइओ णेगा) मिट्टी और पत्थरकी अनेक जातियां, (सोवीरंजण) सुरमा, खापरिया (लूणाई) लवण-नमक, (इच्चाई) इत्यादि (पुढविभेआई) पृथ्वीकाय जीवोंके भेद हैं ॥ ४ ॥

भावार्थ—स्फटिक, मणि, रत्न, मूंगा, हिंगलू, हरताल, मैनसिल, पारा, सोना, चान्दी, ताम्बा, लोहा, राँगा, सीसा-शीशा, जस्ता, खड़िया, सोनागेरु पाषाणके टुकड़ोंसे मिली हुई पीली मिट्टी, पलेवक नामक पत्थर, अबरक, तेजनतूरी नामक मिट्टी, ऊसरकी मिट्टी, और भी काली, पीली आदि रंगकी मिट्टी तथा पत्थर; सफेद, काला, लाल रंगका सुरमा; सांभर आदि नमक, इस प्रकार और भी बहुतसे पृथ्वीकाय जीवोंके भेद समझना चाहिये.

प्र०—क्या इन सोने-चान्दीके गहनोंमें भी जीव हैं? उ०—नहीं, जब तक सोना-चान्दी खानमें रहता है

तब तक उसमें जीव रहता है, खानसे निकालनेपर गलानेसे जीव नष्ट हो जाता है. इस तरह पत्थरोंको खानसे निकालने तथा मिट्टियोंको पैरोंसे चलने आदिसे भी जीव नष्ट होते हैं।

भोमंतरिक्ख-मुदगं, ओसाहिम-करग-हरितणू-महिआ। हुंति घणोदहिमाई, भेआ णेगा य आउस्स॥५॥

(भोमं) भूमिका–कूँआ, तालाव आदिका जल, (अंतरिक्खमुदगं) अन्तरिक्षका–आकाशका जल (ओसा) ओस, (हिम) बर्फ, (करग) ओले, (हरितणू) हरित वनस्पतिके–खेतमें बोये हुए गेहूँ, जव आदिके–वालोंपर जो पानीके बूंद होते हैं, वे, (महिया) महिमा–छोटे छोटे जलके कण जो बादलोंसे गिरते हैं, (घणोदहिमाई) घनोदधि आदि, (आउस्स) अप्काय जीवके, (भेआ णेगा) अनेक भेद, (हुंति) होते हैं ॥ ५ ॥

भावार्थ—कूँआ, तालाव आदिका पानी, वर्षाका पानी, ओसका पानी, बर्फका पानी, ओलोंका पानी, खेतकी वनस्पतिके ऊपरके जलीय कण, आकाशमें बादलोंके घिरनेपर कभी कभी सूक्ष्म जल–तुषार गिरते हैं, वे, तथा घनोदधि ये सब, तथा और भी अप्काय जीवके भेद हैं.

प्र०—घनोदधि किसे कहते हैं? उ०—स्वर्ग और नरक–पृथ्वीके आधार–भूत जलीयपिण्डको.

इंगाल-जाल-मुम्मुर,–उक्कासणि-कणग-विज्जुमाईआ। अगणिजिआणं भेआ, नायव्वा निउणबुद्धीए॥६॥

(इंगाल) अंगार–ज्वालारहित काष्ठकी अग्नि, (जाल) ज्वाला (मुम्मुर) कण्डेकी अथवा भरसाँयकी गरम राखमें

रहनेवाले अग्नि-कण, (उक्का) उल्का-आकाशसे जो अग्निकी वर्षा होती है वह, (असणि) अशनि-वज्रकी अग्नि, (कणग) आकाशमें उड़नेवाले अग्नि-कण, (विज्जुमाईआ) बिजलीकी अग्नि इत्यादि, (अगणिजिआणं) अग्निकाय जीवोंके (भेआ) भेद (निउणबुद्धीए) निपुण-बुद्धिसे-सूक्ष्म-बुद्धिसे (नायव्वा) जानना ॥ ६ ॥

भावार्थ—काष्ठ आदिकी ज्वाला-रहित अग्नि, अग्निकी ज्वाला, कण्डेकी अथवा भरसाँयकी गरम राखमें रहनेवाले अग्नि-कण, उल्काकी अग्नि, आकाशीय अग्नि-कण, वज्रकी अग्नि, विद्युत्‌की अग्नि ये तथा अन्य भी अग्निकाय जीवोंके भेद सूक्ष्म-बुद्धिसे जानना चाहिये.

उब्भामग-उक्कलिया, मंडलि-मह-सुद्ध-गुंजवाया य । घणतणु-वायाईया, भेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

(उब्भामग) उद्‌भ्रामक-तृण आदिको आकाशमें उड़ानेवाला वायु, (उक्कलिया) उत्कलिका-नीचे बहनेवाला वायु, जिससे धूलिमें रेखायें हो जाती हैं. (मंडलि) गोलाकार बहनेवाला वायु, (मह) महावात-आन्धी, (सुद्ध) शुद्ध-मन्दवायु, (गुंजवाया य) और गुञ्जवायु-जिसमें गूँजनेकी आवाज होती है, (घणतणुवायाईया) घनवात, तनुवात आदि, खलु (वाउकायस्स) वायुकायके (भेया) भेद निश्चय हैं ॥ ७ ॥

भावार्थ—आकाशमें ऊँचा बहनेवाला, नीचे बहनेवाला, गोलाकार बहनेवाला, आन्धी, मन्द-वायु, गुञ्जारव करनेवाला वायु, घनवात, तनुवात, ये सब, तथा और भी वायुकायजीवोंके भेद हैं.

प्र०—घनवात और तनुवातमें क्या फर्क है? उ०—घनवात जमे हुए घीकी तरह गाढ़ा है और तनुवात तपाये हुये घीकी तरह तरल है; घनवात स्वर्ग तथा नरक-पृथ्वीका आधार है और तनुवात नरक-पृथ्वीके नीचे है.

साहारण-पत्तेआ, वणसइजीवा दुहा सुए भणिआ। जेसिमणंताणं तणु, एगा साहारणा तेऊ ॥ ८ ॥

(सुए) श्रुतमें-शास्त्रमें, (वणसइजीवा) वनस्पति-कायके जीव, (साहारण पत्तेआ) साधारण और प्रत्येक ऐसे, (दुहा) दो प्रकारके (भणिया) कहे गये हैं. (जेसिमणंताणं) जिन अनन्त जीवोंका (एगा) एक (तणु) शरीर हो, (तेऊ) वे (साहारणा) साधारण कहलाते हैं ॥ ८ ॥

भावार्थ—सिद्धान्तमें वनस्पतिकाय जीवोंके दो भेद कहे गये हैं;—साधारण-वनस्पति-काय और प्रत्येक वनस्पति-काय. जिन अनन्त जीवोंका शरीर एक हो वे जीव, 'साधारण-वनस्पतिकाय' कहलाते हैं.

कंदा-अंकुर-किसलय,-पणगा-सेवाल-भूमिफोडा अ। अल्लय-तिय-गज्जर-मो,-त्थ वत्थुला-थेग-पल्लंका ९
कोमलफलं च सव्वं, गूढसिराइं सिणाइपत्ताइं। थोहरि-कुंआरि-गुग्गुलि, गलोय-पमुहाइ-छिन्नरुहा ॥ १० ॥

(कंदा) जमीकन्द-आलू, सूरन, मूलीका कन्द आदि (अंकुर) अङ्कुर, (किसलय) नये कोमल पत्ते, (पणगा सेवाल) पाँच रंगकी फुल्लि-जो कि बासी अन्न वगेरेमें पैदा होती है, और सेवाल पाणीपर जमती है (भूमिफोडा) भूमिस्फोट,—वर्षा ऋतुमें छत्रके आकारकी वनस्पति होती है, (अल्लयतिय) अद्रक, हल्दी और कर्चुक, (गज्जर) गाजर,

(मोत्थ) नागरमोथा, (वत्थुला) वथुआ, (थेग) एक किस्मका कन्द, (पल्लंका) पालका—शाकविशेष ॥९॥ (कोमलफलं च सव्वं) सब तरहके कोमल फल—जिनमें बीज पैदा न हुये हों, (गूढ सिराइं सिणाइ पत्ताइं) जिनकी नसें प्रकट न हुई हों, वे, तथा सन आदिके पत्ते, (थोहरि) थूहर, (कुंआरि) कुवारपाठो, (गुग्गुलि) गुग्गुल, (गलोय) गिलोय—गुर्च, (पमुहाइ) आदि, (छिन्नरुहा) छिन्नरुह—काटनेपर भी उगनेवाली कुछ वनस्पतियाँ ॥ १० ॥

भावार्थ—आलू, सूरन, मूलीका कन्द, अङ्कुर, नये कोमल पत्ते, और फुलि जो कि बासी अन्नमें पाँच रंग की पैदा होती है और सेवाल, वर्षा ऋतुमें पैदा होनेवाली छत्राकार वनस्पति, अद्रक, हल्दी, कचूँक, गाजर, नागरमोथा, वथुआ, थेग नामक कन्द, पालको, जिनमें बीज पैदा न हुये हों, ऐसे कोमल फल, जिनमें नसें प्रकट न हुई हों, वे, और सन आदिके पत्ते, थूहर, घीकुवार, गुग्गुल तथा काटनेपर वोह देनेसे ऊगनेवाली गुर्च नीमगिलोय आदि वनस्पतियाँ, ये सब साधारण—वनस्पतिकाय कहलाते हैं, इनको अनन्तकाय और बादर निगोदके जीव भी कहते हैं. यहाँ यह समझना चाहिये कि ये सब गीली वनस्पतियाँ ही सजीव होती हैं, सूखी नहीं.

इच्चाइणो अणेगे, हवंति भेया अणंतकायाणं । तेसिं परिजाणणत्थं, लक्खणमेयं सुए भणियं ॥११॥

(इच्चाइणो) इत्यादि, (अणेगे) अनेक (भेया) भेद, (अणंतकायाणं) अनन्तकाय जीवोंके, (हवंति) हैं, (तेसिं) उनके, (परिजाणणत्थं) अच्छी तरह जाननेके लिये, (सुए) श्रुतमें—शास्त्रमें, (एयं) यह (लक्खणं) लक्षण (भणियं) कहा है ॥ ११ ॥

भावार्थ—नव और दसमी गाथाओंमें जो अनन्तकायके भेद गिनाये हैं, उनसे भी अधिक भेद हैं, उन सबको समझानेके लिये सिद्धान्तमें अनन्तकायका लक्षण कहा है.

गूढसिरसंधिपव्वं, समभंग-महीरुहं च छिन्नरुहं । साहारणं सरीरं, तव्विवरीअं च पत्तेयं ॥ १२ ॥

जिनकी (सिर) नसें, (संधि) सन्धियाँ, और (पव्वं) पर्व—गाँठें, (गूढ) गुप्त हों—देखनेमें न आवें, (समभंगं) जिसको तोड़नेसे समान टुकड़े हों, (अहीरगं) जिनमें तन्तु न हों, (छिन्नरुहं) जो काटनेपर भी ऊगें ऐसी वनस्पतियाँ—फल, फूल, पत्ते, मूलियाँ आदि, (साहारणं) साधारण, (सरीरं) शरीर है. (तव्विवरीअं च) और उससे विपरीत, (पत्तेयं) प्रत्येक—वनस्पतिकाय है ॥ १२ ॥

भावार्थ—अनन्तकाय वनस्पति उसको समझना चाहिये "जिस वनस्पतिमें नसें, सन्धियाँ और गाँठें न हों; जिसको तोड़नेसे समान भाग हो; जिसमें तन्तु न हो; जिसको काटकर वो देनेसे वह ऊगे;" जिसमें उक्त लक्षण न हो, उस वनस्पतिको 'प्रत्येक—वनस्पति' समझना चाहिये ।

एगसरीरे एगो, जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया । फल-फूल-छल्लि-कट्ठा, मूलगपत्ताणि बीयाणि ॥ १३ ॥

(जेसिं) जिनके (एगसरीरे) एक शरीरमें (एगो जीवो) एक जीव हो (ते तु) वे तो (पत्तेया) प्रत्येक—वनस्पतिकाय हैं; उनके सात भेद हैं (फल, फूल, छल्लि, कट्ठा) फल, पुष्प, छाल, काष्ठ, (मूलग) मूलियाँ, (पत्ताणि) पत्ते, और (बीयाणि) बीज ॥ १३ ॥

भावार्थ—जिन वनस्पतियोंके एक शरीरमें एक जीव हो अर्थात् एक शरीरका एक ही जीव, स्वामी हो, उन वनस्पतियोंको प्रत्येक-वनस्पतिकाय समझना चाहिये; प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवके सात भेद हैं;—फल, पुष्प, छाल, काष्ठ, मूलियाँ, पत्ते और बीज.

पत्तेयं तरु मोत्तुं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए। सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताउ अदिस्सा ॥ १४ ॥

(पत्तेयं तरु) प्रत्येक-वनस्पतिकायको (मोत्तुं) छोड़कर, (पंचवि) पाँचों ही (पुढवाइणो) पृथ्वीकाय आदि, (सुहुमा) सूक्ष्म-स्थावर (सयल लोए) सम्पूर्ण लोकमें (हवंति) विद्यमान हैं—रहते हैं—और वे (नियमा) नियमसे (अंतमुहुत्ताउ) अन्तर्मुहूर्त आयुष्यवाले होते हैं, तथा (अदिस्सा) अदृश्य हैं—आँखसे देखनेमें नहीं आते ॥ १४ ॥

भावार्थ—प्रत्येक-वनस्पतिकायको छोड़कर पृथ्वीकाय आदि पाँचों ही सूक्ष्म-स्थावर सम्पूर्ण लोकमें भरे पड़े हैं. उनकी आयु अन्तर्मुहूर्तकी होती है तथा वे इतने छोटे हैं कि आँख उन्हें नहीं देख सकती.

प्र०—अन्तर्मुहूर्त किसे कहते हैं? उ०—नव समयसे लेकर, एक समय कम, दो घड़ी जितना काल अन्तर्मुहूर्त कहलाता हैं. नव समयोंका अन्तर्मुहूर्त सबसे छोटा अर्थात् जघन्य है; और, दो घड़ीमें एक समय कम हो, तो वह अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट है; बीचके कालमें, नव समयसे आगे, एक एक समय बढ़ाते जाँय तो, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक, असंख्य अन्तर्मुहूर्त होते हैं.

प्र०—समय किसे कहते हैं? उ०—उस सूक्ष्म कालको, जिसका कि सर्वज्ञकी दृष्टिमें भी विभाग न हो सके.

प्र०—मुहूर्त किसे कहते हैं? उ०—दो घड़ी अर्थात् अड़तालीस मिनिटोंका मुहूर्त होता है.

विशेष—प्रत्येकवनस्पतिकाय नियमसे बादर है, पाँच स्थावर, सूक्ष्म और बादर दो तरहके हैं, सबको मिलाकर ग्यारह भेद हुये; ये ग्यारह पर्याप्त और अपर्याप्तरूपसे दो तरहके हैं, इस तरह स्थावरजीवके बाईस भेद हुये.

प्र०—पर्याप्त-जीव किसे कहते हैं? उ०—जो जीव अपनी पर्याप्तियाँ पूरी कर चुका हो, उसे.

प्र०—अपर्याप्त-जीव किसे कहते हैं? उ०—जो जीव अपनी पर्याप्तियाँ पूरी न कर चुका हो, उसे.

प्र०—पर्याप्ति किसे कहते हैं? उ०—जीवकी उस शक्तिको-जिसके द्वारा जीव, आहारको ग्रहण कर रस, शरीर और इन्द्रियोंको बनाता है तथा योग्य पुद्गलोंको ग्रहण कर श्वासोच्छ्वास, भाषा और मनको बनाता है.

संख-कवड्डय-गंडुल, जलोय-चंदणग-अलस-लहगाई। मेहरि-किमि-पूयरगा, बेइंदिय माइवाहाई ॥१५॥

(संख) शङ्ख—दक्षिणावर्त आदि, (कवड्डय) कपर्दक—कौड़ी, (गंडुल) गण्डोल पेटमें जो मोटे कृमि गंदोला पैदा होते हैं, (जलोय) जलौका—जोंक, (चंदणग) चन्दनक—अक्ष—जिसके निर्जीव शरीरको साधु लोग स्थापनाचार्यमें रखते हैं, (अलस) भूनाग अलसीया जो वर्षा ऋतुमें साँप सरीखे लंबे लाल रंगके जीव पैदा होते हैं, (लहगाई) लहक—लालीयक—जो बासी रोटी आदि अन्नमें पैदा होते हैं, (मेहरि) काष्ठके कीड़ेलट्ट, (किमि) कृमि—पेटमें, फोड़ेमें तथा बवासीर आदिमें पैदा होते हैं, (पूअरगा) पूतरक—पानीके कीड़े, जिनका मुँह काला और रंग लाल वा श्वेत—प्राय होता है,

(माइवाहाई) मातृवाहिका–जिसको गुजरातमें अधिकता है और वहांके लोग चूडेल कहते हैं; इत्यादि (बेइंदिय) द्वीन्द्रिय जीव हैं. ॥ १५ ॥

भावार्थ—जिन जीवोंके त्वचा और जीभ हो, दूसरी इन्द्रियाँ न हों, वे जीव द्वीन्द्रिय कहलाते हैं, जैसे शंख, कौड़ी, पेटके जीव, जोंक, अक्ष, भूनाग, लालीयक, काष्ठकीट, कृमि, पूतरक और मातृवाहिका आदि.

गोमी-मंकण-जूआ, पिपीलि-उद्देहिया य मक्कोडा। इल्लिय-घयमिल्लीओ, सावय-गोकीड जाईओ ॥ १६ ॥
गद्दहय-चोरकीडा, गोमयकीडा य धन्नकीडा य। कुंथु-गुवालिय-इलिया, तेइंदिय इंदगोवाई ॥ १७ ॥

(गोमी) गुल्मि–कानखजूरा, (मंकण) मत्कुण–खटमल, (जूआ) यूका–जूँ, (पिपीलि) पिपीलिका–चींटी, काली कीडी (उद्देहियाय) उपदेहिका–दीमक, और (मक्कोडा) मत्कोटक–मकोड़ा, (इल्लिय) इलिका–ईली, जो अनाजमें पैदा होती है, (घयमिल्लीओ) घृतेलिका–जो घीमें पैदा होती है, लालकीडी (सावय) चर्म- यूका–जो शरीरमें पैदा होती है, जिससे भविष्यमें अनिष्टकी शङ्का की जाती है, (गोकीड जाईओ) गोकीटकी जातियाँ अर्थात् पशुओंके कान आदि अवयवोंमें पैदा होनेवाले जीव ॥ १६ ॥ (गद्दहय) गर्दभक–गोशाला आदिमें पैदा होनेवाले सफेद रँगके जीव, (चोर- कीडा) चोरकीट–विष्ठाके कीड़े, (गोमयकीडा) गोमयकीट–गोबरके कीड़े, (धन्नकीडाय) धान्यकीट–अनाजके कीड़े, और (कुंथु) कुन्थु–एक किसका कीड़ा, (गुवालिय) गोपालिका–एक किसका अप्रसिद्ध जीव, (इलिया) ईलिका–

जो शक्कर और चावलमें पैदा होती है, (इंदगोवाई) इन्द्रगोप–जो वर्षामें लाल रँगका जीव पैदा होता है जिसे पंजाबी चीजन्होटी, और गुजराती गोकलगाय कहते हैं–मारवाडमें मम्मोलाक० इत्यादि (तेइंदिय) त्रीन्द्रिय जीव हैं ॥ १७ ॥

भावार्थ—जिन जीवोंको सिर्फ शरीर, जीभ और नाक हो, उनको त्रीन्द्रिय कहते हैं,–वे ये हैं;–कानखजूरा, खटमल, जूँ, चींटी, दीमक, अनाजमें पैदा होनेवाली ईली, मकोड़ा, घीमें पैदा होनेवाली लाल कीडी, शरीरमें पैदा होनेवाली चर्मजूँ, गायके कानआदिमें पैदा होनेवाले कीड़े, गोशालामें पैदा होनेवाले जीव, विष्ठाके कीड़े, गोबरके कीड़े, अनाजके कीड़े, कुन्थु, गोपालिका, शक्कर और चावलमें पैदा होनेवाले जीव ईली, इन्द्रगोप आदि.

चउरिंदिया य विच्छू,ढिंकुण–भमरा य भमरिया-तिड्डा मच्छिय डंसा मसगा,कंसारी-कविलडोलाई१८

(विच्छू) बिच्छू, (ढिंकुण) ढिङ्कुण–घुड़साल आदिमें पैदा होता है, (भमरा) भ्रमर–भौंरा, (भमरिया) भ्रमरिका–बर्रे, (तिड्डा) टिड्डी–टीढ़ी, (मच्छिय) मक्षिका–मक्खी, मधुमक्खी, (डंसा) दंश–डांस, (मसगा) मशक–मच्छर, (कंसारी) कंसारिका–जो उजाड़ जगहमें पैदा होती है, (कविलडोलाई) कपिलडोलक–एक किस्मका जीव जिसे गुजराती खड़माँकड़ी कहते हैं, इत्यादि (चउरिंदिया) चतुरिन्द्रिय जीव हैं ॥ १८ ॥

भावार्थ—जिन जीवोंको शरीर, जीभ, नाक और आँख हो, वे चतुरिन्द्रिय कहलाते हैं, जैसेः–बिच्छू, घुड़सालमें पैदा होनेवाला ढिङ्कुण नामक जीव, भमरा, बर्रे, मक्खी, मधुमक्खी, डाँस, मच्छर, टीढ़ी, कंसारिका, कपिलडोलक आदि।

पंचिंदिया य चउहा, नारय-तिरिया-मणुस्स-देवा य। नेरइया सत्तविहा, नायव्वा पुढविभेएणं ॥ १९ ॥

(पंचिंदिया) पञ्चेन्द्रिय जीव (चउहा) चतुर्धा–चार प्रकारके हैं (नारय) नारकिया, (तिरिया) तिर्यञ्च, (मणुस्स) मनुष्य (य) और (देवा) देव, (नेरइया) नैरयिकनरकमें रहनेवाले जीव (पुढविभेएणं) पृथ्वीके भेदसे (सत्तविहा) सप्तविधा–सात प्रकारके (नायव्वा) जानना ॥ १९ ॥

भावार्थ—पञ्चेन्द्रिय जीवके चार भेद हैं;–नारक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव. भिन्न भिन्न सात स्थानोंमें पैदा होनेके कारण नारक जीव सात प्रकारके हैं. उन सात स्थानोंके–नरकोंके नाम ये हैं;—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और तमस्तमःप्रभा.

"पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें नारकोंके भेद कहकर अब चार गाथाओंसे पञ्चेन्द्रिय, तिर्यञ्च और मनुष्योंके भेद कहते हैं."

जलयर-थलयर-खयरा, तिविहा पंचेंदिया तिरिक्खा य। सुसुमार-मच्छ-कच्छव,गाहा-मगराइ जलचारी

(जलयर) जलचर, (थलयर) स्थलचर, (खयरा) खेचर (पंचेंदिया) पञ्चेन्द्रिय (तिरिक्खा) तिर्यञ्च (तिविहा) त्रिविध अर्थात् तीन प्रकारके हैं. (जलचारी) जलमें रहनेवाले (सुसुमार) शिशुमार–सुइस, जिसका आकार भैंस जैसा होता है, (मच्छ) मत्स्य–मछली, (कच्छव) कच्छप कछुआ, (गाहा) ग्राह–घड़ियाल, (मगराइ) मकर–मगर आदि हैं ॥ २० ॥

भावार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके तीन भेद हैं;—जलचर, स्थलचर और खेचर. जलचर जीव ये हैं;—सुईस, मछली, कछुआ, ग्राह, मकर आदि.

चउपय-उरपरिसप्पा, भुयपरिसप्पा य थलयरा तिविहा। गो-सप्प-नउल-पमुहा, बोधव्वा ते समासेणं॥२१॥

(थलयरा) स्थलचर जीव (तिविहा) त्रिविध अर्थात् तीन प्रकारके हैं; (चउपय) चतुष्पद—चार पेरसे चलनेवाले, (उरपरिसप्पा) उरःपरिसर्प—छातीसे—पेटसे चलनेवाले (य) और (भुयपरिसप्पा) भुजपरिसर्प—भुजाओंसे चलनेवाले, (गो) गाय, (सप्प) साँप, (नउल) नकुल नवलिया (पमुहा) प्रमुख—आदि (ते) वे (समासेणं) समाससे—सङ्क्षेपसे (बोधव्वा) जानने ॥ २१ ॥

भावार्थ—जमीन पर चलनेवाले जीव जिनको स्थलचर कहते हैं—तीन प्रकारके हैं; (१) चार पेरसे चलनेवाले गाय, भैंस आदि; (२) पेटसे चलनेवाले सर्पादि; (३) भुजाओंसे चलनेवाले नकुल—न्योला आदि। क्रमशः इन तीनोंकोंलोंको चतुष्पद, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प कहते हैं.

खयरा-रोमय-पक्खी, चम्मयपक्खी य पायडा चेव। नरलोगाओ बाहिं, समुग्गपक्खी वियपक्खी॥२२॥

(खयरा) खेचर—आकाशमें उड़नेवाले जीव (रोमयपक्खी) रोमजपक्षी (य) और (चम्मयपक्खी) चर्मजपक्षी (पायडा) प्रकट हैं—प्रसिद्ध हैं. (नरलोगाओ) नरलोकसे—मनुष्यलोकसे (बाहिं) बाहर (समुग्गपक्खी) समुद्गपक्षी और (वियपक्खी) विततपक्षी हैं ॥ २२ ॥

भावार्थ—आकाशमें उड़नेवाले तिर्यञ्च, खेचर कहलाते हैं, उनके दो भेद हैं;–रोमजपक्षी, और चर्मजपक्षी. रोमसे जिनके पङ्ख बने हैं वे रोमजपक्षी, जैसे–तोता, हंस, सारस आदि. चामसे जिनके पङ्ख बने हैं वे चर्मजपक्षी, जैसे—चमगादड़ आदि. जहाँ मनुष्यका निवास नहीं है, उस भूमिमें दो तरहके पक्षी होते हैं;–समुद्गपक्षी और विततपक्षी. सिकुड़े हुए, जिनके डब्बेके समान पङ्ख हों, वे समुद्गपक्षी. जिनके पङ्ख फैले हुए हों, वे विततपक्षी कहलाते हैं.

सव्वे जल-थल-खयरा, संमुच्छिमा गब्भया दुहा हुंति । कम्माकम्मगभूमि, अंतरदीवा मणुस्सा य ॥ २३ ॥

(सव्वे) सब (जलथलखयरा) जलचर, स्थलचर, और खेचर (संमुच्छिमा) सम्मूर्च्छिम, (गब्भया) गर्भज (दुहा) द्विधा–दो प्रकारके (हुंति) होते हैं. (मणुस्सा) मनुष्य (कम्माकम्मग भूमि) कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज (य) और (अंतरदीवा) अन्तर्द्वीपवासी हैं ॥ २३ ॥

भावार्थ—पहले तिर्यञ्चके तीन भेद कहे हैं;–जलचर, स्थलचर, और खेचर. ये तीनों दो दो प्रकारके हैं;–संमूर्च्छिम, और गर्भज. जो जीव, मा–बापके विना ही पैदा होते हैं, वे संमूर्च्छिम कहलाते हैं. जो जीव, गर्भसे पैदा होते हैं वे गर्भज. मनुष्यके तीन भेद हैं, कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज, और अन्तर्द्वीपनिवासी. खेती, व्यापार आदि कर्म–प्रधान भूमिको कर्मभूमि कहते हैं । उसमें पेदा होनेवाले मनुष्य, कर्मभूमिज कहलाते हैं; कर्मभूमियाँ पन्दरह हैं; पाँच भरत पाँच ऐरवत और पाँच महाविदेह. जहाँ खेती, व्यापार आदि कर्म नहीं होता उस भूमिको अकर्मभूमि कहते हैं, वहाँ पेदा होनेवाले मनुष्य अकर्मभूमिज कहलाते हैं; अकर्मभूमियोंकी संख्या तीस है । वह इस प्रकारः–ढाई द्वीपमें पाँच

मेरु हैं, प्रत्येक मेरुके दोनों तरफ अर्थात् उत्तर तथा दक्षिणकी ओर १ हैमवंत, २ ऐरण्यवंत, ३ हरिवर्ष, ४ रम्यक, ५ देवकुरु और ६ उत्तरकुरु, इन नामोंकी छह छह भूमियाँ हैं, इन छह भूमियोंको पाँच मेरुओंसे गुणनेपर तीस संख्या होती है. अन्तर्द्वीपमें पैदा होनेवाले मनुष्य अन्तर्द्वीपनिवासी कहलाते हैं, अन्तर्द्वीपोंकी संख्या छप्पन है, वह इस प्रकार–भरतक्षेत्रसे उत्तर दिशामें हिमवान् नामक पर्वत है, वह पूर्व दिशामें तथा पश्चिम दिशामें लवणसमुद्रतक लम्बा है, इसकी पूर्व तथा पश्चिममें ईशानादिविदिशोंमें दो दो दँष्ट्राकार भूमियाँ समुद्रके भीतर हैं, इस तरह पूर्व तथा पश्चिमकी चार दँष्ट्रायें हुईं; इसी प्रकार ऐरवतक्षेत्रसे उत्तर, शिखरी नामक पर्वत है, वह भी पूर्व तथा पश्चिममें समुद्र तक लम्बा है और दोनों दिशाओंमें दो दो दंष्ट्राकार भूमियाँ समुद्रके अन्दर घुसी हैं, दोनोंकी आठ दँष्ट्रायें हुईं, हर एक दँष्ट्रामें सात सात अन्तर्द्वीप हैं, सातको आठसे गुणनेपर छप्पन संख्या हुई.

विशेष—कर्मभूमि, अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीप, ये सब ढाई द्वीपमें हैं. जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और पुष्करवरद्वीपका आधा भाग, इनको ढाई द्वीप कहते हैं. इस ढाई द्वीपमें ही मनुष्य पेदा होते हैं तथा मरते हैं, इसलिये इसको 'मनुष्यक्षेत्र' कहते हैं, इसका परिमाण पैंतालीस लाख योजन है. अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीपमें जो मनुष्य रहते हैं, उन्हें 'युगलिया' कहते हैं, इसका कारण यह है कि स्त्री–पुरुषका युग्म–जोड़ा–साथ ही पेदा होता है और उनका वैवाहिक सम्बन्ध भी परस्पर ही होता है. इनकी ऊँचाई आठसौ धनुषकी, और आयु, पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग जितनी है. पन्दरह कर्मभूमियाँ, तीस अकर्मभूमियाँ और छप्पन अन्तर्द्वीप, इन सबको मिलानेसे एकसौ एक मनुष्य-

भूमियाँ हुईं, इनमें पैदा होनेसे मनुष्योंके भी उतने ही भेद हुए, इनके भी पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो भेद हैं, इसलिये दोसौ दो भेद हुए. इन गर्भज मनुष्योंके मल, कफ आदिमें जो मनुष्य पैदा होते हैं, वे संमूर्च्छिम कहलाते हैं तथा वे अपनी पर्याप्ति पूरी किये विना ही मर जाते हैं; इनके–संमूर्च्छिम मनुष्यके–एकसौ एक भेदोंके साथ दोसौ दोको मिलानेसे मनुष्योंके तीनसौ तीन भेद होते हैं.

दसहा भवणाहिवई, अट्ठविहा वाणमंतरा हुंति। जोइसिया पंचविहा, दुविहा वेमाणिया देवा॥ २४॥

(भवणाहिवई) भवनाधिपति देवता, (दसहा) दशधा दस प्रकारके हैं, (वाणमंतरा) वानमन्तर देवता, (अट्ठविहा) अष्टविधा–आठ प्रकारके, (हुंति) होते हैं, (जोइसिया) ज्योतिष्का–ज्योतिष्क देवता, (पंचविहा) पञ्चविधा–पाँच प्रकारके हैं और (वेमाणिया देवा) वैमानिक देवता, (दुविहा) दो प्रकारके हैं॥ २४॥

भावार्थ—भवनपति देवताओंके दस भेद हैं;–१ असुरकुमार, २ नागकुमार, ३ सुपर्णकुमार, ४ विद्युत्कुमार, ५ अग्निकुमार, ६ द्वीपकुमार, ७ उदधिकुमार, ८ दिक्कुमार, ९ वायुकुमार, और १० स्तनितकुमार. वानमन्तर–वाणव्यन्तर–देवताओंके आठ भेद हैं;–१ पिशाच, २ भूत, ३ यक्ष, ४ राक्षस, ५ किन्नर, ६ किंपुरुष, ७ महोरग, और ८ गान्धर्व. वाणव्यन्तर (वानमन्तर) के ये भी आठ भेद हैं;–१ अणपन्नी, २ पणपन्नी, ३ इसीवादी, ४ भूतवादी, ५ कन्दित, ६ महाकन्दित, ७ कोहण्ड, और ८ पतङ्ग. ज्योतिष्क देवताओंके पाँच भेद हैं;—१ चन्द्र, २ सूर्य, ३ ग्रह, ४ नक्षत्र, और ५ तारा. वैमानिक देवता दो प्रकारके हैं;—१ कल्पोपपन्न, और २ कल्पातीत. कल्प अर्थात् आचार–

तीर्थङ्करोंके पाँच कल्याणकमें आना-जाना, उसकी रक्षा करनेवाले देवता, 'कल्पोपपन्न' कहलाते हैं. उक्त आचारके पालन करनेका अधिकार जिन्हें नहीं है, वे देव, 'कल्पातीत' कहलाते हैं. कल्पोपपन्न देवताओंके बारह देवलोक हैं. इसलिये स्थानके भेदसे उन देवोंके भी बारह भेद समझना चाहिये. बारह देव लोक ये हैं;-१ सौधर्म, २ ईशान, ३ सनत्कुमार, ४ माहेन्द्र, ५ ब्रह्म, ६ लान्तक, ७ शुक्र, ८ सहस्रार, ९ आनत, १० प्राणत, ११ आरण, और १२ अच्युत. कल्पातीत देवोंके चौदह भेद हैं; नवग्रैवेयकमें रहनेवाले तथा पाँच अनुत्तरविमानमें रहनेवाले. नवग्रैवेयकोंके नाम ये हैं;-१ सुदर्शन, २ सुप्रबुद्ध, ३ मनोरम, ४ सर्वतोभद्र, ५ विशाल, ६ सुमनस, ७ सौमनस, ८ प्रियङ्कर, और ९ नन्दिकर. पाँच अनुत्तरविमानोंके नाम ये हैं;-१ विजय, २ वैजयन्त, ३ जयन्त, ४ अपराजित, और ५ सर्वार्थसिद्ध. अब उक्त देवोंके स्थान-रहनेकी जगह-संक्षेपमें कहते हैं; मेरु पर्वतके मूलमें समभूतल पृथ्वी है, उससे नीचे रत्नप्रभा नामक प्रथम नरकका दल एक लाख अस्सी हजार योजन मोटा है, उसमें तेरह प्रतर हैं, उन प्रतरोंमें बारह आन्तर-स्थान हैं, प्रथम और अन्तिम आन्तर-स्थानोंको छोड़कर बाकीके दस आन्तर-स्थानोंमें, हर एकमें, एक एक भवनपति देवोंके निकाय रहते हैं प्रत्येक निकायमें दक्षिणकी तरफ एक, और उत्तरकी तरफ एक, ऐसे दो इन्द्र होते हैं, इस तरह दस निकायोंके बीस इन्द्र हुए.

पहले कहा गया है कि रत्नप्रभाका दल एक लाख अस्सी हजार योजन मोटा है, ऊपर एक हजार और नीचे एक हजार योजन पृथ्वीको छोड़कर बाकीके एक लाख अठहत्तर हजार योजनमें पूर्वोक्त तेरह प्रतर हैं, जिनमें कि दस

प्रकारके भवनपति देव रहते हैं, ऊपरके बचे हुए एक हजार योजनमें सौ योजन ऊपर, और सौ योजन नीचे छोड़ दिये जानेपर बाकी आठसौ योजन बचे, इनमें आठ व्यन्तर निकाय हैं; प्रत्येक निकायमें, भवनपति निकायकी तरह, दक्षिणमें एक, और उत्तरमें एक, ऐसे दो इन्द्र रहते हैं, इस तरह आठ व्यन्तर निकायके सोलह इन्द्र हुए. ऊपर जो सौ योजन छोड़ दिये गये थे, उनमेंसे दस योजन ऊपर, और दस योजन नीचे छोड़ दिये जानेपर अस्सी योजन बचे, उनमें आठ प्रकारके वाणमन्तर देव रहते हैं; प्रत्येक निकायमें पहलेकी तरह एक दक्षिणमें, और एक उत्तरमें ऐसे दो इन्द्र रहते हैं, इस प्रकार आठ निकायोंके सोलह इन्द्र हुए; दोनों प्रकारके व्यन्तरोंके बत्तीस इन्द्र हुए, इनमें भवन-पतिके बीस इन्द्रोंके मिलानेपर बावन इन्द्र हुए. अब ज्योतिष्क देवोंकी रहनेकी जगह कहते हैं. पहले ज्योतिष्क देवोंके पाँच भेद कह चुके हैं, उनके और भी दो भेद हैं, एक 'चर' और दूसरे 'स्थिर'; मनुष्य-क्षेत्रमें जो ज्योतिष्क देव हैं, वे चर हैं, अर्थात् हमेशा घूमते रहते हैं और मनुष्यलोकसे बाहरके ज्योतिष्क देव, स्थिर हैं अर्थात् उनके विमान एक ही जगह रहते हैं, जहाँपर कि वे हैं. चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा, इन पांच ज्योतिष्क देवोंमें, चन्द्र और सूर्य, इन दोनोंकी इन्द्र-पदवी है अर्थात् ये दोनों, ज्योतिष्कोंमें इन्द्र कहलाते हैं, दूसरोंको इन्द्र-पदवी नहीं है. मेरुके सम-भूतल-मूलसे ऊपर सात सौ नब्वे योजनकी ऊँचाईपर ताराओंके विमान हैं, वहाँसे दस योजनकी ऊँचाईपर सूर्यका विमान है, वहाँसे अस्सी योजनकी ऊँचाईपर चन्द्रका विमान है, वहाँसे चार योजनकी ऊँचाईपर नक्षत्रोंके विमान हैं, वहाँसे सोलह योजनपर दूसरे दूसरे ग्रहोंके विमान हैं, तात्पर्य यह है कि मेरुके मूलकी सपाट-भूमिसे सातसौ नवे

योजनके ऊपर एकसौ दस योजनोंमें ज्योतिष्क देव रहते हैं. अब वैमानिक देवोंके स्थान कहते हैं;–सम्पूर्ण लोक–जिसे त्रिभुवन कहते हैं—उसका आकार पुरुषके समान है, और उसकी लम्बाई चौदह राजू है, नीचेकी सात राजुओंमें सात नरक हैं. नाभिकी जगह–मध्यमें–मनुष्यलोक है. मेरुकी सपाटभूमिसे सातसौ नवे योजनपर ज्योतिष्क देवोंके बिमान हैं, वहाँसे लगभग एक राजू ऊपर, दक्षिण दिशामें सौधर्म देवलोक और उत्तर दिशामें ईशान देवलोक परस्पर जुड़े हुए हैं; वहाँसे कुछ दूर ऊपर, दक्षिणमें तृतीय देवलोक सनत्कुमार और उत्तरमें चौथा देवलोक माहेन्द्र, एक दूसरेसे लगे हुए हैं; वहाँसे ऊपर पाँचवाँ ब्रह्मलोक, छठा लान्तक, सातवाँ शुक्र, आठवाँ सहस्रार ये चार देवलोक, कुछ कुछ अन्तरपर, क्रमसे एकपर एक, ऐसी स्थितिमें हैं; वहाँसे कुछ ऊँचाईपर नववाँ आनत और दसवाँ प्राणत, दक्षिण और उत्तरमें, एक दूसरेसे लगे हुए हैं; वहाँसे कुछ ऊँचाईपर, ग्यारहवाँ आरण और बारहवाँ अच्युत, दक्षिण तथा उत्तर दिशाओंमें, एक दूसरेसे जुड़े हुए हैं. प्रथमके आठ देवलोकोंके आठ इन्द्र हैं अर्थात् हर एक देवलोकका एक एक इन्द्र है; पर नववें और दसवें देवलोकका एक तथा ग्यारहवें और बारहवें देवलोकका एक, इस प्रकार अन्तिम चार देवलोकोंके दो इन्द्र हैं; प्रथमके आठ मिलानेसे कल्पोपपन्न वैमानिक देवताओंके दस इन्द्र हुए. पुरुषाकार लोकके गलेके स्थानमें नवग्रैवेयक हैं, वहाँसे कुछ ऊपर पाँच अनुत्तरविमान हैं. लोकरूप पुरुषके ललाटकी जगह सिद्धशिला है, जो स्फटिकके समान निर्मल अर्जुनसोनेकी है, वहाँसे एक योजनपर लोकका अन्त होता है, लोकके अन्तिमभागमें सिद्ध महाराजका निवास है. अब तीन प्रकारके किल्बिषिक देव तथा नव प्रकारके लोकान्तिक देवोंका निवा-

सस्थान कहते है. प्रथम प्रकारके किल्बिपिकोंकी तीन पल्योपम आयु है और वे पहले तथा दूसरे देवलोकके नीचे रहते हैं. दूसरे प्रकारके किल्बिषिकोंकी आयु, तीन सागरोपमकी है और वे तीसरे तथा चौथे देवलोकके नीचे रहते हैं. तीसरे प्रकारके किल्बिषिकोंकी आयु तेरह सागरोपम है और वे पाँचवें तथा छठे देवलोकके नीचे रहते हैं. ये सब किल्बिष्कि देव, चाण्डालके समान, देवोंमें नीच समझे जाते हैं. लोकान्तिक देव, पाँचवें देवलोकके अन्तमें उत्तर-पूर्वादि कोणमें रहते हैं. चौसठ इन्द्रः-भवनपति देवोंके बीस, व्यन्तरोंके बत्तीस, ज्योतिषियोंके दो और वैमानिक देवोंके दस, सबकी संख्या मिलानेपर इन्द्रोंकी चौसठ संख्या होती है.

शास्त्रमें देवोंके १९८ भेद कहे हैं, उनको इस तरह समझना चाहियेः-भवनपतिके दस, चर ज्योतिष्कके पाँच, स्थिर ज्योतिष्कके पाँच, वैताढ्यपर रहनेवाले तिर्यक् जृम्भक देवोंके दस भेद, नरकके जीवोंको दुःख देनेवाले परमाधामीके पन्दरह भेद, व्यन्तरके आठ भेद, वानव्यन्तरके आठ भेद, किल्बिषियोंके तीन भेद, लोकान्तिकके नव भेद, बारह देवलोकोंके बारह भेद, नव ग्रैवेयकोंके नव भेद, पाँच अनुत्तरविमानोंके पाँच भेद, सब मिलाकर ९९ भेद हुए, इनके भी पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो भेद हैं, इस प्रकार १९८ भेद देवोंके होते हैं. मनुष्योंके ३०३ भेद पहले कह चुके।

अब तिर्यञ्चके ४८ भेद कहते हैंः-पाँच सूक्ष्मस्थावर, पाँच बादरस्थावर, एक प्रत्येक वनस्पतिकाय और तीन विकलेन्द्रिय सब मिलाकर चौदह हुए; ये चौदह पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो प्रकारके हैं, इस तरह अट्ठाईस हुए जलचर, खेचर, तथा स्थलचरके तीन भेदः-चतुष्पद, उरःपरिसर्प तथा भुजपरिसर्प, ये प्रत्येक संमूर्च्छिम और गर्भज होनेसे

दस भेद हुए; ये दसों पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो प्रकारके हैं, इसलिये बीस भेद हुए, इनमें पूर्वोक्त अट्ठाइस भेदोंके मिलानेपर तिर्यञ्चोंके ४८ भेद होते हैं।

नारक जीवोंके सात भेद कह चुके हैं, वे पर्याप्त तथा अपर्याप्त रूपसे दो तरहके हैं, इस तरह नारक जीवोंके चौदह भेद होते हैं. देवोंके १९८, मनुष्योंके ३०३, तिर्यञ्चोंके ४८ और नारकोंके १४ भेद, इन सबको मिलानेसे ५६३ भेद, संसारी जीवके हुए।

सिद्धा पनरसभेया, तित्थ-अतित्थाइ-सिद्ध भेएणं। एए संखेवेणं, जीवविगप्पा समक्खाया ॥ २५॥

(तित्थ अतित्थाइ सिद्ध भेएणं) तीर्थ-सिद्ध, अतीर्थ-सिद्ध आदि भेदोंसे, (सिद्धा) सिद्ध-जीवोंके (पनरस भेया) पन्दरह भेद हैं. (संखेवेणं) सङ्क्षेपसे, (एए) ये-पूर्वोक्त, (जीवविगप्पा) जीव-विकल्प-जीवोंके भेद, (समक्खाया) कहे गये ॥ २५ ॥

भावार्थ—तीर्थ-सिद्ध, अतीर्थ-सिद्ध आदि सिद्धोंके पन्दरह भेद "नवतत्त्व" में कहे हैं, उसे देखलेना चाहिये. सङ्क्षेपमें जीवोंके भेद इस ग्रन्थमें कहे गये हैं.

एएसिं जीवाणं, सरीरमाऊ—ठिई सकायंमि। पाणा जोणिपमाणं, जेसिं जं अत्थि तं भणिमो ॥२६॥

(एएसिं) इन-पूर्वोक्त (जीवाणं) जीवोंके, (सरीरं) शरीर-प्रमाण, (आऊ) आयुः-प्रमाण, (सकायंमि) स्व-

कायामें, (ठिई) स्थितिका प्रमाण अर्थात् स्वकायस्थिति-प्रमाण, (पाणा) प्राण-प्रमाण और (जोणिपमाणं) योनि-प्रमाण, (जेसिं) जिनोंके, (जं अत्थि) जितने हैं, (तं) उसे, (भणिमो) कहते हैं ॥ २६ ॥

भावार्थ—पहले एकेन्द्रिय आदि जीव कहे गये हैं, उनके शरीरका प्रमाण, आयुका प्रमाण, स्वकायस्थितिका प्रमाण—एकेन्द्रियादि जीवोंका मर कर फिर उसी कायमें पैदा होना, 'स्वकायस्थिति' कहलाता है उसका प्रमाण; प्राण-प्रमाण—दस प्राणोंमेंसे अमुक जीवको कितने प्राण है इसकी गिनती; योनि-प्रमाण—चौरासी लाख योनियोंमेंसे किन किन जीवोंकी कितनी कितनी योनियाँ हैं इस विषयकी गिनती;—ये बातें आगे कही जायँगी.

अंगुलअसंखभागो, सरीरमेगिंदियाण सव्वेसिं । जोयणसहस्समहियं, नवरं पत्तेयरुक्खाणं ॥ २७ ॥

(सव्वेसिं) सम्पूर्ण (एगिंदियाण) एकेन्द्रियोंका (सरीरं) शरीर (अंगुलअसंखभागो) उँगलीके असंख्यातवें भाग जितना है, (नवरं) इतनाविशेषहै लेकिन (पत्तेयरुक्खाणं) प्रत्येकवनस्पतियोंका शरीर, (जोयणसहस्समहियं) हजार-योजनसे कुछ अधिक है ॥ २७ ॥

भावार्थ—सूक्ष्म तथा बादर पृथ्वीकाय आदि एकेन्द्रिय जीवोंका शरीर-प्रमाण, उँगलीके असंख्यातवें भाग जितना है, लेकिन प्रत्येक वनस्पतिकायके जीवोंका शरीरप्रमाण, हजार योजनसे कुछ अधिक है; यह प्रमाण समुद्रके पद्मनालका तथा ढाई द्वीपसे बाहरकी लताओंका है.

बारस जोयण तिन्ने, व गाउआ जोयणं च अणुकमसो। बेइंदिय तेइंदिय, चउरिंदिय देहमुच्चत्तं ॥ २८ ॥

(बेइंदिय) द्वीन्द्रिय, (तेइंदिय) त्रीन्द्रिय और (चउरिंदिय) चतुरिन्द्रिय जीवोंके, (देहमुच्चत्तं) शरीरका प्रमाण, (अणुकमसो) क्रमसे (बारस जोयण) बारह योजन, (तिन्नेव गाउआ) तीन गव्यूत–तीन कोस–और (जोयणं) एक योजन है ॥ २८ ॥

भावार्थ—द्वीन्द्रिय जातिके जीवोंका शरीर–प्रमाण, अधिकसे अधिक, बारह योजन हो सकता है, इससे अधिक नहीं। इसका मतलब किसी द्वीन्द्रिय जातिसे है, संखहोता है कुल द्वीन्द्रियोंसे नहीं; ऐसा ही त्रीन्द्रिय जीवोंका शरीर–प्रमाण कानखजुरा तीन कोस और चतुरिन्द्रिय जीवोंका शरीर–प्रमाण भमरोका एक योजन है.

प्र०—योजन किसे कहते हैं? उ०—चार कोसका एक योजन होता है.

प्र०—गव्यूत किसे कहते हैं? उ०—एक कोसको.

धणुसयपंचपमाणा, नेरइया सत्तमाइपुढवीए। तत्तो अद्धद्धूणा, नेया रयणप्पहा जाव ॥ २९ ॥

(सत्तमाइ) सातवीं (पुढवीए) पृथ्वीके (नेरइया) नारक–जीव, (धणुसयपंचपमाणा) पाँचसौ धनुष प्रमाणके हैं, (रयणप्पहा जाव) रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वीतक, (तत्तो) उससे (अद्धद्धूणा) आधा २ कम प्रमाण (नेया) जाणना ॥ २९ ॥

भावार्थ—सातवें नरकके जीवोंका शरीर–प्रमाण पाँचसौ धनुष, छट्ठे नरकके जीवोंका शरीर–प्रमाण ढाइसौ धनुष, पाँचवें नरकके जीवोंका एकसौ पचीस धनुष, चौथे नरकके जीवोंका साढ़े बासठ धनुष, तीसरे नरकके जीवोंका सवा इकतीस धनुष, दूसरे नरकके जीवोंका साढ़े पन्दरह धनुष और बारह अङ्गुल, तथा प्रथम नरकके जीवोंका शरीर–प्रमाण पौने आठ धनुष और छह अङ्गुल है. नारकोंके उत्तरवैक्रिय शरीरका प्रमाण, उक्त प्रमाणसे दुगुना समझना चाहिये.

प्र०—धनुषका प्रमाण क्या है? उ०—चार हाथका एक धनुष समझना चाहिये.

जोयणसहस्समाणा, मच्छा उरगा य गब्भया हुंति। धणुअपुहुत्तं पक्खिसु, भुयचारी गाउअपुहुत्तं ॥२०॥
खयरा धणुअपुहुत्तं, भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं। गाउअपुहुत्तमित्ता, समुच्छिमा चउप्पया भणिया ३१

(गब्भया) समूर्च्छिम या गर्भज (मच्छा) मत्स्य–मछलियाँ, (य) और गर्भज (उरगा) साँप यह अधिकसे अधिक (जोयणसहस्समाणा) हजारयोजन प्रमाणवाले (हुंति) होते हैं. (पक्खिसु) पक्षियोंमें शरीर प्रमाण (धणुअ-पुहुत्तं) धनुष–पृथक्त्व है तथा (भुयचारी) भुजचारी–भुजाओंसे चलनेवाले (गाउअपुहुत्तं) गव्यूत–पृथक्त्व–प्रमाण शरीरके होते हैं ॥ २० ॥

(समुच्छिमा) सम्मूर्च्छिम (खयरा) खेचर जीव (भुयगा) और भुजाओंसे चलनेवाले जीव (धणुअपुहुत्तं) धनुष–पृथक्त्व–प्रमाणवाले होते हैं (य) और (उरगा) साँप आदि (जोयण पुहुत्तं) योजन–पृथक्त्व शरीर–प्रमाणके होते हैं. (चउप्पया) चतुष्पद जीव (गाउअपुहुत्तमित्ता) गव्यूत–पृथक्त्वमात्र (भणिया) कहे गये हैं ॥ २१ ॥

भावार्थ—समुर्च्छिमओर गर्भज मत्स्य और गर्भज सर्पोंका शरीर-मान एक हजार योजनका है; इस प्रकारके मत्स्य स्वयम्भूरमण समुद्रमें होते हैं तथा सर्प मनुष्य-क्षेत्रसे बाहर होते हैं. गर्भज पक्षिओंका शरीर-मान धनुष-पृथक्त्व है अर्थात् दो धनुष्से लेकर नव धनुष तक है. गर्भज न्योला, गोह आदि भुजपरिसर्प जीवोंका शरीर-मान, गव्यूत-पृथक्त्व है अर्थात् दो कोससे लेकर नव कोस तक है.

सम्मूर्च्छिम खेचर तथा भुजपरिसर्प जीवोंका शरीरमान, धनुष-पृथक्त्व है. सम्मूर्च्छिम उरःपरिसर्प जीवोंका शरीर-मान, योजन-पृथक्त्व है. सम्मूर्च्छिम चतुष्पद-चार पैरवाले-जीवोंका शरीर-मान गव्यूत-पृथक्त्व है.

प्र०—पृथक्त्व किसको कहते हैं? उ०—दोसे लेकर नव तककी संख्याको पृथक्त्व कहते हैं.

छच्चेव गाउआइं, चउप्पया गब्भया मुणेयव्वा । कोसतिगं च मणुस्सा, उक्कोससरीरमाणेणं ॥ ३२ ॥

(चउप्पया गब्भया) चतुष्पद गर्भजोंका शरीर-मान (छच्चेव गाउआइं) छह कोसका (मुणेयव्वा) जानना (च) और (मणुस्सा) मनुष्य (उक्कोससरीरमाणेणं) उत्कृष्ट शरीरमानसे (कोसतिगं) तीन कोसके होते हैं ॥ ३२ ॥

भावार्थ—देवकुरु आदि क्षेत्रोंमें चतुष्पद गर्भज हाथीका शरीर-मान छह कोसका है तथा देवकुरु आदिके युगलीया मनुष्योंके शरीरकी ऊँचाई, अधिकसे अधिक तीन कोसकी होती है.

ईसाणंत सुराणं, रयणीओ सत्त हुंति उच्चत्तं । दुग-दुग-दुग-चउ-गेविज्ज, णुत्तरे इक्किक्क परिहाणी ॥ ३३ ॥

(ईसाणंत) ईशानान्त—ईशान देवलोक–तकके (सुराणं) देवताओंकी (उच्चत्तं) ऊँचाई (सत्त) सात (रयणीओ) रत्नि–हाथ (हुंति) होती है; (दुग–दुग–दुग–चउ गेविज्जणुत्तरे) दो, दो, दो, चार, नवग्रैवेयक और पाँच अनुत्तरविमानोंके देवोंका शरीर–मान (इकिक्क परिहाणी) एक एक हाथ कम है ॥ २३ ॥

भावार्थ—दूसरा देवलोक, ईशान है, वहाँके देवोंका तथा भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म देवोंका शरीर सात हाथ ऊँचा है; सनत्कुमार और माहेन्द्रके देवोंका शरीर छह हाथ ऊँचा है; ब्रह्म और लान्तकके देवोंका पाँच हाथ; शुक्र और सहस्रारके देवोंका चार हाथ; आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन चार देवलोकोंके देवोंका तीन हाथ; नवग्रैवेयकके देवोंका दो हाथ और पाँच अनुत्तर विमानवासी देवोंका एक हाथ ऊँचा है.

यहाँ जीवोंका शरीर–मान उत्सेधाङ्गुलसे समझना चाहिये.

प्र०—उत्सेधाङ्गुल किसको कहते हैं?   उ०—आठ यवोंका एक उत्सेधाङ्गुल होता है.

बावीसा पुढवीए, सत्तय आउस्स तिन्नि वाउस्स। वास सहस्सा दस तरु, गणाण तेऊ तिरत्ताऊ ॥ २४ ॥

(पुढवीए) पृथ्वीकाय जीवोंका आयु (बावीसा) बाईस हजार वर्षका है (आउस्स) अप्काय जीवोंका आयु (सत्तय) सात हजार वर्षका (वाउस्स) वायुकाय जीवोंका आयु (तिन्नि) तीन हजार वर्षका (तरुगणाण) प्रत्येक वनस्पतिकायके जीव–समुदायकी आयु (वास सहस्सा दस) वर्षसहस्र–दश अर्थात् दस हजार वर्षका (तेऊ) तेजःकाय जीवोंका (तिरत्ताऊ) तीन अहोरात्रका आयु है ॥ २४ ॥

भावार्थ—पृथ्वीकाय जीवोंका अधिकसे अधिक आयु—उत्कृष्ट आयु—बाईस हजार वर्ष; अप्काय जीवोंका आयु सात हजार वर्ष; वायुकाय जीवोंका तीन हजार वर्ष; प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवोंका दस हजार वर्ष और तेजःकाय जीवोंका तीन अहोरात्र आयु है. यह तो हुई उत्कृष्ट आयु, लेकिन जघन्य आयु सबका अन्तर्मुहूर्तका है.

वासाणि बारसाऊ, बिइंदियाणं तिइंदियाणं तु । अउणापन्न दिणाइ, चउरिंदीणं तु छम्मासा ॥ ३५ ॥

(बिइंदियाणं) द्वीन्द्रिय जीवोंका (आउ) आयु (बारस) बारह (वासाणि) वर्षका है, (तिइंदियाणं तु) त्रीन्द्रिय जीवोंका तो (अउणा पन्न दिणाइ) उनचास दिनका आयु होता है (चउरिंदीणं तु) और चउरिन्द्रिय जीवोंका आयु (छम्मासा) छह महीनेका है ॥ ३५ ॥

भावार्थ—द्वीन्द्रिय जीवोंका उत्कृष्ट आयु बारह वर्षका, त्रीन्द्रियोंका उनचास दिनका और चतुरिन्द्रियका छह महीनेका है. यह सबका उत्कृष्ट आयु है, जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्तका समझना चाहिये.

सुर-नेरइयाण ठिई, उक्कोसा सागराणि तित्तीसं । चउपय-तिरिय-मणुस्सा, तिन्निय पलिओवमा हुंति ॥

(सुर–नेरइयाण) देव और नारक जीवोंका (उक्कोसा) उत्कृष्ट–अधिकसे अधिक (ठिई) स्थिति–आयु (सागराणि तित्तीसं) तेतीस सागरोपम है, (चउपय–तिरिय) चार पैरवाले तिर्यञ्च और (मणुस्सा) मनुष्योंका आयु (तिन्निय) तीन (पलिओवमा) पल्योपम (हुंति) है ॥ ३६ ॥

भावार्थ—देव और नरकवासी जीव, अधिकसे अधिक, तेतीस सागरोपम तक जीते हैं और चतुष्पद तिर्यञ्च तथा मनुष्य तीन पल्योपम तक; ये तिर्यञ्च तथा मनुष्य देवकुरु आदि क्षेत्रोंके समझना चाहिये. देव तथा नारक जीवोंका जघन्य आयु—कमसे कम आयु—दस हजार वर्षका है; मनुष्य तथा तिर्यञ्च जीवोंका जघन्य आयु, अन्तर्मुहूर्तका है.

जलयर-उरभुयगाणं, परमाऊ होइ पुव्वकोडीऊ । पक्खीणं पुण भणिओ, असंखभागो अ पलियस्स ३७

(जलयर-उरभुयगाणं) जलचर, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प जीवोंकी (परमाऊ) उत्कृष्ट आयु (पुव्वकोडीऊ) एक करोड़ पूर्व है, (पक्खीणं पुण) पक्षियोंकी आयु तो (पलियस्स) पल्योपमका (असंखभागो) असंख्यातवाँ भाग जितनी (भणिओ) कहा है ॥ ३७ ॥

भावार्थ—गर्भज और सम्मूर्च्छिम ऐसे दो प्रकारके जलचर जीवोंका तथा गर्भज, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प जीवोंकी उत्कृष्ट आयु एक करोड़ पूर्व है; गर्भज पक्षियोंका आयु पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग जितना है.

सव्वे सुहुमा साहा-रणा य, संमुच्छिमा मणुस्सा य । उक्कोस जहन्नेणं, अंतमुहुत्तं चिय जियंति ॥ ३८ ॥

(सव्वे) सम्पूर्ण (सुहुमा) पृथ्वीकाय आदि सूक्ष्म (य) और (साहारणा) साधारण वनस्पतिकाय (य) और (संमुच्छिमा मणुस्सा) संमूर्च्छिम मनुष्य (उक्कोस जहन्नेणं) उत्कृष्ट और जघन्यसे (अंतमुहुत्तं चिय) अन्तर्मुहूर्त ही (जियंति) जीते हैं ॥ ३८ ॥

भावार्थ—सूक्ष्म पृथ्वीकाय आदि जीव, सूक्ष्म और बादर साधारण वनस्पतिकायके जीव और सम्मूर्छिम मनुष्य, उत्कर्षसे और जघन्यसे सिर्फ अन्तर्मुहूर्त तक जीते हैं.

प्रश्न—पल्योपम किसको कहते हैं? उ०—असंख्य वर्षोंका एक पल्योपम होता है.

प्र०—सागरोपम किसे कहते हैं? उ०—दस क्रोड़ा क्रोड़ी पल्योपमका एक सागरोपम होता है.

प्र०—पूर्व किसको कहते है? उ०—सत्तर लाखक्रोड, छप्पन हजार करोड़ वर्षोंका एक पूर्व होता है.

ओगाहणाउमाणं, एवं संखेवओ समक्खायं। जे पुण इत्थ विसेसा, विसेस सुत्ताउ ते नेया॥ ३९॥

(एवं) इस प्रकार (ओगाहणाउमाणं) अवगाहना-शरीर और आयुका मान (संखेवओ) सङ्क्षेपसे (समक्खायं) कहा गया (जे पुण इत्थ) यहाँ जो बातें (विसेसा) विशेष हैं, (विसेस सुत्ताउ) विशेष सूत्रोंसे (ते) उनको (नेया) जानना॥ ३९॥

भावार्थ—देह-मान तथा आयु-मानके विषयमें विशेष बातें जानना हों, तो "संग्रहणी," "प्रज्ञापना" आदि सूत्रोंसे जानना चाहिये.

एगिंदिया य सव्वे, असंख उस्सप्पिणी सकायंमि। उववज्जंति चयंतिअ, अणंतकाया अणंताओ॥४०॥

(सव्वे) सब (एगिंदिया) एकेन्द्रिय जीव (असंख उस्सप्पिणी) असंख्य उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी तक (सका-

यंमि) अपनी कायामें (उववज्जंति) उत्पन्न होते हैं (अ) और (चयंति) मरते हैं; (अणंतकाया) अनन्तकाय जीव (अणंताओ) अनन्त उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी तक ॥ ४० ॥

भावार्थ— पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और प्रत्येक वनस्पतिकायके जीव, उसी पृथ्वी आदिकी अपनी कायामें, असंख्य उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी तक पैदा होते तथा मरते हैं; अनन्तकायके जीव तो उसी अपनी कायामें अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी तक पैदा होते तथा मरते हैं.

प्र०—उत्सर्पिणी किसको कहते हैं ? उ०—दस कोड़ा कोड़ी सागरोपमकी एक उत्सर्पिणी तथा उतनेकी ही एक अवसर्पिणी होती है.

संखिज्जसमा विगला, सत्तट्ठ भवा पणिंदि-तिरि-मणुया। उववज्जंति सकाए, नारय देवा अ नो चेव ॥४१॥

(विगला) विकलेन्द्रिय जीव (संखिज्जसमा) संख्यात हजार वर्षों तक (सकाए) अपनी कायामें (उववज्जंति) पैदा होते हैं, (पणिंदि-तिरि-मणुया) पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य (सत्तट्ठ भवा) सात-आठ भव तक, लेकिन (नारय देवा) नारक और देव (नो चेव) नहीं ॥ ४१ ॥

भावार्थ—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीव, स्वकायामें संख्यात हजार वर्षोंतक पैदा होते तथा मरते हैं; पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्य लगातार सात तथा आठ भव करते हैं अर्थात् मनुष्य, लगातार सात-आठ वार, मनुष्य-शरीर धारण कर सकता है, इस प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च भी. लेकीन देवता तथा नारक जीव मरकर फिर तुरन्त

अपनी योनिमें नहीं पैदा होते अर्थात् देव मरकर फिर तुरन्त देवयोनिमें नहीं पैदा हो सकता। इस प्रकार नारक जीव मरकर तुरन्त नरकमें नहीं पैदा होता। हाँ एक दो जन्म दूसरी गतियोंमें बिताकर फिर देव या नरक-योनिमें पैदा हो सकते हैं. इसी तरह देव मरकर तुरन्त नरकयोनिमें नहीं जाता और नारक जीव मरकर तुरन्त देव-योनिमें नहीं पैदा हो सकता.

दसहा जियाण पाणा, इंदि-उसासाउ-जोगबलरूवा। एगिंदिएसु चउरो, विगलेसु छ सत्त अट्ठेव ॥ ४२ ॥

(जियाण) जीवोंको (दसहा) दस प्रकारके (पाणा) प्राण होते हैं;–(इंदि–उसासाउ–जोगबलरूवा) (५) इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, आयु और योगबलरूप, तीनबल (एगिंदिएसु) एकेन्द्रियोंको (चउरो) चार प्राण हैं, (विगलेसु) विकलेन्द्रियोंको (छ सत्त अट्ठेव) छह, सात और आठ ॥ ४२ ॥

भावार्थ—प्राणोंकी संख्या दस है;–पाँच इन्द्रियाँ, श्वासोच्छ्वास, आयु, मनोबल वचनबल और कायबल. इन दस प्राणोंमेंसे चार-त्वचा, श्वासोच्छ्वास, आयु और कायबल एकेन्द्रिय जीवोंको होते हैं; द्वीन्द्रिय जीवोंको छह प्राण-त्वचा, रसना (जीभ), श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और वचनबल; त्रीन्द्रिय जीवोंको सात प्राण-त्वचा, जीभ, नाक, श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और वचनबल; चतुरिन्द्रिय जीवोंको आठ प्राण–पूर्वोक्त सात, और आँख.

असन्नि-सन्नि-पंचिं,-दिएसु नव दस कमेण बोधव्वा। तेहिं सह विप्पओगो, जीवाणं भण्णए मरणं ॥ ४३ ॥

(असन्नि–सन्नि–पंचिंदिएसु) असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवोंको (कमेण) क्रमसे (नव दस) नव और दस प्राण (बोधव्वा) जाणना. (तेहिं सह) उनके साथ (विप्पओगो) विप्रयोग–वियोग, (जीवाणं) जीवोंका (मरणं) मरण (भण्णए) कहलाता है ॥ ४३ ॥

भावार्थ—असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंको त्वचा, जीभ, नाक, आँख, कान, श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और वचनबल ये नव प्राण होते हैं और संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंको पूर्वोक्त नव और मनोबल, ये दस प्राण होते हैं. जिनको जितने प्राण कहे गये हैं, उन प्राणोंके साथ वियोग होना ही उन जीवोंका मरण कहलाता है. देव, नारक, गर्भज तिर्यञ्च तथा गर्भज मनुष्य, ये संज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं. सम्मूर्च्छिम तिर्यञ्च और सम्मूर्च्छिम मनुष्य, असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं. सम्मूर्च्छिम मनुष्योंको मनोबल और वाक्बल नहीं है, इसलिये उनके आठ प्राण, और, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण न होनेके कारण साढा सात प्राण होते हैं.

एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि भीमंमि । पत्तो अणंतखुत्तो, जीवेहिं अपत्तधम्मेहिं ॥ ४४ ॥

(अपत्तधम्मेहिं) नहीं पाया है धर्म जिन्होंने ऐसे (जीवेहिं) जीवोंने (अणोरपारे) आर–पार–रहित–आदि–अन्त–रहित (भीमंमि) भयङ्कर (संसारे सायरंमि) संसाररूप समुद्रमें (एवं) इस प्रकार–प्राण–वियोग–रूप मरण (अणंतखुत्तो) अनन्त वार (पत्तो) प्राप्त किया ॥ ४४ ॥

भावार्थ—संसारका आदि नहीं है, न अन्त है; अनन्तवार जीव मर चुके हैं और आगे मरेंगे सुदैवसे यदि उन्हें धर्मकी प्राप्ति हुई तो जन्म-मरणसे छुटकारा होगा.

तह चउरासी लक्खा, संखा जोणीण होइ जीवाणं । पुढवाईण चउण्हं, पत्तेयं सत्त सत्तेव ॥ ४५ ॥

(जीवाणं) जीवोंकी (जोणीण) योनियोंकी (संखा) सङ्ख्या (चउरासी लक्खा) चौरासी लाख (होइ) है. (पुढवाईण चउण्हं) पृथ्वीकाय आदि चारकी प्रत्येककी योनि-सङ्ख्या (सत्त सत्तेव) सात सात लाख है ॥ ४५ ॥

भावार्थ—जीवोंकी चौरासी लाख योनियाँ हैं, यह बात प्रसिद्ध है। उसको इस प्रकार समझना चाहियेः—पृथ्वीकायकी सात लाख, अप्कायकी सात लाख, तेजःकायकी सात लाख और वायुकायकी सात लाख योनियाँ हैं; सबको मिला कर अट्ठाईस लाख हुई.

प्र०—योनि किसको कहते हैं ? उ०—पैदा होनेवाले जीवोंके जिस उत्पत्ति-स्थानमें वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श, ये चारों समान हों, उस उत्पत्ति-स्थानको उन सब जीवोंकी एक योनि कहते हैं.

दस पत्तेयतरूणं, चउदस लक्खा हवंति इयरेसु। विगलिंदियेसु दो दो, चउरो पंचिंदितिरियाणं ॥४६॥

(पत्तेयतरूणं) प्रत्येक वनस्पतिकायकी (दस) दस लाख योनियाँ हैं, (इयरेसु) प्रत्येक वनस्पतिकायसे इतर-साधारण वनस्पतिकायकी (चउदस लक्खा) चौदह लाख (हवंति) हैं, (विगलिंदिएसु) विकलेन्द्रियोंकी (दो दो) दो दो लाख हैं, (पंचिंदितिरियाणं) पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंकी (चउरो) चार लाख हैं ॥ ४६ ॥

भावार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकायकी दस लाख; साधारण वनस्पतिकायकी चौदह लाख; द्वीन्द्रियकी दो लाख; त्रीन्द्रियकी दो लाख; चतुरिन्द्रियकी दो लाख और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंकी चार लाख योनियाँ हैं.

चउरो चउरो नारय,-सुरेसु मणुआण चउदस हवंति। संपिंडिया य सव्वे, चुलसी लक्खाउ जोणीणं॥४७॥

(नारय सुरेसु) नारक और देवोंकी (चउरो चउरो) चार चार लाख योनियाँ हैं; (मणुआण) मनुष्योंकी (चउदस) चौदह लाख (हवंति) हैं; (सव्वे) सब (संपिंडिया) इकठ्ठी की जायँ–मिलाई जायँ तो (जोणीणं) योनियोंकी सङ्ख्या (चुलसी लक्खाउ) चौरासी लाख होती है ॥ ४७ ॥

भावार्थ—नारक जीवोंकी चार लाख, देवोंकी चार लाख और मनुष्योंकी चौदह लाख योनियाँ हैं. योनियोंकी सब संख्या मिलानेपर चौरासी लाख होती है.

सिद्धाण नत्थि देहो;न आउ कम्मं न पाण जोणीओ।साइ-अणंता तेसिं,ठिई जिणिंदागमे भणिया॥४८॥

(सिद्धाण) सिद्ध जीवोंको (देहो) शरीर (नत्थि) नहीं है, (न आउ कम्मं) आयु और कर्म नहीं है, (न पाण जोणीओ) प्राण और योनि नहीं है, (तेसिं) उनकी (ठिई) स्थिति (साइ अणंता) सादि और अनन्त है; यह बात (जिणिंदागमे) जैन सिद्धान्तमें (भणिया) कही गई है ॥ ४८ ॥

भावार्थ—सिद्ध जीवोंको शरीर नहीं है इसलिये आयु और कर्म भी नहीं है, आयुके न होनेसे प्राण और योनि

भी नहीं है, प्राणके न होनेसे मृत्यु भी नहीं है; उनकी स्थिति सादि–अनन्त है अर्थात् जब वे लोकके अग्रभागपर अपने स्वरूपमें स्थित हुए, वह समय उनकी स्वरूप–स्थितिका आदि है तथा फिर वहाँसे च्युत होना नहीं है इसलिये स्वरूप–स्थिति अनन्त है; यह बात जैन सिद्धान्तमें कही गई है. ॥ ४८ ॥

काले अणाइनिहणे, जोणीगहणंमि भीसणे इत्थ। भमिया भमिहिंति चिरं, जीवा जिणवयणमलहंता ४९

(अणाइ निहणे) आदि और अन्त–रहित अर्थात् अनादि–अनन्त (काले) कालमें (जिणवयणं) जिनेन्द्र भगवान्के उपदेशरूप वचनको (अलहंता) न पाये हुए (जीवा) जीव; (जोणी गहणंमि) योनियोंसे क्लेशरूप (भीसणे) भयङ्कर (इत्थ) इस संसारमें (चिरं) बहुत काल तक (भमिया) भ्रमण कर चुके और (भमिहिंति) भ्रमण करेंगे.

भावार्थ—चौरासी लाख योनियोंके कारण दुःखदायक तथा भयङ्कर इस संसारमें, जिनेन्द्र भगवान्के बतलाये हुए मार्गको न पाये हुए जीव, अनादि कालसे जन्ममरणके चक्करमें फँसे हुए हैं तथा अनन्त कालतक फँसे रहेंगे.

ता संपइ संपत्ते, मणुअत्ते दुलहे वि सम्मत्ते। सिरिसंतिसूरिसिट्ठे, करेह भो उज्जमं धम्मे ॥ ५० ॥

(ता) इसलिये (संपइ) इस समय (दुलहे) दुर्लभ (मणुअत्ते) मनुजत्व–मनुष्यजन्म और (सम्मत्ते) सम्यक्त्व (संपत्ते) प्राप्त हुआ है तो (सिट्ठे) शिष्ट–सज्जन पुरुषोंसे सेवित ऐसे (धम्मे) धर्ममें (भो) अहोभव्यप्राणियो ! (उज्जमं) उद्यम–पुरुषार्थ (करेह) करो, ऐसा (सिरिसंतिसूरि) श्रीशान्तिसूरि उपदेश देते हैं ॥ ५० ॥

भावार्थ—जब कि संसार भयङ्कर है और चौरासीलाख योनियोंके कारण उससे पार पाना मुश्किल है और

उचित सामग्री–मनुष्य–जन्म और सम्यक्त्व–सच्ची श्रद्धाभी प्राप्त हुई है इसलिये हे भव्य जीवो! प्रमाद न करके, महापुरुषोंने जिस धर्मका सेवन किया है उसका तुम भी सेवन करो; क्योंकि बिना धर्मकी सेवा किये तुम जन्म–मरण–के जञ्जालसे नहीं छूट सकोगे.

एसो जीववियारो, संखेवरुईण जाणणाहेउं। संखित्तो उद्धरिओ, रुद्दाओ सुयसमुद्दाओ ॥ ५१ ॥

(संखेवरुईण) सङ्क्षेपरुचियोंके–अल्पमतियोंके (जाणणा हेउं) जाननेकेलिये (रुद्दाओ) रुद्र–अतिविस्तृत (सुयसमुद्दाओ) श्रुतसमुद्रसे (एसो) यह (जीववियारो) जीवविचार (संखित्तो) सङ्क्षेपसे (उद्धरिओ) निकाला गया ॥५१॥

भावार्थ—सिद्धान्तोंमें जीवोंके भेदआदि विस्तारसे कहे गये हैं इसलिये अल्प बुद्धिवाले लाभ नहीं उठा सकते; उनके जाननेकेलिये सङ्क्षेपमें यह "जीवविचार" सिद्धान्तके अनुसार बनाया गया है, इसके बनानेमें अपनी कल्पनाको स्थान नहीं दिया गया.

जीवविचारसार्थ समाप्तः ।

॥ अथ नवतत्त्वप्रकरणप्रारंभः ॥

ध्यात्वा नवपदीं भक्त्या, नवतत्त्वानां विवरणं, बालानां सुखबोधाय, क्रियते लोकभाषया ॥ १ ॥

जीवाऽजीवापुण्णं पावाऽसवसंवरोय निज्जरणा । बंधोमुक्खोय तहा नवतत्ता हुंति नायवा ॥ १ ॥

(जीवा) जीवतत्त्व १ द्रव्य और भावप्राणको धारण करनेवाला (अजीवा) ज्ञान—चेतनासें रहित सो अजीव तत्त्व २ (पुण्णं) शुभ फलका जो भोगना वह पुण्य तत्त्व ३ (पावा) अशुभ फलको जो भोगना वह पापतत्त्व ४ (आसव) जो शुभाशुभ कर्मका आना वह आश्रवतत्त्व ५ कहलाता है (संवरो) जो शुभाशुभ कर्मको रोकना वह संवरतत्त्व ६ कहलाता है। (य) और (निज्जरणा) जो आत्मध्यानसें शुभाशुभ दोनुं कर्मको बालके भस्मीभूत करके सर्वथा नही लेकीन देससें उडादेना वह निर्जरातत्त्व ७ (बंधो) जो शुभाशुभ कर्मका खीरनीरकी तरह आत्मप्रदेशकी साथ बंधहोना वह बंधतत्त्व ८ (मुक्खो) सर्वथा कर्मोसें जो मुक्तहोना सो मोक्षतत्त्व ९ (य) फिर (तहा) तेसे (नव) नव (तत्ता) तत्त्व याने रहस्य (हुंति) है (नायवा) जानना ॥ १ ॥

चउदसचउदसबायालीसा बासीयहुंतिबायाला । सत्तावन्नंबारस चउनवभेयाकमेणेसिं ॥ २ ॥

(चउदस) जीवतत्त्व १ का चौदह भेद (चउदस) अजीवतत्त्व २ का भी चौदह भेद (बायालीसा) पुण्यतत्त्व ३

के बयालीस भेद (बासीय) पापतत्त्व ४ के ब्यासी भेद (हुंति) है (बायाला) आश्रवतत्त्व ५ के बयालीस भेद है (सत्तावन्नं) संवरतत्त्व ६ के सत्तावन भेद (बारस) निर्जरातत्त्व ७ के बारह भेद (चउ) बंधतत्त्व ८ के चार भेद (नव) और मोक्षतत्त्व ९ का नव (भेया) भेद है (कमेणेहिं) अनुक्रमसें नवे तत्त्वका सब मिलकर २७६ भेद है ॥२॥

एगविहदुविहतिविहा, चउव्विहापंचछविहाजीवा । चेयणतसइयरेहिं, वेयगई करणकाएहिं ॥ ३ ॥

(एगविह) चेतना लक्षणसें सब जीवो एक प्रकारे है (दुविह) त्रस और स्थावरपणेसे जीवोंके दो भेद है (तिविहा) स्त्रीवेद पुरुषवेद और नपुंसकवेदसें जीवोंके तिन भेद है (चउविहा) देव मनुष्य तिर्यंच और नारक इसप्रकारसें जीव चार तरहका (पंच) एकेन्द्रि आदिसें जीव पाँच तरहका (छविहा) पृथ्वी आदि लेकर छे तरहका (जीवा) जीव है (चेयण) ज्ञानादि चेतना सहित (तस) त्रस हलते चलते सो (इयरेहिं) इतर स्थिर रहे सो स्थावर (वेय) तीन वेद (गई) चार गति (करण) इंद्री पाँच (काएहिं) काया छ ॥ ३ ॥

एगिंदियसुहुमियरा सन्नियरपणिंदियायसबितिचउ । अपजत्तापज्जत्ता कमेणचउदसजियठाणा ॥ ४ ॥

(एगिंदिय) एकेन्द्रि जीवोंके दो भेद है (सुहुमियरा) एक सूक्ष्म और दुसरा बादर (सन्नि) मन सहित (इयर) दुसरा असंनि मन रहित ऐसे (पणिंदियाय) पंचेन्द्रिके दो भेद है (स) उस पूर्वका चारकी साथ (बि) बेइंद्रीका एक भेद (ति) तेइंद्रीका एक भेद (चउ) चौरिंद्रीका एक भेद यह तीन मिलानेसें सात हुवा (अपजत्तापज्जत्ता) वह

सात अपर्यासा और दुसरा सात पर्यासा (कमेणचउदस) अनुक्रमसें ऐसे सब मिलकर चौदह (जिय) जीवोंका (ठाणा) स्थान याने भेद है ॥ ४ ॥

नाणंचदंसणंचेव चरित्तंचतवोतहा । वीरियंउवओगोय एयंजीवस्सलक्खणं ॥ ५ ॥

(नाणं) ज्ञान आठ प्रकारे पाँच ज्ञान सम्यक्त्व आसरे और तीन अज्ञान मिथ्यात्व आसरे (च) और (दंसणं) दर्शनका चार भेद (चेव) निश्चे (चरित्तं) चारीत्रका सात भेद सामायक आदि निश्चय व्यवहार (च) फिर (तवो) तपके बारह भेद (तहा) तेसेही (वीरियं) वीर्य दो प्रकारके (उवओगो) उपयोगके बारह भेद (य) और (एयं) ये (जीवस्स) जीवका (लक्खणं) लक्षण है ॥ ५ ॥

आहारसरीरइंदिय पज्जत्तीआणपाणभासमणे । चउपंचपंचछप्पिय इगविगलासन्निसन्नीणं ॥ ६ ॥

(आहार) आहारपर्याप्ति १ (सरीर) शरीरपर्याप्ति २ (इंदिय) इंद्रियपर्याप्ति ३ (पज्जत्ती) ऐसे तीन पर्याप्ति (आणपाण) स्वासोस्वास ४ (भास) भाषा ५ (मणे) मनपर्याप्ति ६ (चउ) आहारादि चार (पंच) मन छोडकर पाँच (छप्पिय) मन सहित संपूर्ण छे पर्याप्ति (एग) एक इंद्रीको चार (विगला) बिगलेंद्रीको मन छोडकर पाँच (असन्नि) असंनी पंचेन्द्रिको मन छोडके पांच (सन्नीणं) संनी पंचेन्द्रिको छे है ॥ ६ ॥ अब जो इस अपनी अपनी पर्याप्ति पूरी करके मरे सो जीव पर्यासा और विना पुरी कीए मरे सो जीव अपर्यासा कहलाता है ॥

पणिंदियतिबलूसा–साऊदसपाणचउछसगअट्ठ । इगदुतिचउरिंदीणं असन्निसन्नीणनवदसय ॥ ७ ॥

(पणिंदिय) पाँच इंद्रियों (तिबल) मनादि तीन बल (ऊसास) स्वासोस्वास (आऊ) आयु (दस) ऐसे दस (पाण) प्राण है (चउ) स्पर्शनेंद्रिय कायबल स्वासोस्वास और आयु ऐसे चार (छ) पूर्वका चारकी साथ रसना और वचन ऐसे छे (सग) पूर्वका छेकी साथ नासीका ऐसे सात, (अट्ठ) आठ प्राण, पूर्वका सातकी साथ चक्षु (इग) एकेंद्रिको पूर्वका चार (दु) बेइंद्रीको पूर्वका छे (ति) तेइंद्रिको पूर्वका सात (चउरिंदीणं) चौरिंद्रीको पूर्वका आठ (असन्नि) असंनी पँचेंद्रिको (सन्नीणं) और संनी पँचेन्द्रिको (नवदसय) अनुक्रमसें नव और दश प्राण जान लेना जैसेकी पूर्वका आठकी साथ श्रोत मिलानेसें नव और नवकी साथ मन मिलानेसें दश । चार भावप्राण तो सबकाही समान है ॥ ७ ॥ इति जीवतत्त्वम् ॥

धम्माऽधम्माऽगासा तियतियभेयातहेवअद्धाय । खंधादेसपएसा परमाणुअजीवचउदसहा ॥ ८ ॥

(धम्मा) धर्मास्तिकाय (अधम्मा) अधर्मास्तिकाय (आगासा) और आकाशास्तिकाय (तियतिय) प्रत्येक प्रत्येकका खंधादि तीन तीन (भेया) भेद है ऐसे नव (तहेव) तेसेही (अद्धाय) कालका एक भेद इस प्रकारसे पूर्वका नव और कालका १ सब मिलकर दश हुआ सो अरूपी है (खंधा) और खंध (देस) देश (पएसा) प्रदेश (परमाणु) परमाणु यह चार पुद्गलका रूपी कहा (अजीव) रूपी अरूपी दोनु मिलकर अजीवका (चउदसहा) चौदह भेद है ॥ ८ ॥

धम्माऽधम्मापुग्गल नहकालोपंचहुंतिअजीवा । चलणसहावोधम्मो थिरसंठाणोअहम्मोय ॥ ९ ॥

(धम्माऽधम्मा) धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय (पुग्गल) पुद्गलास्तिकाय (नह) आकाशस्तिकाय (कालो) और काल (पंच) यह पांच (हुंति) है (अजीवा) अजीव द्रव्य (चलणसहावो) चलन स्वभावगुणवाला (धम्मो) धर्मास्तिकाय है (थिरसंठाणो) और स्थिरस्वभावगुणवाला (अहम्मोय) एक अधर्मास्तिकाय है ॥ ९ ॥

अवगाहोआगासं पुग्गलजीवाणपुग्गलाचउहा । खंधादेसपएसा परमाणुचेवनायवा ॥ १० ॥

(अवगाहो) अवकाश स्वभावगुणवाला (आगासं) आकाशस्तिकाय है, वह (पुग्गल) पुद्गलको (जीवाण) और जीवको अवकाश देता है (पुग्गला) पुद्गलके (चउहा) चार भेद है (खंधा) खंध (देस) देश (पएसा) प्रदेश (परमाणु) और परमणु ऐसे (चेव) निश्चे (नायवा) जानना ॥ १० ॥

सद्दंधयारउज्जोय पभाछायातवेहिआ । वण्णगंधरसाफासा पुग्गलाणंतुलख्खणं ॥ ११ ॥

(सद्दं) जीव शद्बादि तीन (अंधयार) अंधकार (उज्जोय) प्रकाश (पभा) ज्योति (छाया) छाया (तवेहिआ) सूर्यका तांबडा (वण्ण) पाँचोही वर्ण (गंध) दोनु गन्ध (रसा) पाँचरस (फासा) आठ स्पर्श (पुग्गलाणंतु) पुद्गलका ऐसे (लख्खणं) लक्षण है ॥ ११ ॥

एगाकोडिसतसट्ठि लख्खासत्तहुत्तरीसहस्साय । दोयसयासोलहिया आवलियाइगमुहुत्तम्मि ॥ १२ ॥

(एगाकोडि) एक क्रोड (सतसठ्ठिलक्खा) सडसठ लाख (सत्तहुत्तरीसहस्साय) सित्योतर हजार (दोयसयासोल-हिया) दोसो सोलह अधिक (आवलिया) १६७७७२१६ अवलिका (इग) एक (मुहुत्तम्मि) मुहूर्तके विषे होती है ॥१२॥

समयावलीमुहुत्तं दीहापक्खायमासवरिसाय। भणिओपलिआसागर उस्सप्पिणीसप्पिणीकालो ॥१३॥

(समय) समय, अतिसुक्ष्म कालको समय कहते है ऐसे असंख्य समयकी (आवली) एक आवलिका होती है (मुहुत्तं) दो घडीका मुहूर्त्त मुहूरतकालका प्रमाण आवलीकी संख्यासें पूर्वकी बारवी गाथासें जाणलेना (दीहा) ऐसे तीस मुहूर्तका एक अहोरात्री दिन (पक्खा) ऐसे पंद्रह दिनका एक पक्ष (य) और (मास) ऐसे दो पक्षका एक मास (वरिसा) ऐसे बारह मासका एक वर्ष (य) और (भणिओ) कहा है (पलिआ) ऐसे असंख्य वर्षका कूपदृष्टांतकरके एक पल्योपम, ऐसे दश कोडाकोडी पल्योपमका (सागर) एक सागरोपम, ऐसे दश कोडाकोडी सागरोपममिलनेसें एक (उस्सप्पिणी) उत्सर्पिणी और ऐसे दश कोडाकोडी सागरोपमकी एक (सप्पिणी) अवसर्पिणी होती है (कालो) ऐसे उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी मिलकर २० क्रोडाक्रोड सागरका एक कालचक्र और ऐसे अनंते कालचक्र जानेपर एक पुद्गल परावरतन होता है। ऐसा अनंता पुद्गल परावर्तन होचुके और आगे होवेंगे इति कालद्रव्यका मान कहा ॥१३॥

परिणामिजीवमुत्तं सपएसाएगखित्तकिरिआय। णिच्चंकारणकत्ता सव्वगयइयरअप्पवेसे ॥ १४ ॥

(परिणामि) छ द्रव्यमें परीणामी कितना और अपरीणामी कितना निश्चयनयसें तो छेही द्रव्य परिणामी है और

व्यवहारनयसें तो एक जीव दुसरा पुद्गल यह दो परिणामी बाकीके चार अपरिणामी है १ (जीव) यह छ द्रव्यमें एक जीवद्रव्य चेतन है शेष पाँच द्रव्य अजीव अचैतन्य है २ (मुत्तं) यह छे द्रव्यमें एक पुद्गल जो है यह मूर्त्तिमंत है बाकीके पाँच द्रव्य अमूर्त्त अरूपी है (सपएसा) यह छे द्रव्यमें पाँच द्रव्यस प्रदेशी है और एक कालद्रव्य अप्रदेशी है (एग) यह छे द्रव्यमें धर्म अधर्म और आकाश ये तीन द्रव्य एक है शेष तीन अनेक है (खित्त) यह छ द्रव्यमें एक आकाश द्रव्य जो है वह क्षेत्र है शेष पाँच क्षेत्री है (किरिआय) इस छे द्रव्यमें जीव और पुद्गल यह दो द्रव्य सक्रिय है शेष चारद्रव्य अक्रिय है (णिचं) ये छे द्रव्यमें व्यवहारसें तो धर्म अधर्म आकाश और काल यह चार नित्य है बाकीके दो द्रव्य अनित्य है और निश्चयसें छेही द्रव्य नित्य है (कारण) जीवको छोडकर पाँच द्रव्य कारण है और जीवद्रव्य अकारण है (कत्ता) ये छे द्रव्यमें जीव तथा पुद्गल व्यवहारसें कर्त्ता बाकीके चार अकर्ता (सबगय) ये छ द्रव्यमें एक आकाशद्रव्य लोकालोक व्यापक है और बाकीके पाँच द्रव्य लोकव्यापी है (इयर) इतर (अप्पवेसे) कोई द्रव्य कोईसें मिले नहीं ॥ १४ ॥ इति अजीवतत्त्वम् ॥

साउच्चगोअमणुदुग सुरदुगपंचिंदिजाइपणदेहा । आइतितणुणवंगा आइमसंघयणसंठाणा ॥ १५ ॥

(सा) शाता वेदनी कर्म १ (उच्चगोअ) उंच गोत्र कर्म २ (मणुदुग) मनुष्यगति ३ और मनुष्यानुपूर्वी ४ (सुर-दुग) देवगति ५ और देवानुपूर्वी ६ (पंचिंदिजाइ) पंचेन्द्रि जातीनाम कर्म ७ (पणदेहा) औदारिकादि शरीर पाँच

१२ (आइतितणु) आदिके तीन शरीरका (णुवंगा) अंगोपांग १५ (आइमसंघयणसंठाणा) आदि वज्रऋषभनाराच संघयण १६ और प्रथम संस्थान समचोरस १७ ॥ १५ ॥

वण्णचउक्कागुरुलहु परघाऊसासआयवुज्जोयं । सुभखगइनिमिणतसदस सुरनरतिरियाउतित्थयरं ॥१६॥

(वण्णचउक्का) शुभवर्णादिचार २१ (अगुरुलहु) अगुरुलघु २२ (परघा) पराघातनाम कर्म २३ (ऊसास) स्वासोस्वास नामकर्म २४ (आयव) आताप नामकर्म २५ (उज्जोयं) उद्योतनामकर्म २६ (सुभखगइ) शुभविहायोगति जिस कर्मके उदयसें जीवकी हंससमान चाली हो २७ (निमिण) निर्माण नामकर्म २८ (तसदस) त्रस दशक ३८ इस दशकेका भेद आगेकी गाथासें कहेंगे (सुर) देवआयु नामकर्म ३९ (नर) मनुष्यआयु नामकर्म ४० (तिरियाउ) तिर्यंचआयु नामकर्म ४१ (तित्थयरं) और तीर्थंकरनामकर्म ४२ ॥ १६ ॥

तसबायरपज्जत्तं पत्तेयथिरंसुभंचसुभगंच । सुस्सरआइज्जजसं तसाइदसगंइमंहोइ ॥ १७ ॥

(तस) त्रसनामकर्म १ (बायर) बादरनामकर्म २ (पज्जत्तं) पर्याप्तनामकर्म एक लबधि पर्याप्ता दुजाकरणपर्याप्ता ऐसे दो भेद ३ (पत्तेय) प्रत्येकनामकर्म ४ (थिरं) स्थिरनामकर्म ५ (सुभं) शुभनामकर्म ६ (च) और (सुभगं) सौभाग्यनामकर्म ७ (च) और (सुस्सर) सुस्वरनामकर्म जिसका स्वर कोकिलाकी तरह मधुर हो ८ (आइज्जा) आदेयनामकर्म ९ (जसं) यशकीर्तिनामकर्म १० (तसाइ) त्रस आदिक (दसगं) दशक (इमंहोइ) इस प्रकारसें है ॥ १७ ॥ इतिपुण्यतत्त्वम् ॥

नाणंतरायदसगं नवबीयनीयसायमिच्छत्तं । थावरदसनरयतिगं कसायपणवीसतिरियदुगं ॥ १८ ॥

(नाण) पाँच ज्ञानावरणी मतिज्ञानावरणी १ श्रुतज्ञानावरणी २ अवधिज्ञानावरणी ३ मनःपर्यवज्ञानावरणी ४ और केवल ज्ञानावरणी ऐसे पाँच (अंतराय) अन्तराय दानान्तराय १ लाभान्तराय २ भोगान्तराय ३ उपभोगान्तराय ४ और वीर्यान्तराय यह पांच अन्तराय (दसगं) ऐसे दश भेद कहे (नवबीये) और नव दुसरा दर्शनावरणी कर्मके निद्रा १ निद्रानिद्रा २ प्रचला ३ प्रचलाप्रचला ४ थिणद्धी ५ चक्षुदर्शनावरणी ६ अचक्षुदर्शनावरणी ७ अवधिदर्शनावरणी ८ और केवलदर्शनावरणी ९ ऐसे नव और पूर्वकादशमिलकर ओगुणीस (नीय) निचगोत्र २० (असाय) असातावेदनीकर्म २१ (मिच्छत्तं) मिथ्यात्व मोहनीनामकर्म २२ (थावर) स्थावरको (दस) दशको इस दशकेका भेद आगे कहेंगे ३२ (नरयतिगं) नरकत्रिक नरकगती नरकानुपूर्वी और नरक आयु ऐसे तीन ३५ (कसायपणवीस) कषाय पचीस सो देखलाते है अनन्तानुबंधी आदि क्रोधके चार तथा अनन्तानुबंधि आदि मानके चार फिर अनन्तानुबंधि आदि मयाके चार और अनन्तानुबंधी आदि लोभके चार यह सोल कषाय अब नवनो कषाय कहते हैं हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ दुगंछा ६ स्त्रीवेद ७ पुरुषवेद ८ नपुंसकवेद ९ पूर्वके सोल कषाय और यह नव नोकषाय सब मील २५ तथा पूर्वके ३५ सब मिल साठ (तिरियदुगं) और तिर्यंचद्विक इस लिये तिर्यंचगति ६१ और तिर्यंचानुपूर्वी ६२ ॥ १८ ॥

इगबितिचउजाईओ कुखगइउवघायहुंतिपावस्स । अपसत्थंवण्णचउ अपढमसंघयणसंठाणा ॥ १९ ॥

(इग) एकेन्द्रिजाति (वि) बेइन्द्रिजाति (ति) तेरिन्द्रीजाति (चउ) और चोरिन्द्रिजाति (जाईओ) ऐसे चार जाति नामकर्म यह सब मिलके छासठ (कुखगइ) अशुभ विहायोगति नामकर्म इस नामकर्मसें जीव गधेकी नाइ चले सो ६७ (उवघाय) उपघात नामकर्म ६८ (हुंतिपावस्स) यह सब पापके भेद है (अपसत्थंवण्णचउ) अशुभवर्णादि चार ७२ (अपढमसंघयणसंठाणा) प्रथमका संघयनको छोडकर ऋषभनाराच १ नाराच २ अर्धनाराच ३ कीलीका ४ और सेवठा यह पांच संघयन और प्रथमका संस्थान छोडकर न्यग्रोध १ सादि २ कुब्ज ३ वामन ४ और हुंडक यह पांच संस्थान सब मिलकर पापतत्त्वका व्यासी भेद हुआ ॥ १९ ॥

थावरसुहुमअपज्जं साहारणमथिर मसुभदुभगाणि । दुस्सरणाइज्जजसं थावरदसगंविवज्जत्थं ॥ २० ॥

(थावर) स्थावर नामकर्म १ (सुहुम) सूक्ष्म नामकर्म २ (अपज्जं) अपर्याप्ति नामकर्म ३ (साहारणं) साधारण नामकर्म ४ (अथिर) अस्थिर नामकर्म ५ (असुभ) अशुभ नामकर्म ६ (दुभग्गणि) दुर्भाग्य नामकर्म ७ (दुस्सर) दुःस्वर नामकर्म ८ (अणाइज्ज) अनादेय नामकर्म ९ (अजसं) अपयश नामकर्म १० (थावरदसगंविवज्जत्थं) यह स्थावरको दशको त्रससे विप्परित जान लेना ॥ २० ॥इतिपापतत्त्वम् ॥

इंदिअकसायअव्वय जोगापंचचउपंचतिन्नीकमा । किरिआओपणवीसं इमाओताओअणुक्कमसो ॥२१॥

(इंदिअ) इन्द्रियो पांच (कसाय) क्रोधादि कषाय चार (अव्वय) प्राणातिपातादि अव्रत पाँच (जोगा) मनादि

योग तीन (पंथ) पाँच (चउ) चार (पंच) पाँच (तिशी) तीन (कमा) अनुक्रमसें जानलेना (किरिआओपण्णवीसं) क्रिया पंचीश (इमाओताओअणुक्कमसो) यह पचीस क्रियाको अनुक्रमसें कहते है ॥ २१ ॥

काइयअहिगरणीआ पाउसिआपारितावणीकिरिया । पाणाइवायारंभिअ परिग्गहियामायवत्तीय ॥२२॥

(काइय) कायाको अजतनासें वरतावनासो कायिकी क्रिया १ (अहिगरणीआ) जिस क्रियासें जीव नरकादिकका अधिकारि हो उसको अधिकरणिकी क्रिया कहते है जैसे कि शस्त्रआदिकसें जीवोंकी हत्या करना (पाउसिआ) जीव अजीवसें जो द्वेष करना वह प्रद्वेषिकी क्रिया ३ (पारितावणीकिरिआ) अपनें जीवको या दुसरा जीवोंको तकलीफ पहुंचाना वह पारितापनिकी क्रिया ४ (पाणाइवाय) जो किशी जीवकों प्राणोंसे रहित करना वह प्राणातिपातिकी क्रिया ५ (आरंभिअ) जो खेती आदि आरंभका काम करना सो आरंभिकी क्रिया ६ (परिग्गहिया) जो परिग्रह रखना या परिग्रहपर ममत्त्व रखना सो परिग्रहकी क्रिया ७ (मायवत्तीअ) जो माया-कपटसें किशीको ठगना सो मायाप्रत्ययिकी क्रिया ८ ॥ २२ ॥

मिच्छादंसणवत्ती अपच्चक्खाणायदिट्ठिपुट्ठिअ । पाडुच्चिअसामंतो-वणीअनेसत्थिसाहत्थि ॥ २३ ॥

(मिच्छादंसणवत्ती) जिनेंद्रके सिद्धांतसें जो विपरीत एकान्तक्रियारुची आत्मज्ञानसे हीन बहिरात्मा सम्यक्तहीन और दृष्टिरागी जिसको सत्यासत्यका निरणय नहीं सो मिथ्या दर्शनकी क्रिया ९ (अपच्चक्खाणाय) व्रतपचखान नही

करनेसें जो क्रिया लगती है वह अप्रत्याख्यानिकी क्रिया १० (दिट्ठि) जो अशुभ दृष्टीसें देखना सो दृष्टीकी क्रिया ११ (पुट्ठिअ) जो रागादिकसें कलुषितचित्तकरके स्त्री आदिकके अंगका स्पर्श करना सो स्पृष्टीकी क्रिया १२ (पाडुच्चिअ) जो अपने मनसे स्वपरका बुरा विचारना सो प्रातीत्यकीक्रिका १३ (सामंतोवणीअ) अपना अश्व प्रमुखकी प्रशंसासें हर्ष करना सो अथवा दुध दही घी आदिके भाजन खुला रखनेसें उसमें जो त्रसआदि जीवपडकर मरे उससें लगे सो सामंतोपनिपातीकी क्रिया १४ (नेसत्थि) नैशस्त्रकी क्रिया १५ (साहत्थि) स्वहस्तिकी क्रिया १६ ॥ २३ ॥

आणवणिविआरणिआ अणभोगाअणवकंखपच्चइआ। अन्नापओगसमुदा–णपिज्जदोसेरिआवहिआ २४

(आणवणि) जो जीव अजीवको लाने लेजानेसें क्रिया लगे उसको आनयनिकी क्रिया कहते है १७ (विआरणिआ) जो जीव अजीवको विदारनेसें विदारणि लगेसो विदारणकी क्रिया १८ (अणभोगा) विना उपयोगसें जो चीज रकम उठाना रखना तथा हलने चलनेसें जो क्रिया लगे उसे अनाभोगिकी क्रिया कहते है १९ (अणवकंखपच्चइआ) इस लोक तथा परलोकसें जो विरुद्ध आचरण करना उसे अनवकांक्षप्रत्ययिकी क्रिया कहते है २० (अन्नापओग) दुसरी प्रयोगिकी क्रिया २१ (समुदाण) समुदायकी क्रिया २२ (पिज्ज) माया और लोभ करनेसें जो क्रिया लगे उसे प्रेमकी क्रिया कहते है २३ (दोसे) क्रोध और मानसें जो क्रिया लगे उसे द्वेषकी क्रिया कहते है २४ (इरिआवहिआ) रस्ते चलनेसें शरीरके व्यापारसें जो क्रिया लगे उसे इर्यापथिकी क्रिया कहते है २५ पच्चीसमी किया अप्रमत्तसाधुसेंलेके तथा सयोगी केवलीपर्यंतको भी लगति हैं ॥ २४ ॥ इति आश्रवतत्वम् ॥

समिईगुत्तिपरीसह जइधम्मोभावणाचरित्ताणि । पणतिदुवीसदसबार पंचभेएहिंसगवन्ना ॥ २५ ॥

(समिइ) समति (गुति) गुप्ति (परीसह) परिसह (जइधम्मो) यतिधर्म (भावणा) भावना (चरित्ताणि) चारित्र (पण) समिति पांच (ति) गुप्तितीन (दुवीस) परिसह बावीश (दस) दशविध यति धर्म (बारस) बारह भावना (पंच) चारित्र पाँच (भेएहिं) ऐसे सब मिलके संवरके भेद (सगवन्ना) सत्तावन कहे जिसमें दो भेद है एक द्रव्य-संवर और दूसरा भावसंवर जो आते हूये नवीनकर्मकोरोकदेना आत्मस्वरूपमे रहकर उसको भावसंवर कहते है और कर्म पुद्गलकी रुकावटको द्रव्यसंवर कहते हैं ॥ २५ ॥

इरियाभासेसणादाणे उच्चारेसमिईसुअ । मणगुत्तिवयगुत्तिकायगुत्तितहेवय ॥ २६ ॥

(इरिया) यतनापूर्वक रस्तेमें चलना उसको ईर्यासमिति कहते है १ (भास) निर्दोष भाषाका जो बोलना उसे भाषास-मिति कहते है २ (एसणा) निर्दोष आहारको जो ग्रहण करना सो एषणासमति ३ (दाणे) दृष्टिसे और पुजनीसे प्रमार्जन करके चीजको उपगरणको उठाना और रखना उसको आदाननिक्षेपणसमिति कहते है ४ (उच्चारे) कफ मल मूत्र आदिको जतनापूर्वक परठना उसे पारिष्ठापनिका कहते (समिई) पांचसमिति (सुअ) यह ५ (मणगुत्ति) और मनोगुप्तिके तीन भेद है १ असत्कल्पनावियोग २ समताभावकी और ३ आत्मविचार ६ (वयगुत्ति) वचनगुप्तिजिसके तीन भेद है १ अशुद्ध २ मिश्र और ३ शुद्ध व्यवहार ७ (कायगुत्तितहेवय) कायगुप्ति अशुभ करणीसे कायाको गोपरखना ८ ॥ २६ ॥

खुहापिवासासीउण्हं दंसाचेलारइत्थिओ । चरिआनिसिहियासिज्जा अक्कोसवहजायणा ॥ २७ ॥

(खुहा) क्षुधापरिसह १ (पिवासा) प्यासको सहन करना वह पिपासा परिसह २ (सी) शीत परिसह ३ (उण्हं) उष्ण परिसह ४ (दंसा) डंश परिसह ५ (चेला) अचेलक परिसह ६ (अरइ) अरति परिसह ७ (त्थिओ) स्त्रीके अंगउपाँगको सराग दृष्टिसें न देखे सो स्त्री परिसह ८ (चरिआ) चलनेका परिसह ९ (निसिहिया) नैषेधिकी इस लिये स्मशान और सिंहकी गुफा आदि स्थानोंमें ध्यानके समय नाना प्रकारके कष्टको सहता हुवा भी निषिद्ध न करे सो १० (सिज्जा) संथारेकी भूमी कहांही उंची निची मिलजानेपरभी मुनि उद्वेग न करे सो सय्या परिसह ११ (अकोस) आक्रोश इस लिये कोइ गाली देवे तोभी सहन करे १२ (वह) वध इस लिये कोई दुष्ट जीव मुनिको मारे पीटे या जानसें मारडाले तो भी वीतरागी साधु क्रोध न करे १३ (जायणा) याचना परिसह १४ ॥ २७ ॥

अलाभरोगतणफासा मलसक्कारपरीसहा । पन्नाअन्नाणसम्मत्तं इअबावीसपरीसहा ॥ २८ ॥

(अलाभ) लाभान्तराय कर्मके उदयसें जो मागने परभी चीज न मिले तोभी समता रखे और विचारे कि अन्तरायकर्मकाउदय है सो अलाभ परिसह १५ (रोग) ज्वरादि अतिरोग आने परभी साधु चिकीत्सा करानेकी इच्छाभी न करे किन्तु समभावसे सहनकरे सो रोगपरिसह १६ (तणफासा) तृणस्पर्शपरिसह साधुको तृणआदिको जो संथारो मिले तोभी शांत चित्तसें वेदना सहन करे १७ (मल) मलपरिसह इस लिये शरीरपर जो पसीनेसें मेल चढ

जावे तोभी स्नानादिककी इच्छा न करे १८ (सक्कारपरीसहा) सत्कारपरिसह, उत्कर्षमें न आवे, स्तुति करणेपर सम-परिणाम रखे १९ (पन्ना) प्रज्ञा इस लिये बडी विद्वत्ता होनेपरभी मुनि घमण्ड न रखे २० (अन्नाण) अज्ञानपरि-सह अज्ञानके उदयसें मुनि दुर्ध्यान न करे २१ (सम्मत्तं) सम्यक्त्वपरिसह (इअ) इस प्रकारसें (बावीसपरीसहा) बावीशपरिसह जाणना २२ ॥ २८ ॥

खंतीमद्दवअज्जव मुत्तीतवसंजमेअबोधव्वे । सच्चंसोअंअकिंचणंच बंभंचजइधम्मो ॥ २९ ॥

(खंती) क्षमा सब प्राणीमात्रपर सम दृष्टी रखे किन्तु यति कोइपर क्रोध न रखे १ (मद्दव) मानका त्याग करना उसको मार्दवधर्म कहते है २ (अज्जव) किशीके साथ कपट नहि रखना सो आर्जवधर्म ३ (मुत्ती) निरलोभता ४ (तव) तप जो इच्छाका निरोध करना वही तप ५ (संजमे) सत्तरे प्रकारे संयमका आराधनकरना वही संयम ६ (अ) और (बोधव्वे) जानना (सच्चं) सत्यधर्म ७ (सोअं) मनआदिको पवित्ररखना यह शौचधर्म ८ (अकिं-चणं) बाह्य अभ्यन्तर परीग्रहका त्याग सो अकिंचनधर्म ९ (च) और (बंभं) द्रव्यसें और भावसें जो मैथुनका त्याग करना वह ब्रह्मचर्यधर्म १० (जइधम्मो) ऐसे दशप्रकारे यतिधर्म पाळे उसको यति कहना योग्य है ॥ २९ ॥

पढममणिच्चमसरणं संसारोएगयायअन्नत्तं । असुइत्तंआसवसंवरोअ तहनिज्जरानवमी ॥ ३० ॥

(पढममणिच्चं) प्रथम अनित्यभावना इस भावनामें भव्यजीव ऐसा विचारे कि धन यौवन आदि सब पदार्थ अनित्य

है आत्माका मूलधर्म अविनाशी है १ (असरणं) अशरण भावना कि मृत्युके समय इस जीवको संसारमें धर्म विना कोई भी शरणभूत नही है एक धर्महीं शरण है ऐसा विचारना सो २ (संसारो) संसारभावना इस भावनामें भव्य ऐसा विचारे कि मेरे जीवनें चौरासी लाख योनिमें परिभ्रमण करते अनन्तेकालचक्र होगये है इस संसारमें पिता सो पुत्र और पुत्र सो पिता ऐसा उलट सुलट अनंती बेर होता है ऐसा बिचारना सो संसार भावना ३ (एगयाय) एकत्व भावना इस भावनामें भव्य ऐसा चिंतवे कि मेरा जीव अकेलाही आये है और अकेलाही जावेंगा सुखदुःख भी अकेलाही भोगेंगो ४ (अन्नत्तं) अन्यत्त्व भावना इसमें भव्य ऐसा विचारे कि मेरा आत्मा अनन्त ज्ञानमयी है और शरीर जड पदार्थ है शरीर आत्मा नहीं है न आत्मा शरीर है ऐसा सदैव विचारे ५ (असुइत्तं) अशुचि भावना यह शरीर खून माँस हड्डी मलमूत्र आदिसें भराहुआ ऐसा जो विचारना वह अशुचित्व भावना ६ (आसव) आस्रव भावना रागद्वेष और अज्ञान मिथ्यात्व आदिके जोरसें नये नये कर्मका जो आना अर्थात् शुभाशुभका विचार वह आस्रव ७ (संवरोअ) संवर भावना शुभाशुभ विचारको छोडकर स्वसरूपमें लीन रहना अर्थात् नवीन कर्मको आने नहीं देना वह निश्चय संवर और अकेला अशुभ विचारोंको रोकदेना सो व्यवहार संवर भावना ८ (तह) तेसेही (निज्जरानवमी) नवमी निर्जरा भावना निर्जराके दो भेद है एक सकाम निर्जरा और दुसरी अकाम निर्जरा ९ ॥ ३० ॥

लोगसहावोबोही दुल्लहाधम्मस्ससाहगाअरिहा । एआओभावणाओ भावेअवापयत्तेणं ॥ ३१ ॥

(लोगसहावो) दशमी लोकस्वभाव भावना इसमें चौदहराजलोकका स्वरूप विचारना (बोहीदुल्लहा) ११ मी

सम्यक्त्वकी प्राप्ति होनी बहोत दुर्लभ है ऐसा विचारना वह बोधिदुर्लभभावना (धम्मस्स) बारहवी धर्मभावना इसमें भव्य ऐसा विचारे कि संसारसमुद्रसें पार होनेके लिये जो जिनेस्वरमहाराजने कहा हुआ धर्म है उसका (साहगाअरिहा) साधक कहनेवाला अरिहंतादि मिलना दुर्लभ है (एआओ) इस प्रकारसें कही हुई (भावणाओ) भावनाओ (भावेअव्वा) विचारनी (पयत्तेणं) प्रयत्नसें ॥ २१ ॥

सामाइअत्थपढमं छेओवट्ठावणंभवेबीअं । परिहारविसुद्धिणं सुहुमंतहसंपरायंच ॥ २२ ॥

(सामाइ) सामायिक चारित्रद्रव्य और भावसें (अत्थ) इहां (पढमं) पहिला है १ (छेओवट्ठावणंभवेबीअं) छेदोपस्थापनीयचारित्र दुसरा है २ (परिहारविसुद्धीणं) परिहारविशुद्धि चारित्र ३ (सुहुमंतहसंपरायंच) फिर चोथा सूक्ष्मसंपराय चारित्र ४ यह चारित्र दशमा गुणस्थानवाले मुनिको होता है ॥ २२ ॥

तत्तोअअहक्खायं खायंसव्वम्मिजीवलोगम्मि । जंचरिऊणसुविहिआ वच्चंतिअयरामरंठाणं ॥ २३ ॥

(तत्तोअअहक्खायं) उस पीछे पाँचमा यथाख्यात चारित्र (खायंसव्वम्मिजीवलोगम्मि) यह चारित्र सब जीवलोगमें प्रसिद्ध है (जंचरिऊणसुविहिआ) जिसका सेवन करनेसें सुविहित साधु लोगों (वच्चंतिअयरामरंठाणं) अजरामरस्थानकको पाते है ॥ २३ ॥ इति संवर तत्त्वम् ॥ २३ ॥

अणसणमूणोअरिआ वित्तीसंखेवणंरसच्चाओ । कायकिलेसोसंलीण–यायवज्झोयतवोहोइ ॥ २४ ॥

(अणसणं) सर्वथा आहारका त्याग उपवासादिक सो अनशन तप १ (ऊणोअरिआ) आहार कमकरना सो ऊनोदरी तप २ (वित्तीसंखेवणं) वृत्तिका संक्षेप करना सो वृत्तिसंक्षेप तप ३ (रसच्चाओ) विगयका त्याग करना सो रस-त्याग तप ४ (कायकिलेसो) लोचादि जो कष्ट करना वह कायक्लेश तप ५ (संलीणयाय) सब इन्द्रियोंका दमन करना वह संलीनता तप (बज्झोयतवोहोइ) इस प्रकारसें बाह्य तपके छ भेद कहे ॥ ३४ ॥

पायच्छित्तंविणओ वेयावच्चंतहेवसज्झाओ । झाणंउस्सग्गोविअ अभिंतरओतवोहोइ ॥ ३५ ॥

(पायच्छित्तं) जो शुद्ध मनसें गुरु महाराजके पास आलोयणा लेना सो प्रायश्चित तप १ (विणओ) विनय तप २ (वेया-वच्चं) वैयावृत्य तप ३ (तहेवसज्झाओ) तेसेही स्वाध्याय तप ४ (झाणं) ध्यान तप ध्यानका स्वरूप गुरुगमसें धारना ५ (उस्सग्गोविअ) और कायोत्सर्ग तप (काउसग्ग) ६ (अभिंतरओतवोहोइ) ऐसे छ प्रकारसें अभ्यन्तर तप कहा ॥ ३५ ॥

बारसविहंतवोनिज्जराय बंधोचउविगप्पोअ । पयईठिइअणुभागो पएसभेएहिंनायवो ॥ ३६ ॥

(बारसविहं) ऐसे सब मिलकर बारह भेदे (तवो) तप (निज्झराय) निर्जराके लिये है । इति निर्जरातत्त्वम् (बंधो) अब बंधतत्त्व (चउविगप्पोअ) चार भेद है (पयई) १ प्रकृतिबन्ध (ठिइ) स्थितिबन्ध (अणुभागो) ३ अनुभाग-बन्ध (पएस) और प्रदेशबन्ध ४ (भेएहिं) ऐसे चार भेदसें (नायवो) जानना ॥ ३६ ॥

पयइसहावोवुत्तो ठिईकालावहारणं । अणुभागोरसोनेओ पएसोदलसंचओ ॥ ३७ ॥

(पयइसहावोवुत्तो) प्रकृतिबन्ध इसलिये कर्मोंका स्वभाव (ठिईकालावहारणं) कर्मोंकी स्थिति—कालका निश्चय वह स्थितिबन्ध २ (अणुभागो) ३ अनुभाग बन्ध सो (रसोनेओ) कर्मोंका रस जानना (पएसो) ४ प्रदेशबन्ध (दलसंचओ) कर्मोंके दलका संचय ॥ ३७ ॥

पडपडिहारसिमज्ज हडचित्तकुलालभंडगारीणं । जहएएसिंभावा कम्माणविजाणतहभावा ॥ ३८ ॥

(पड) पाटा, जैसे किसीके आंखोंपर बन्धे हुए पाटेके संयोगसे कुछ नहीं देखाइ देता तेसे ही ज्ञानावरणीय कर्मके स्वभावसें आत्माकों अनन्त ज्ञान नहीं होता है १ (पडिहार) द्वारपालकेसमान दर्शनावरणीय कर्मका स्वभाव है जैसे राजाको दर्शन चाहनेवालेको द्वारपाल रोक देते है उसी तरह आत्माके दर्शनगुणको दर्शनावरणीय कर्म रोक देता है २ (असि) तरवार, वेदनी कर्मका स्वभाव ऐसा है कि जैसे सहत्त खरडी तलवारकी धारको चाटनेसें अच्छा लगता है मगर जब जीभ कटजाति है तब दुख होता है वैसीही तरह शातावेदनीसें जीवको सुख होता है और अशातावेदनीसें जीवको दुख होता है ३ (मज्ज) मदराकीछाक समान मोहनीयकर्मका स्वभाव है जैसे मदिरासें जीव बेभान होजाते है तेसेही मोहनीयकर्मके उदयसें जीव संसारमें मुंझाते हैं यह कर्म आत्माका सम्यगदर्शनको और सम्यक् चारित्र गुणोंको रोकता है अर्थात् ढक देता है ४ (हड) खोडासमान आयुकर्म है जैसे खोडेमें पडे हुए चोर राजाके हुकम विन नही निकल शकते है तैसे ही आयुकर्मके जोरसे जीव गतीसें नहीं निकल शकते है ५ (चित्त) इस नामकर्मका स्वभाव चित्रकार जैसा हैं यह कर्म आत्माके अरूपि धर्मको रोकता है जैसे चितारा अच्छा बुरा नाना प्रकारका चित्राम

बनाता है तैसे ही यह नामकर्म आत्माको अछी बुरी गतियोंमे पहुंचा देता है नाना प्रकारके स्वरूपको धारण करा देता है ६ (कुलाल) यह गोत्रकर्म कुंभार जैसा है जैसे कुंभार अछे और बुरे नाना प्रकारके वरतन बनाते है तैसेही इस कर्मके उदयसें जीव ऊंच निच कुलको धारण करते है ७ (भंडगारीणं) इस अन्तराय कर्मका स्वभाव भंडारी जैसा हैं क्योंकि जब राजा किसीको दान देनेके लिये भंडारीको कहे परन्तु भंडारी उसको देवे नहीं ऐसेही इस कर्मके उद-यसे जीव दानादि नहीं कर शकते है ८ (जहएएसिंभावा) जैसे इनुंका भाव जैसा यह आठोही वस्तुका स्वभाव है (कम्माण) तैसेही आठोही कर्मोंकाभी (विजाण) जानो (तहभावा) तैसेही कर्मोंका स्वभाव ॥ २८ ॥

इहनाणदंसणावरण वेयमोहाउनामगोआणि । विग्घंचपणनवदुअठवीस चउतिसयदुपणविहं ॥ २९ ॥

(इहनाण) यह ज्ञानावरणीयकर्म १ (दंसणावरण) और दुसरा दर्शनावरणीकर्म २ (वेयमोहाउनामगोआणि) तीसरा वेदनीयकर्म ३ ४ मोहीनीकर्म ५ आयुकर्म ६ नामकर्म और सातमा गोत्रकर्म ७ (विग्घं) अन्तरायकर्म ८ (च) यह आठ कर्म (पण) ज्ञानावरणीयकी उत्तर प्रकृतियों पाँच है (नव) और दर्शनावरणीयकी उत्तरप्रकृति नव (दु) वेदनीकी प्रकृति दो (अठवीस) मोहीनीकर्मकी उत्तर प्रकृति अठ्ठावीस (चउ) आयुकर्मकी उत्तर प्रकृति चार (तिसय) नामकर्मकी उत्तर प्रकृति एकसो तीन (दु) गोत्रकर्मकी उत्तर प्रकृति दो (पण) और अन्तराय कर्मकी उत्तर प्रकृति पांच (विहं) ऐसे सब कर्मोंकी उत्तर प्रकृति एकसें अठ्ठावन जान लेना ॥ २९ ॥

नाणेयदंसणावरण वेअणिएचेव अंतराएअ । तीसं कोडाकोडी अयराणंठिईयउक्कोसा ॥ ४० ॥

(नाणेयदंसणावरणवेअणिए) ज्ञानावरणी दर्शनावरणी वेदनी (चेव) निश्चय (अंतराएअ) और अन्तराय इन चारो कर्मोंकी (तीसंकोडाकोडी) तीस कोडाकोडी (अयराणं) सागरोपमकी (ठिईयउकोसा) उत्कृष्टी स्थिति कही है ॥ ४० ॥

सत्तरिकोडाकोडीमोहणिए वीसनामगोएसु । तित्तीसंअयराइं आउठिइबंधउक्कोसा ॥ ४१ ॥

(सत्तरिकोडाकोडी) सित्तर कोडाकोडी सागरोपमकी स्थिति (मोहणिए) मोहनीयकर्मकी है (वीसनामगोएसु) वीस कोडाकोडी सागरोपमकी स्थिति नामकर्म और गोत्रकर्मकी है (तित्तीसंअयराइं) तेतीस सागरोपमकी (आउ) आयु-कर्मकी (ठिइ) स्थिति कही (बंधउकोसा) ऐसे सब कर्मोंकी उत्कृष्टी स्थितिका बंध कहा है ॥ ४१ ॥

बारसमुहुत्तजहन्ना वेयणिएअठनामगोएसु । सेसाणंतमुहुत्तं एयंबंधठिईमाणं ॥ ४२ ॥

(बारसमुहुत्तजहन्ना) बारह मुहूर्तकी जघन्यस्थिति (वेयणिए) सकषाय वेदनीयकर्मकी हैं अकषाय वेदनीकी २ समयकी स्थिति है (अठनामगोएसु) आठ मुहूर्तकी जघन्यस्थिति नामकर्म और गोत्रकर्मकी हैं (सेसाणंतमुहुत्तं) शेष पाँच कर्मोंकी जघन्यस्थिति अन्तरमुहूर्तकी है (एयंबंधठिईमाणं) इस प्रकारसें सब कर्मोंकी उत्कृष्टी और जघन्यसे स्थिति बंधका प्रमाण कहा ॥ ४२ ॥ इति बंधतत्त्वम् ॥

संतपयपरूवणया दव्वपमाणंचखित्तफुसणाय । कालोअअंतरभाग भावेअप्पाबहुचेव ॥ ४३ ॥

(संतपयपरूवणया) सत्पदकी प्ररूपणाद्वार १ (दव्वपमाणं) फिर सिद्धजीवोंके द्रव्यका प्रमाणद्वार २ (खित) क्षेत्रद्वार ३ (फूसणाय) सिद्धोकी स्पर्शनाद्वार ४ (कालोअ) कालद्वार ५ (अंतर) अन्तरद्वार ६ (भाग) भागद्वार ७ (भाव) भावद्वार ८ (अप्पाबहु) और अल्पाबहुत्वद्वार ९ (चेव) निश्चे यह मोक्षके नव द्वार कहै ॥ ४३ ॥

संतंसुद्धपयत्ता विज्जंतंखकुसुमवनअसंतं । मुक्खत्तिपयंतस्सउ परूवणामग्गणाईहिं ॥ ४४ ॥

(संतं) मोक्ष छतो है (सुद्ध) शुद्ध (पयत्ता) पद होनेसे (विज्जत्तंखकुसुमवनअसंत्तं) यह विद्यमान है परन्तु वह आकाशके कुसुमकी तरह अछतो नहीं हैं (मुक्खत्तिपयंतस्सउ) यह मोक्षपदकी (परूवणा) प्ररूपणा (मग्गणाईहिं) मार्गणाद्वारो विचारसे कहते हैं ॥ ४४ ॥

गइइंदीएकाय जोएवेयकसायनाणेय । संजमदंसणलेसा भवसम्मे सन्नि आहारे ॥ ४५ ॥

(गइ) गतिमार्गणा ४ (इंदीए) इंद्रिमार्गणा ५ (काय) कायमार्गणा ६ (जोए) योगमार्गणा ३ (वेय) वेदमार्गणा ३ (कसाय) कषायमार्गणा ४ (नाणेय) ज्ञानमार्गणा ८ (संजम) संयममार्गणा ७ (दंसण) दर्शनमार्गणा ४ (लेसा) लेश्यामार्गणा ६ (भव) भव्यमार्गणा २ (सम्मे) सम्यक्त्वमार्गणा ६ (सन्नि) संनिमार्गणां २ (आहारे) आहारमार्गणा २ ॥ ४५ ॥

नरगइपणिंदितसभव सन्निअहक्खायखइअसम्मत्ते । मुक्खोणाहारकेवल दंसणनाणेनसेसेसु ॥ ४६ ॥

(नरगइ) मनुष्यगतिसें १ (पणिंदि) पंचेन्द्रिजातिसें २ (तस) त्रसकायसें ३ (भव) भव्यपणसें ४ (सन्नि) संनी-पंचेन्द्रिसें ५ (अहक्खायं) यथाख्यातचारित्रसें ६ (खइअसम्मत्ते) क्षायकसम्यक्त्वसें ७ (मुक्खो) मोक्ष जाते हैं और (णाहार) अणहारीक पदसें ८ (केवलदंसण) केवल दर्शनसें ९ (नाणे) और केवलज्ञानसें इन दश मार्गणा द्वारसें जीवों मोक्ष जाते है १० (नसेसेसु) परन्तु शेष ५२ मार्गणाओंसें मोक्ष नही जाते ॥ ४६ ॥ इति प्रथमद्वार ॥

दव्वपमाणेसिद्धाणं जीवदव्वाणिहुंतिणंताणि । लोगस्सअसंखिज्जे भागेइक्कोयसव्वेवि ॥ ४७ ॥

(दव्वपमाणेसिद्धाणं) सिद्धोके द्रव्यकाप्रमाण (जीवदव्वाणिहुतिणंताणि) सिद्धोंमें जीवद्रव्य अनंता है ॥ इति दुसरा द्वार २ (लोगस्सअसंखिज्जेभागे) चौदह राजलोकके असंख्यातमे भागमे (इक्कोय) एक सिद्ध और (सव्वेवि) सब सिद्ध रहते है ॥ इति तीसरा द्वार ३ ॥ ४७ ॥

फूसणाअहिआकालो इगसिद्धपडुच्चसाइओणंतो । पडिवायाभावाओ सिद्धाणंअंतरंनत्थि ॥ ४८ ॥

(फूसणा) स्पर्शना सिद्ध जीवोंकी (अहिआ) अधिक है यह चौथा द्वार ४ (कालो) काल (इगसिद्धपडुच्चसाइ ओणंतो) एक सिद्ध आश्रित सादि अनन्त स्थिति है और अनेक सिद्ध आश्रित अनादि अनन्त स्थिति है ॥ इति

कालद्वार ५ (पडिवायाभावाओ) सिद्धांके जीवोंको पिछा पडनेका अभाव है ॥ इति छठा द्वार ६ (सिद्धाणंअंतर-नत्थि) सिद्धोंके जीवोंको अन्तर नहीं हैं कालकृत और क्षेत्रकृत दोनोंसें इति सातमा द्वार ॥ ४८ ॥

सव्वजियाणमणंते भागेतेतेसिंदंसणंनाणं । खइएभावेपरिणामि एअपुणहोइजीवत्तं ॥ ४९ ॥

(सव्वजियाणमणंते) सब संसारी जीवोंमे सिद्धके जीवों अनन्तमें (भागे) भागमे हैं इति आठमो द्वार ८ (तेतेसिं-दंसणंनाणं) उन सिद्धोके जीवोंके केवलदर्शन और केवलज्ञान (खइए) क्षायिक (भाव) भावमे है (परिणामी एअ) परिणामी हैं (पुण) यह पुनः (होइजीवत्तं) जीवत्वपना है ॥ ४९ ॥

थोवानपुंससिद्धा थीनरसिद्धायकमेणसंखगुणा । इअमुक्खतत्तमेअं नवतत्तालेसओभणिआ ॥ ५० ॥

(थोवा) सबसे कम (नपुंस) नपुंसक (सिद्धा) सिद्ध हुवा (थी) नपुंसकसे स्त्रीसिद्ध संख्यातगुणा अधीक हैं स्त्री सिद्धसे (नरसिद्धा) पुरुष सिद्ध संख्यातगुणे हुए (कमेणसंखगुणा) अनुक्रमें संख्यातगुणा जानना (इअमुक्ख) यह मोक्ष (तत्तमेअं) तत्त्व जाणना इस प्रकारसें नव भेद कहे (नवतत्तालेसओभणिआ) इस प्रकारे नव तत्त्व संक्षेपसे कहेगये ॥ ५० ॥

जीवाइनवपयत्थे जोजाणइतस्सहोइसम्मत्तं । भावेणसद्दहंतो अयाणमाणेविसम्मत्तं ॥ ५१ ॥

(जीवाइ) जीवादि (नवपयत्थे) नव पदार्थको (जोजाणइ) जो जीव जाणते है (तस्सहोइसम्मत्तं) उस जीवको

अवश्यही सम्यक्त्व हो (भावेणसद्दहंतो) और भावसें जो सर्द है तो (आयाणमाणेवि) अजान जीवोकोभी (सम्मत्तं) सम्यक्त्व प्राप्ति होवै ॥ ५१ ॥

सव्वाइंजिणेसरभासिआइं वयणाईनन्नहाहुंति । इअबुद्धीजस्समणे सम्मत्तंनिच्चलंतस्स ॥ ५२ ॥

(सव्वाइं) सर्व (जिणेसरभासिआइं) जिनेश्वर महाराजके कहे हुए (वयणाई) वचन (नन्नहाहुंति) अन्यथा नहीं हैं अर्थात् सत्य है (इअबुद्धीजस्समणे) ऐसी बुद्धि जिसके मनमें होवे (सम्मत्तंनिच्चलंतस्स) उस प्राणीको निश्चल सम्यक्त्व होवे ॥ ५२ ॥

अंतोमुहुत्तमित्तंपि फासिअंहुज्जजेहिंसम्मत्तं । तेसिंअवड्ढपुग्गल परिअट्टोचेवसंसारो ॥ ५३ ॥

(अंतोमुहूत्तमित्तंपि) एक अन्तरमुहुर्त्तमात्र भी (फासिअंहुज्जजेहिं) स्पर्श हुआ हो जिसको (सम्मत्तं) सम्यक्त्वका (तेसिं) तिस जीवको (अवड्ढ) अर्ध (पुग्गलपरिअट्टो) पुद्गल परावर्ततक उसको परिभ्रमण करना होगा (चेव) निश्चयकरेके (संसारो) संसारमें बाद मोक्षमें जावेंगे ॥ ५३ ॥

उस्सप्पिणीअणंता पुग्गलपरिअट्टओमुणेअव्वो । तेणंतातीअद्धा, अणागयद्धाअणंतगुणा ॥ ५४ ॥

(उत्सप्पिणीअणंता) अनन्ती उत्सर्पिणी और अनन्ती अवसर्पिणी जाने पर (पुग्गलपरिअट्टओ मुणेअव्वो) एक पुद्गल परावर्त्तन होता है (तेणंतात्तीअद्धा) तैसा अनन्ता पुद्गल परावर्त्तत अतितकाले हो चुके (अणागयद्धाअणंतगुणा) और अनागतकाले अनन्तगुणा आगे जावेंगे ॥ ५४ ॥

जिणअजिणतित्थतित्था गिहिअन्नसलिंगथीनरनपुंसा । पत्तेअसयंबुद्धा बुद्धबोहिक्कणिक्काय ॥ ५५ ॥

(जिण) जिनसिद्ध १ (अजिण) अजिनसिद्ध २ (तित्थ) तीर्थसिद्ध ३ (तित्था) अतीर्थसिद्ध ४ (गिहि) गृहीलिंगसिद्ध ५ (अन्न) अन्यलिंगेसिद्ध ६ (सलिंग) स्वलिंगसिद्ध ७ (थी) स्त्रीलिंगसिद्ध ८ (नर) पुरुषलिंगसिद्ध ९ (नपुंसा) नपुंसकलिंगसिद्ध १० (पत्तेअ) प्रत्येकबुद्धसिद्ध ११ (सयंबुद्धा) स्वयंबुद्धसिद्ध १२ (बुद्धबोहि) बुद्धबोधितसिद्ध १३ (इक्कणिक्काय) एकसिद्ध १४ और अनेकसिद्ध १५ यह सिद्धके पन्द्रह भेद संक्षेपसें कहा फिर विशेष दिखलाते है ॥५५॥

जिणसिद्धाअरिहंता अजिणसिद्धायपुंडरियपमुहा । गणहारितित्थसिद्धा अतित्थसिद्धायमरुदेवी ॥५६॥

(जिणसिद्धा) तीर्थंकर होके मोक्ष गये वह तीर्थंकरसिद्ध (अरिहंता) रिषभादि अरिहंतसिद्ध १ (अजिणसिद्धायपुंडरियपमुहा) अजिनसिद्ध सामान्य केवली पुंडरिक गणधर आदि २ (गणहारितित्थसिद्धा) गणधर गौतमादि तीर्थसिद्ध ३ (अतित्थसिद्धायमरुदेवी) अतीर्थसिद्ध वह मरुदेवी ४ ॥ ५६ ॥

गिहिलिंगसिद्धभरहो वलकलचीरीयअन्नलिंगम्मि । साहुसलिंगसिद्धा थीसिद्धाचंदणापमुहा ॥ ५७ ॥

(गिहिलिंगसिद्ध) गृहीलिंग सिद्ध हुये (भरहो) वह भरतादि ५ (वलकलचीरीय) वल्कलचीरीयादि तापशके वेषमें जो सिद्ध हुये (अन्नलिंगम्मि) वह अन्यलिंग सिद्ध जानना ६ (साहुसलिंगसिद्धा) साधुके वेषमें जो सिद्ध हुए वह स्वलिंगसिद्ध ७ (थीसिद्धाचंदणापमुहा) स्त्रीके लिंगमें जो सिद्ध हुए वह चंदनबालादि ८ ॥ ५७ ॥

पुंसिद्धागोयमाई गंगेयाईनपुंसयासिद्धा । पत्तेयसयंबुद्धा भणियाकरकंडुकविलाई ॥ ५८ ॥

(पुंसिद्धागोयमाई) पुरुष लिंगसिद्ध गौतमादि० (गांगेयाईनपुंसयासिद्धा) गंगेयादि जो सिद्ध हुए वह नपुंसकलिंग सिद्ध १० (पत्तेयसयंबुद्धा) प्रतेकबुद्धसिद्ध और स्वयंबुद्ध अनुक्रमसें (भणिया) कहा (करकंडु) करकंडु राजा ११ (कविलाई) और कपिलआदि कहे १२ ॥ ५८ ॥

तहबुद्धबोहिगुरुबोहिया इगसमयएगसिद्धाय । एगसमएविअणेगा सिद्धातेणेगसिद्धाय ॥ ५९ ॥

(तह) फिर तैसें ही (बुद्धबोहिगुरुबोहिया) बुद्धबोधित सिद्ध हुए वह गुरुके उपदेशसें १३ (इगसमयएगसिद्धाय) एक समयमें एकही सिद्ध होए एक सिद्ध महावीर आदि १४ (एगसमएविअणेगा) (सिद्धातेणेगसिद्धाय) और एक समयमें अनेक सिद्ध होये वह रिषभादि अनेक सिद्ध कहिये १५ ॥ ५९ ॥

जइआइहोइपुच्छा जिणाणमग्गंमिउत्तरंतइया । इक्कस्सनिग्गोयस्स अणंतभागोयसिद्धिगओ ॥ ६० ॥

(जइआइहोइपुच्छा) जिस जिस समयपर भगवान्को पुछनेमें आवै (जिणाणमग्गंमिउत्तरंतइया) उस उस समय-पर जिनेस्वर महाराजके मार्गमें यह ही उत्तर मिलता है कि (इक्कस्सनिग्गोयस्सअणंतभागोय) एक निगोदके अनंतमें भागे (सिद्धिगओ) सिद्धोंमें गये हैं ॥ ६० ॥

इति नवतत्त्वप्रकरणं समाप्तम् ।

॥ अथ श्रीदंडकप्रकरणं मूलसहितं हिन्दी अनुवादसहितं प्रारभ्यते ॥

नमिउंचउवीसजिणे तस्सुत्तवियारलेसदेसणओ । दंडगपएहिंतेच्चिय थोसामिसुणेहभोभवा ॥ १ ॥

(नमिउंचउवीसजिणे) चोवीश जिनेश्वरोको नमस्कारकरके (तस्सुत्तवियारलेसदेसणओ) उणुंके सूत्रोंमें कहा विचार लेशमात्र कहनेसे (दंडगपएहिंतेच्चिय) दंडगके पदोंकरके उन भगवांनोकी (थोसामिसुणेहभोभवा) मैं स्तवना करताहुं सो हेभव्यप्राणिजीवो तुम सुनो ॥ १ ॥

नेरइआअसुराई पुढवाईबेइंदियादओचेव । गब्भयतिरियमणुस्सा वंतरजोइसियवेमाणी ॥ २ ॥

(नेरइआ) सात नरकको १ दंडक (असुराई) असुरादि भुवनपतिका १० दश दंडक (पुढवाई) पृथ्वीकायादि पांच स्थावरके ५ दंडक (बेइंदियादओचेव) दो इंद्रियादि विकलेंद्रिके ३ दंडक (गब्भयतिरिय) गर्भजतिर्यंचका २० मादंडक (मणुस्सा) गर्भज मनुष्यका २१ मांदंडक (वंतर) व्यंतरका २२ मादंडक (जोइसिय) ज्योतिषि देवोका २३ मादंडक (वेमाणि) और वैमानिक देवोंका २४ मादंडक ऐसे सब मिलकर चोवीश दंडक समज लेना ॥ २ ॥

संखित्तयरीउइमा सरीरमोगाहणायसंघयणा । सन्नासंठाणकसाया लेसइंदीयदुसमुघाया ॥ ३ ॥

(संखित्तयरीउइमा) यह संग्रहणीनीगाथा संक्षेप मात्र कहे है (सरीर) शरीरद्वार १ (ओगाहणाय) अवगाहनाद्वार २ (संघयणा) संघयणद्वार ३ (सन्ना) संज्ञाद्वार ४ (संठाण) संस्थानद्वार ५ (कसाया) कषायद्वार ६ (लेस) लेश्याद्वार ७ (इंदिय) इन्द्रियद्वार ८ (दुसमुग्घाया) दो प्रकारे समुद्घातद्वार ९ ॥ ३ ॥

दिठीदंसणनाणे जोगुवओगोववायचवणठिई । पज्जत्तिकिमाहारे सन्निगइआगईवेए ॥ ४ ॥

(दिठी) दृष्टिद्वार १० (दंसण) दर्शनद्वार ११ (नाणे) ज्ञानद्वार अज्ञानद्वार १२ (जोगु) योगद्वार १३ (वओगो) उपयोगद्वार १४ (ववाय) उपपातद्वार १५ (चवण) च्यवनद्वार १६ (ठिइ) स्थितिद्वार १७ (पज्जत्ति) पर्याप्तिद्वार १८ (किमाहारे) किमाहारद्वार १९ (सन्नि) संज्ञाद्वार २० (गई) गतिद्वार २१ (आगई) आगतिद्वार २२ (वेद) वेदद्वार २३ चपुन अल्पबहुत्वद्वार २४ इति चौवीशद्वार जाणना ॥ ४ ॥

चउगब्भतिरियवाउसु मणुआणंपंचसेसतिसरीरा । थावरचउगेदुहओ अंगुलअसंखभागतणू ॥ ५ ॥

(चउगब्भतिरियवाउसु) गर्भजतिर्यंच और वाउकायके औदारिक वैक्रिय तेजस और कार्मण यह चार शरीर होते है (मणुआणंपंच) ओर मनुष्योके पांचोही शरीर होते है (सेसतिसरीरा) बाकीके एकवीश दंडकोके विषे तिन तिन शरीर है १३ देवता १ नारकी यह १४ दंडकमें वैक्रिय १ तेजस २ कार्मण ३ यह ३ शरीर होवे थावर ४ विकलेंद्री ३ एवं ७ दंडकमें औदारिक १ तेजस २ कार्मण ३ यह ३ शरीर होवे इति १ शरीरद्वार ॥ ॥ ५ ॥ (थावरचउ-

गेदुहओ) वनस्पतिवरजके चार स्थावरको जघन्य और उत्कृष्ट ऐसे दो प्रकारे (अंगुलअसंखभागतणु) अंगुलके असंख्यातमें भागे शरीरकी अवगाहना होति है ॥ ५ ॥

सव्वेसिंपिजहन्ना साहावियअंगुलस्ससंखंसो । उक्कोसपणसयधणू नेरइयासत्तहत्थसुरा ॥ ६ ॥

(सव्वेसिंपिजहन्ना) सब दंडकोंके विषे जघन्यसें (साहावियअंगुलस्सअसंखंसो) स्वाभाविक अंगुलके असंख्यातमे भागे शरीर होते है (उक्कोसपणसयधणू) और उत्कृष्टी अवगाहना पांचसें धनुष्यकी (नेरइया) नारकीके जीवोंकी हैं (सत्तहत्थसुरा) और देवोंका उत्कृष्टा शरीरमान सात हाथका होता है ॥ ६ ॥

गब्भयतिरिसहस्सजोयण वणस्सईअहियजोयणसहस्सं । नरतेइंदितिगाऊ बेइंदियजोयणेबार ॥७॥

(गब्भयतिरिसहस्सजोयण) गर्भजतिर्यंचका शरीर एक हजार जोजनका है (वणस्सईअहियजोयणसहस्सं) और वनस्पतिकायका शरीर एक हजार जोजनसें कुछ अधिक होते है (नरतेइंदितिगाऊ) मनुष्य और तेइंद्रिका शरीर तिन गाउका होता है (बेइंदियजोयणेबार) और बेइंद्रिका शरीर बारह जोजनका है ॥ ७ ॥

जोयणमेगंचउरिंदि देहमुच्चत्तणंसुएभणियं । वेउव्वियदेहंपुण अंगुलसंखंसमारंभे ॥ ८ ॥

(जोयणमेगंचउरिंदि) एक जोजन चौरंद्रिका (देहमुच्चत्तणंसुएभणियं) शरीरका उंचपणा सूत्रमे कहा है (वेउवि-

यदेहंपुण) फेर वैक्रिय शरीरका अनुमान कहते है (अंगुलसंखंसमारंभे) औदारिक शरीरवालोंके तथा वेक्रिय शरीरवालोके उत्तर वैक्रिय आरंभतीवेर अंगुलके संख्यातमे भागे होता है ॥ ८ ॥

देवनरअहियलक्खं तिरियाणंनवयजोयणसयाइं । दुगुणंतुनारयाणं भणियंवेउव्वियसरीरं ॥ ९ ॥

(देवनरअहियलक्खं) देवताका वैक्रियशरीर एक लाखजोजनका होता है और मनुष्यका वैक्रियशरीर एक लाख जोजनसें कुछ अधिक होता है (तिरियाणंनवयजोयणसयाइं) और तिर्यंचका वैक्रिय शरीर नवसें जोजनका (दुगुणंतुनारयाणं) और नारकयोका शरीर मूलसें दूना होता है (भणियंवेउव्वियसरीरं) इसप्रकारे वैक्रिय शरीरका प्रमाण कहा ॥ ९ ॥

अंतमुहुत्तंनिरये मुहुत्तचत्तारितिरियमणुएसु । देवेसुअद्धमासो उक्कोसविउव्वणाकालो ॥ १० ॥

(अंतमुहुत्तंनिरये) नारकयोके उत्तरवैक्रियशरीरका काल अंतर्मुहूर्त्तका होवे है फेर दुसरा करणा पडता है (मुहुत्तचत्तारितिरियमणुएसु) मनुष्य और तिर्यंचके वैक्रिय शरीरका काल मान चार मुहूर्त्तका है (देवेसुअद्धमासो) और देवोके उत्तरवैक्रियशरीरका काल एकपक्षदिनका (उक्कोसविउव्वणाकालो) इस प्रकारसें वैक्रिय शरीरका उत्कृष्टकालमान कहा है ॥ इति शरीर अवगाहना द्वार २ ॥ १० ॥

थावरसुरनेरइया असंघयणायविगलछेवट्ठा । संघयणछगंगब्भय नरतिरिएसुमुणेयव्वं ॥ ११ ॥

(थावरसुरनेरइया) पांच स्थावर तेरे देवता और एक नारक ऐसे सब मिलके उगणीसदंडकोके विषे (असंघयणाय) संघयण नही है (विगलछेवठ्ठा) और तीन विकलेंद्रिको एक छेवठा संघयण है (संघयणछक्कंगब्भय) छे संघयण गर्भजको (नरतिरिएसुविमुणेयव्वं) मनुष्य और तिर्यंचको जान लेना ॥ इति चौविस दंडके संघयण द्वार ३ ॥ ११ ॥

सव्वेसिंचउदहवासन्ना, सव्वेसुरायचउरंसा । नरतिरियछसंठाणा हुंडाविगलिंदिनेरइया ॥ १२ ॥

(सव्वेसिंचउदहवा) सब दंडकोके विषे चार तथा दश (सन्ना) संज्ञा होती है ॥ इति चोवीश दंडकके चतुर्थ संज्ञाद्वार (सव्वेसुरायचउरंसा) सब देवोका समचोरस संस्थान हैं (नरतिरियछसंठाणा) मनुष्य और तिर्यंचको छही संस्थान होते है (हुंडाविगलिंदिनेरईया) विकलेंद्रि और नारकीको एक हुंडक ही संस्थान होता है ॥ १२ ॥

नाणाविहधयसूई बुब्बुहवणवाउतेउअपकाया । पुढवीमसूरचंदा–कारासंठाणओभणिया ॥ १३ ॥

(नाणाविह) नाना प्रकारका (धय) ध्वजाके आकारे संस्थान (सूई) सुईके आकारे (बुब्बुह) जलके बुदबुदाके आकारे (वणवाउतेउअपकाया) अनुक्रमसें वनस्पतिकाय वाउकाय तेउकाय और अपकायका है (पुढवीमसूरचंदाकारा) और पृथ्वीकायका मसूरकीदाल अथवा चन्द्रके आकारे (संठाणओभणिया) इस प्रकारसें चोवीश दंडकके पंचम संस्थानद्वार कहा ॥ १३ ॥

सव्वेविचउकसाया लेसछक्कंगब्भतिरियमणुएसु । नारयतेऊवाऊ विगलावेमाणियतिलेसा ॥ १४ ॥

(सवेविचउकसाया) सर्व दंडकोके विषे चारोही कषाय होते है इति चोवीश दंडकके छठा कषायद्वार ॥ (लेसछकं-गब्भतिरियमणुएसु) छेहीलेसा गर्भज तिर्यंच और मनुष्यको होते है (नारयतेऊवाऊ) और नारक तेउकाय वाउकाय (विगला) और तिनविकलेंद्रि एसे छे दंडकोके विषे प्रथमकी तीन लेस्या होता है (वेमाणियतिलेसा) और वैमाणिक देवोंको अन्तकी तीन लेस्या होति है ॥ १४ ॥

जोइसियतेउलेसा सेसासवेविहुंतिचउलेसा । इंदियदारंसुगमं मणुआणंसत्तसमुग्घाया ॥ १५ ॥

(जोइसियतेउलेसा) और ज्योतिषीको एक तेजोलेस्याही होति है (सेसासवेविहुंतिचउलेसा) और शेष सब दंडकोके विषे कृष्णादि चार लेस्या है इति चोवीस दंडके लेस्याद्वार ७ (इंदियदारंसुगमं) और इन्द्रियद्वार तो सुगम है ८ ॥ (मणुआणंसत्तसमुग्घाया) मनुष्यको सातोही समुद्घात होति है ॥ १५ ॥

वेयणकसायमरणे वेउवियतेयएयआहारे । केवलियसमुग्घाया सत्तइमेहुंतिसन्नीणं ॥ १६ ॥

(वेयण) वेदना (कसाय) कषाय (मरणे) और मरण (वेउविय) वैक्रिय (तेयएय) तेजस और (आहारे) आहारक (केवलियसमुग्घाया) केवली समुद्घात (सत्तइमेहुंतिसन्नीणं) इस प्रकारसें सातोही समुद्घात संज्ञि-पंचन्द्री मनुष्यको होता है ॥ १६ ॥

एगिंदियाणकेवलि तेउआहारगविणाउचत्तारि । तेवेउवियवज्जा विगलासन्नीणतेचेव ॥ १७ ॥

(एगिंदियाणकेवलि) एकेन्द्रीको केवली (तेउआहारगविणाउचसारि) तथा तेजस और आहारक इस तीनुको वरजके बाकीका चार समुद्घात एकेन्द्रिको होता है (तेवेउवियवज्जा) वह तिन और वैक्रिय यह चार वरजके (विगलासन्नीणते) तीन समुद्घात विकलेन्द्रि ओर असन्नीको होता है (चेव) निश्चे करके ॥ १७ ॥

पणगब्भतिरिसुरेसु नारयवाऊसुचउरतियसेसे । विगलदुदिट्ठीथावर मिच्छत्तिसेसतियदिट्ठी ॥ १८ ॥

(पणगब्भतिरिसुरेसु) परन्तु गर्भज तिर्यंच और तेरह देवोंको प्रथमका पांच समुद्घात होता है (नारयवाऊसु) नारक और वाउकायके विषे प्रथमका (चउर) चार समुद्घात है (तियसेसे) और शेषके सात दंडकोके विषे प्रथमका तीन समुद्घात होता है ॥ इति चोवीस दंडके नवमा समुद्घात द्वार ॥ (विगलदुदिट्ठी) विकलेन्द्रिको दो दृष्टि होती है एक सम्यक् और दुसरी मिथ्यादृष्टि ऐसे दो (थावर) पांच स्थावरको (मिच्छत्ति) एक मिथ्यादृष्टिही होति है (सेसतियदिट्ठी) शेष रहे हुये जो सोलह दंडक उसके विषे सम्यक् मिश्र और मिथ्यात्व यह तीन दृष्टि होति है ॥१८॥ इति चौविश दंडकके दशमा दृष्टि द्वार ॥

थावरबितिसुअचक्खु चउरिंदिसुतदुगंसुएभणियं । मणुआचउदंसणिणो सेसेसुतिगंतिगंभणियं॥१९॥

(थावर) पांच स्थावरको (बितिसुअचक्खु) तथा बेइन्द्रि और तेइन्द्रिको एक अचखुदर्शनही होता है (चउरिंदिसु) चउरिंद्रिको (तदुगंसुएभणियं) चक्षु तथा अचक्षु ऐसे दो दर्शन सूत्रमे कहा है (मणुआचउदंसणिणो) और

मनुष्यके विषे तो चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शन अवधिदर्शन और केवलदर्शन ऐसे चारोही होते है (सेसेसुतिगंतिगंभणियं) बाकीके सब दंडकोके विषे केवल वर्जके तीनतीन दर्शन कहा है ॥ इति चोवीश दंडकके ११-१२-दर्शनद्वार ॥ १९ ॥

अन्नाणनाणतियतिय सुरतिरिनिरएथिरेअनाणदुगं। नाणा न्नाणदुविगले मणुएपणनाणतिअनाणा॥२०॥

(अन्नाणनाणतियतिय) तीन अज्ञान और तीन ज्ञान (सुरतिरिनिरए) देवताको तथा तिर्यंच और नारकके होते है (थिरेअनाणदुगं) और स्थावरको मति तथा श्रुत ऐसे दो अज्ञान होते है (नाणान्नाणदुविगले) दो ज्ञान तथा दो अज्ञान विकलेंद्रिको होते है (मणुएपणनाणतिअनाणा) और मनुष्यको तो पांच ज्ञान और तीन अज्ञान एसे आठोही होते है ॥ इति चौवीश दंडकमें ज्ञान अज्ञानद्वार १३ ॥ २० ॥

इक्कारससुरनिरए तिरिएसुतेरपनरमणुएसु । विगलेचउपणवाए जोगतियंथावरेहोई ॥ २१ ॥

(इक्कारससुरनिरए) देवता और नारकको इग्यारे योग होते है (तिरिएसुतेर) तिर्यंचको तेरह (पनरमणुएसु) और मनुष्यको पन्द्रेही योग होते है (विगलेचउ) विकलेंद्रिको चार (पणवाए) वाउकायको पांच (जोगतियंथावरे-होइ) और स्थावरको तीन योग होते है ॥ इति चोवीश दंडकके योगद्वार १४ ॥ २१ ॥

उवओगामणुएसु बारसनवनिरयतिरियदेवेसु । विगलदुगेपणछक्कं चउरिंदिसुथावरेतियगं ॥ २२ ॥

(उवओगामणुएसु) मनुष्यके विषे उपयोग (बारस) बारह होते है (नवनिरयतिरियदेवेसु) नारक तिर्यंच और

देवोंको नव उपयोग होते है (विगलदुगेपण) दो विकलेंद्रिको पांच (छक्कं) छ (चउरिंदिसु) चौरेन्द्रिको (थावरेति-यगं) और स्थावरको तीन उपयोग होते है ॥ इति चोवीश दंडकमें उपयोगद्वार १५ ॥ २२ ॥

संखमसंखासमए गब्भयतिरिविगलनारयसुराय । मणुआनियमासंखा वणऽणंताथावरअसंखा ॥२३॥

(संखमसंखासमए) एक समयके विषे संख्याता और असंख्याता (गब्भयतिरि) गर्भजतिर्यंच (विगलनारयसुराय) विकलेंद्रि नारक और देवता उत्पन्न होते है (मणुआनियमासंखा) मनुष्योंनिश्चयकरके संख्याता उत्पन्न होते है (वणऽणंता) वनस्पतिकाय अनन्ता (थावरअसंखा) और स्थावर असंख्याता उत्पन्न होते है ॥ २३ ॥

असन्निनरअसंखा जहउववाओतहेवचवणेवि । बावीससगतिदसवास सहस्सउक्किट्ठपुढवाई ॥ २४ ॥

(असन्निनरअसंखा) असन्नी मनुष्यो असंख्याता उत्पन्न होते है (जहउववाओ) जैसेही उत्पन्न होते है (तहेवचव-णेवि) तैसेही चवते है ॥ इति चौवीश दंडकमें उपपातद्वार तथा चवणद्वार (बावीससगतिदसवाससहस्स) बावीस हजार सात हजार तिन हजार और दश हजार वर्षको आयु (उक्किट्ठपुढवाई) उत्कृष्टो अनुक्रमे पृथ्वीकायादि इस लिये पृथ्वीकाय अप्काय वाउकाय और वनस्पतिकायका जान लेना ॥ २४ ॥

तिदिणग्गितिपल्लाऊ नरतिरिसुरनिरयसागरतितीसा । वंतरपल्लंजोइस वरिसलक्खाहिअंपलिअं॥२५॥

(तिदिणग्गि) तिन अहोरात्रिका आयु अग्निकायका (तिपल्लाऊ) तीन पल्योपमका आयु (नरतिरि) मनुष्य और

तिर्यंचका (सुरनिरयसागरतितीसा) देवता और नारकका उत्कृष्ट आयु तेतीस सागरोपमका होता है (वंतरपलं) व्यंतरका आयु एक पल्योपमका (जोइस) और ज्योतिषी देवोंका आयु (वरिसलक्खाहिअंपलिअं) एकलाख वर्ष अधिक एक पल्योपमका होता है ॥ २५ ॥

असुराणअहियअयरं देसूणदुपल्लयंनवनिकाए । बारसवासुणपणदिण छम्मासउक्किट्ठविगलाऊ ॥२६॥

(असुराणअहियअयरं) असुरकुमारनिकायका आयु एक सागरोपमसें कुछ अधिक होता है (देसूणदुपल्लयंनवनिकाए) शेषनवनिकायका आयु देसेऊणा दो पल्योपमका होता है (बारसवासुणपणदिण) बेइंद्रीका बारह वर्ष और तेइंद्रीका गुण पचास दिन (छम्मासउक्किट्ठविगलाऊ) चउरिंद्रीका छ मासका उत्कृष्ट आयु अनुक्रमसें समज लेना ॥ २६ ॥

पुढवाइदसपयाणं अंतमुहुत्तंजहन्नआउठिई । दससहसवरिसठिइआ भवणाहिवनिरयवंतरिया ॥२७॥

(पुढवाइदसपयाणं) पृथ्वीकायादि दशपदकी पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रि पंचेंद्रितिर्यंच और मनुष्यका (अंतमुहुत्तंजहन्नआउठिई) जघन्यसें आयुकी स्थिति अंतर्मूहुर्त्तकी कही है (दससहसवरिसठिइआ) दश हजार वर्षकी आयुस्थिति जघन्यसें (भवणाहिवनिरयवंतरिया) दश भुवनपति नारक और व्यंतरीककी कही है ॥ २७ ॥

वेमाणियजोइसिया पल्लतयट्ठंसआउआहुंति । सुरनरतिरिनिरएसु छपज्जत्तीथावरेचउगं ॥ २८ ॥

(वेमाणियजोइसिया) वैमानिक और ज्योतिषीका आयु जघन्यसें (पल्लतयट्ठंसआउआहुंति) एक पल्योपमके आठमे

भागे होता है १८ ॥ इति चौवीश दंडके उत्कृष्ट और जघन्यसें स्थितिद्वार कहा ॥ (सुरनरतिरिनिरएसु) देवता मनुष्य तिर्यंच और नारकके विषे (छपज्जत्ती) छही पर्याप्ति होति है (थावरेचउगं) और पांच स्थावरके विषे प्रथमकी चार पर्याप्ति है ॥२८॥

विगलेपंचपज्जत्ती छद्दिसिआहारहोइसव्वेसिं । पणगाइपएभयणा अहसन्नितियंभणिस्सामि ॥ २९ ॥

(विगलेपंचपज्जत्ती) तीनो विकलेंद्रिके विषे प्रथमकी पांच पर्याप्ति होति है ॥१९॥ इति चौवीश दंडकमें पर्याप्तिद्वार ॥ (छद्दिसिआहारहोइसव्वेसिं) सब जीवोंके आश्रे छही दिशीका आहार जान लेना (पणगाइपएभयणा) इतना विशेषकि पृथ्वी कायादि पांचोही स्थावर पदके विषे भजना है इस लिए छएदिशीका आहार होवे भी सही और तीन च्यार पांच दिशीका भी होवे २० ॥ इति चौवीश दंडके छदिशी आहारद्वार ॥ (अहसन्नितियंभणिस्सामि) अब तीन संज्ञाद्वार कहता हुं ॥ २९ ॥

चउविहसुरतिरिएसु निरएसु अ दीहकालिगीसन्ना । विगलेहेउवएसा सन्नारहियाथिरासव्वे ॥ ३० ॥

(चउविहसुरतिरिएसु) चार प्रकारके देवोंके विषे तथा तिर्यंच (निरएसुअदीहकालिगीसन्ना) और नारकके विषे दीर्घ कालकी संज्ञा होति है (विगलेहेउवएसा) और विकलेंद्रिके विषे हितोपदेशकीसंज्ञा होति हे (सन्नारहियाथिरासव्वे) और स्थावरो सबही संज्ञा रहित होते है ॥ ३० ॥

मणुआणदीहकालिय दिट्ठीवाओवएसिआकेवि । पज्जपणतिरिमणुअच्चिय चउविहदेवेसुगच्छंति ॥३१॥

(मणुआणदीहकालिय) मनुष्यको दीर्घकालकी संज्ञा होति है (दिठीवाओवएसिआकेवि) कितनेक आचार्य मनुष्यको दृष्टिवादोपदेशकी २ संज्ञा भी कहते है ॥ इति चोवीशदंडकमें तीन प्रकारकी संज्ञाद्वार ॥ (पज्जपणतिरिमणुअच्चिय) पर्याप्ता पंचेद्रितिर्यंच और मनुष्य निश्चय करके (चउविहदेवेसुगच्छंति) चार प्रकारके देवोंके विषे जाते है ३१

संखाउपज्जपणिंदि तिरियनरेसुतहेवपज्जत्ते । भूदगपत्तेयवणे एएसुच्चियसुरागमणं ॥ ३२ ॥

(संखाउपज्जपणिंदि) संख्याते आयुवाले पर्याप्तापंचेन्द्री (तिरियनरेसुतहेवपज्जत्ते) तिर्यंच और मनुष्यके विषे तेसेही पर्याप्ता (भूदगपत्तेयवणे) पृथ्वीकाय अपकाय और प्रत्येक वनस्पतिकाय (एएसुच्चिय) इस पांचोदंडकके विषे निश्चय करके (सुरागमणं) देवता उत्पन्न होते है ॥ ३२ ॥

पज्जत्तसंखगप्भय तिरियनरानिरयसत्तगेजंति । निरयउवट्टाएएसु उववज्जंतिनसेसेसु ॥ ३३ ॥

(पज्जत्तसंखगप्भय) संख्याता वर्षके आयुवाले पर्याप्ते गर्भज (तिरियनरा) तिर्यंच और मनुष्य (निरयसत्तगेजंति) यह दोनोही सातोही नरकके विषे जाते है (निरयउवट्टा) नरकसे निकले हुवे जीवो (एएसु) यह दो दंडकमे उववज्जंति उपजें है (नसेसेसु) शेष दंडकोंके विषे उत्पन्न नही होते है ॥ ३३ ॥

पुढवीआउवणस्सइ मज्झेनारयविवज्जियाजीवा । सव्वेउववज्जंति नियनियकम्माणुमाणेणं ॥ ३४ ॥

(पुढवीआउवणस्सइ) पृथ्वीकाय अप्काय और वनस्पतिकायके (मज्झे) विषे (नारयविवज्जियाजीवा) नारकके जीवोंको वर्जके (सव्वेउववज्जंति) और सर्व जीवो उत्पन्न होते है (नियनियकम्माणुमाणेणं) अपने अपने कर्मानुसारे ॥ २४ ॥

पुढवाइदसपएसु, पुढवीआउवणस्सईजंति । पुढवाइदसपएहिय, तेउवाउसुउववाओ ॥ २५ ॥

(पुढवाइदसपएसु) पृथ्वीकायादि दश पदके विषे (पुढवीआउवणस्सईजंति) पृथ्वीकाय अप्पकाय और वनस्पतिकायके जीवो सब होते है (पुढवाइदसपएहिय) और पृथ्वी कायादि दश पदमेंसे निकले हुये जीवों (तेउवाउसुउववाओ) तेउकाय और वाउकायके विषे उत्पन्न होते है ॥ २५ ॥

तेउवाउगमणं, पुढवीपमुहम्मिहोइपयनवगे । पुढवाइठाणदसगं, विगलाइंतियतहिंजंति ॥ २६ ॥

(तेउवाउगमणं) तेउकाय और वाउकायकाजाना (पुढवीपमुहम्मिहोइपयनवगे) पृथ्वीकायादि नवपदके विषे होता है (पुढवाइठाणदसगं) पृथ्वीकायादि दश स्थानकके जीवों (विगलाइंतियतहिंजंति) तीन विकलेन्द्रिमें उत्पन्न होवे तैसे जावे है ॥ २६ ॥

गमणागमणंगब्भय, तिरिआणंसयलजीवठाणेसु । सव्वत्थजंतिमणुआ, तेउवाऊहिंनोजंति ॥ २७ ॥

(गमणागमणंगब्भयतिरिआणंसयलजीवठाणेसु) गर्भजतिर्यंचका जाना आना सब दंडकोके विषे होता है (सव्वत्थ-

जंतिमणुआ) और मनुष्योंकाभी जाना सब दंडकोके विषे होता है (तेउवाऊहिंनोजंति) परंतु तेउकाय और वाउकायसें नही आते ॥ २७ ॥

वेयतियतिरिनरेसु, इत्थीपुरिसोयचउविहसुरेसु । थिरविगलनारएसु, नपुंसवेओहवइएगो ॥ ३८ ॥

(वेयतियतिरिनरेसु) तीन वेद तिर्यंच और मनुष्यको होते है (इत्थीपुरिसोयचउविहसुरेसु) और चार प्रकारके देवोके विषे स्त्री वेद तथा पुरुष वेद होता है (थिरबिगलनारएसु) और पांच स्थावर विकलेन्द्रि और नारकके विषे (नपुंसवेओहवइएगो) एक नपुंसक वेदही होता है ॥ ३८ ॥

पज्जमणुबायरग्गी, वेमाणियभवणनिरयवंतरिया । जोइसचउपणतिरिया, बेइंदितिइंदिभूआउ ॥३९॥

(पज्जमणुवायरग्गी) पर्याप्त मनुष्य और बादर अग्निकाय (वेमाणियभवणनिरयवंतरिया) वैमानिक भुवनपति नारक और व्यंतर (जोइसचउपणतिरिया) ज्योतिषि चौरिन्द्रि और पंचेन्द्रि तिर्यंच (बेइंदितिइंदिभूआउ) तथा दोइन्द्रि तेइन्द्रि पृथ्वीकाय और अप्पकाय ॥ ३९ ॥

वाऊवणस्सईचिय, अहियाअहियाकमेणमेहुंति । सवेविइमेभावा, जिणामएणंतसोपत्ता ॥ ४० ॥

(वाऊवणस्सईचिय) वाउकाय और वनस्पतिकाय यह सब निश्चय करके (अहियाअहियाकमेणमेहुंति) अनुक्रमे

एक एकसे अधिक होते है (सव्वेविइमेभावा) यह सबही भी भाव (जिणामएणंतसोपत्ता) हे जिनेश्वर देव मैंने अनंती वेर पाया है ॥ ४० ॥

संपइतुह्मंभत्तस्स, दंडगपयभमणभग्गहियस्स । दंडतियविरइसुलहं, लहुममदिंतुमुक्खपयं ॥ ४१ ॥

(संपइतुह्मंभत्तस्सदंडगपयभमणभग्गहियस्स) अब चौवीश दंडकोके स्थानकके विषे भमनेसे (निवृत्त) भागा हुवा है मन जिसका ऐसा तुमारा भक्त एसा मुझको (दंडतियविरइसुलहं) मन वचन और काया यह तीनदंडका विरामसे सुलभ एसो (लहुममदिंतुमुक्खपयं) मोक्ष पद मेरेकों जलदी देवो ॥ ४१ ॥

सिरिजिणहंसमुणीसर, रज्जेसिरिधवलचंदसीसेण । गजसारेणलिहिया, एसाविन्नत्तीअप्पहिया ॥४२॥

(सिरिजिणहंसमुणीसर) श्री जिनहंसमुनीश्वरके (रज्जेसिरिधवलचंदसीसेण) राज्यके समय श्री धवलचंद्रउपाध्यायके शिष्य (गजसारेणलिहिया) गजसार मुनिने लिखा है (एसाविन्नत्तीअप्पहिया) यह विज्ञप्ति अपनी आत्माके हितके अर्थे ॥ ४२ ॥

॥ इति हिन्दी अनुवादसहितं दंडक प्रकरणं समाप्तम् ॥

वन्दे जिनवरम् ।

अथ लघु-संघयणि-प्रकरणम् ।

गाहा ।

नमिय जिणं सवन्नुं, जगपुज्जं जगगुरुं महावीरं । जंबुद्दीवपयत्थे, वुच्छंसुत्तासपरहेउं ॥ १ ॥

अर्थ—(जगपुज्जं) तीन जगत् के पुज्य (जगगुरुं) तीन जगत्के गुरु, ऐसे (सवन्न) सर्वज्ञ (जिणं) श्री जिनेश्वर (महावीरं) महावीर स्वामीकों (नमिय) नमस्कार करके, (जंबुदीव) जंबुद्वीपके अंदर रहे हुए शास्वते, (पयत्थे) पदार्थ उनको (सुत्ता) सुत्रसें जाणकर (सपर हेउं) स्वपर हितार्थ (वुच्छं) कहुंगा ॥ १ ॥

भावार्थ—तीन जगत्के पुज्य और गुरु ऐसे सर्वज्ञ श्री महावीरस्वामिको नमस्कारकर जंबुद्वीपमें रहे शास्वते पदार्थ उनको स्वपर हितार्थ कहुंगा ॥ १ ॥

खंडा जोयणवासा, पव्वय कुडाय तित्थ सेढीओ। विजय द्दह सलिलाओ, पिंडेसिं होइ संघयणी॥२॥

अर्थ—प्रथम भरतक्षेत्रवत् इस जंबुद्वीपमें कितने (खंडा) खंडत्रा है? द्वितीय (जोयण) योजनका प्रमाण, त्रितीय भरतादिक (वास) वाशक्षेत्र कितने है? चोथा वैताढ्यादिक (पव्वय) पर्वत किते है? पांचमा उन पर्वतोंपर (कुडाय) कूट (शिखर) कितने है? छठ्ठा मागधादिक (तित्थ) तीर्थ कितने है? सातमा, वैताढ्यादिक पर्वतोपरि रहिहुई, विद्याधरो व आभियोगिक देवोंकी (सेढीओ) श्रेणियें कितनी है? आठमें कच्छादिक (विजय) विजय कितना है? नवमें पद्मद्रहादि (द्दह) द्रह कितने है? दशमें गङ्गासिंध्वादि (सलिलाओ) नदीयें कितनी है? एवम् इसी दशो द्वारोंको (पिंडेसि) इकठ्ठायाने समुदायके विवरणकरके यह (संघयणी) संग्रहिणी नामका प्रकरण (होइ) होता है ॥ २ ॥

भावार्थ—पहेला द्वारमें भरत क्षेत्रके मुत्ताविक जंबुद्वीपमें कितने खंड है? दुसरेमें योजनका प्रमाण. तीसरेमें वासक्षेत्र. चोथेमें पर्वत. पांचमें उन पर्वतोपर शिखर. छठ्ठेमें तीर्थ. सातमें श्रेणियोंकी संख्या. आठमें विजय. नवमे द्रह, दशमें नदिये. इनही दशोद्वारोकरके यह संघयणी प्रकरण होता है ॥ २ ॥

णउअ सयं खंडाणं, भरह पमाणेण भाइए लक्खे। अहवा णउयसयगुणं, भरह पमाणं हवइ लक्खं॥३॥

अर्थ—(लक्खे) एकलाख योजनका जंबुद्वीप उसको (भरहपमाणेण) भरतक्षेत्रके प्रमाणसें, "याने पांचसो छवीश योजन छकलासे" (भाइये) भांगाकार करें तो (णउआ सयं खंडाणी) भरतक्षेत्रके मुताविक "एकसो और निवे"

खंडवा होते है, (अहवा) या (णउयसय) एकसो और नवे क्षेत्रोको (भरहपमाणेणं) भरतक्षेत्रके प्रमाणसे (गुणं) गुणाकार करें तो (लक्खं) एक लाख योजनका यह जंबुद्वीप (हवइ) होता है ॥ ३ ॥

भावार्थ—एक लाख योजनके जंबुद्वीपको, पांचसो छवीश योजन छ कलासें भागें तो भरतक्षेत्रवत् एकसो नवे क्षेत्र (भाग) इस जंबुद्वीपमें होते है, इसी एकसो नवेको पांचसो छवीश योजन छकलासे गुणाकार करें तो एक लाखका क्षेत्रफल होता है ॥ ३ ॥

अहविगखंडे भरहे, दो हिमवंते अ हेमवइ चउरो। अट्ठमहा हिमवंते, सोलसखंडाइं हरिवासे॥ ४॥

अर्थ—(अहव) अर्थात् (इग खंडे भरहे) एकखंडवा भरतक्षेत्रका (दो हिमवंते) दो खंडवा हिमवंत पर्वतके (अ) पुनः (चउरो) चार खंडवा (हेमवइ) हेमवंत करके युगलियांके क्षेत्रका (अट्ठ) आठ खंडवा (महाहिमवंते) महा-हिमवंत पर्वतके (सोलसखंडाइं) सोलह खंडवा (हरिवासे) हरिवर्ष करके युगलियांके क्षेत्रका ॥ ४ ॥

भावार्थ—एक खंडवा भाग भरतक्षेत्र दो खंडवा भाग चुलहिमवंत चार खंडवा भाग हेमवंत, आठ खंडवा भाग महाहिमवंत शोले खंडवा भाग हरिवर्ष, एवं इकतीश खंडवा इस गाथासें जाणना ॥ शेष आगे ॥ ४ ॥

बत्तीसं पुण निसढे, मिलिया तेसट्ठि बीय पासेवि। चउसट्ठि ओ विदेहे, तिरासि पिंडेइ णउयसयं॥५॥

अर्थ—(पुण) फिर (बत्तीसं) बत्तीस खंडवा प्रमाण (निसढे) निषध पर्वत, यह सर्व (मिलिया) मिलानेंसे (तेसट्ठि)

तेंसठ खंडवा होते है, "इसीतरह" (बीयपासेवि) दुसरी तर्फभी "एक खंडवा एरवत क्षेत्रका दो शिखरी पर्वतके चार ऐरण्यवत क्षेत्रके आठ रूपी पर्वतके, शोला रम्यक क्षेत्रके बत्तीस नीलवंत करके तीसरा वर्ष धर पर्वतके, एवं यह तेंसठ खंडवा तथा (चउसट्ठिओ) चौसठ खंडवा (विदेहे) महाविदेह क्षेत्रके यह सर्व (तिरासि) तीनो राशीके खंडवा (पिंडेइ) मिलानेसें (णउयसमं) एकसोने निवे खंडवा होते है इति प्रथम द्वारम् ॥ ५ ॥

भावार्थ—बत्तीश खंडवा भाग निषध पर्वत इसके साथ ऊपरकी गाथाके खंडवा भाग मिलानेसें (तेसठ) खंडवा भाग होते है ॥ इसीतरह, दुसरी तर्फ १ खंड भाग एरवत २ खंड भाग शिखरी पर्वत ४ क्षेत्र भाग ऐरण्यवत, आठ खंडवा भाग, रूपी पर्वत १६ खंडवा भाग, रम्यक क्षेत्र ३२ खंडवा भाग नीलवंत और ६४ खंडवा भाग महाविदेह इतनासबकी गिणना की जाय तो, एकसो निवे (१९०) खंडवा होते है ॥ ५ ॥

जोयण परिमाणाइं, समचउरंसाइं इत्थ खंडाइं । लरकस्सय परिहीए, तप्पाय गुणेय हुंतेव ॥ ६ ॥

अर्थ—(इत्थ) यहां जंबुद्वीपके अन्दर (जोयण परिमाणाइं) एक योजनके प्रमाणवाले (समचउरंसाइं) समचतुरस्र (खंडाइं) खंडवा कितने होंगे ? उसकी रीति कहते हैं ॥

(लक्खस्स) एक लाख योजनकी (परिहीए) परिधिका जो अंक आय उसको (तप्पाय) तत्पाद याने क्षेत्रके चौथे हिस्सेसे जैसें लाख योजनके जंबुद्वीपका चोथाहिस्सा २५ हजार योजन होता है. उससें (गुणेय) गुणाकार करणेपर गणितपद(क्षेत्रफल)का प्रमाण (हुंतेव) निश्चय होता है ॥ ६ ॥

भावार्थ—लाख योजनके जंबुद्वीपमें एक योजन सम चतुरस्र कितनें खंडवे होंगे? उसका क्रम आगे दिखाते है ॥
एक लाख योजनकी परिधीका जो अंक आय उसको मूल क्षेत्रके चोथे भागसें गुणा करणेपर "क्षेत्रफल बनता है" ॥ ६ ॥

विक्खंभवग्गदहगुण, करणी वट्टस्स परिरओ होई। विक्खंभपायगुणिओ, परिरओ तस्स गणियपयं ॥७॥

अर्थ—जंबुद्वीपका (विक्खंभ) विष्कंभ याने गोल क्षेत्रका विस्तार [प्रमाण] जितना हो उसका (वग्ग) वर्ग याने जितना विष्कंभ हो उनको उतनेसेंहि गुणा करे, वाद उस वर्गके अंकोंको (दह गुण) दशगुणा करनेंसे जो अंक आये उसको "विसमसम पवइवग्गो" इस बृहद् क्षेत्र समासकी गाथाके अन्दर जो (करणी) करणेंकी आम्नाय कही है उसके मुताबिक उन अंकका मूल सोधा जाय तब (वट्टस्स) गोल क्षेत्रकी (परिरओ) परिधि (होइ) होती है और वाद उस (परिरओ) परिधिके योजनका जो अंक आय उसको (विक्खंभ) विष्कंभ योजनके (पायगुणिओ) पादसे याने चौथे हिस्सेके अंकोंसे गुणाकरे तब (तस्सगणियपयं) उसका गणितपद याने क्षेत्रफल होता है ॥ ७ ॥

भावार्थ—जिस क्षेत्रका जितना विष्कम्भ हो. उनको उतोसें गुणाकरणेपर वर्ग बनता है. उस वर्गको दश गुणाकर "बृहद् क्षेत्र समासमें बताये" हुएक्रमसें उस विष्कंभ क्षेत्रको परिधिनिकाले वाद उस परिधिके अंकोंको विष्कंभके चतुर्थांश अंकोंसें गुणाकरणेपर गणितपद याने क्षेत्रफल बनता है ॥ ७ ॥

परिही तिलक्खसोलस, सहस्स दोसय सत्तवीस हिया।
कोसतिग अट्ठावीसं, धणुसय तेरंगुलद्धहियं ॥ ८ ॥

अर्थ—जंबुद्वीपका विष्कंभ एक लाख योजनका है. उसकी (परिही) परिधी (तिलक्ख सोलस सहस्स) तीन लाख शोळे हजार (दोसय सत्तवीस हिया) दोसो सत्ताईश योजन अधिक (कोसतिग) तीन कोश (सय) एकसो (अट्ठावीसं) अठाइस (धणु) धनुष्य और (तेरंगुलद्धहियं) सार्धत्रयोदशांगुल जंबुद्वीपकी जानना ॥ ८ ॥

(परिशिष्ट) इस परिधीको जंबुद्वीपके विष्कंभ प्रमाणसे चतुर्थांश निकाल उससें गुणाकरे तब जंबुद्वीपका गणितपद (क्षेत्रफल) होता है उसकी संख्या नीचेकी गाथासें दिखाते है ॥

भावार्थ—जंबुद्वीपका विष्कंभ एक लाख योजनका है. जिसकी परिधी "तीन लाख शोळे हजार दोसो सत्ताईश योजन तीन कोष". एकसो अट्ठाईश धनुष साढातेरा अंगुल (३१६२२७) योजन (३) कोष (१२८) धनुष्य (१३॥) अंगुल) होती है ॥ ८ ॥

सत्तेवय कोडिसया, णउआ छप्पन्नसयसहस्साइं। चउणउयं च सहस्सा, सयंदिवड्ढं च साहियं ॥ ९ ॥

अर्थ—(य) जो (सत्तेव) सात (सया) शतानि (सो) (कोडी) क्रोडोपरी (णउआ) निवे क्रोड "याने सातसें

निबे क्रोड" (छपन्नसय) छप्पनशो (सहस्साइं) सहस्र "याने छपन्नलाख" (च) पुनः (चउणउयं सहस्सा) चोराणुं हजार (सयं दिवड्ढं) देढसोसें (साहियं) साधिक ॥ ९ ॥

भावार्थ—सातसो निबे क्रोड, छप्पन लाख चोराणुं हजार, देढ सो समचतुरस्र योजनसें अधिक ॥ ९ ॥

गाउअ मेहगंपन्नरस, धणुसया तह धणूणि पन्नरस्स। सट्ठिंच अंगुलाइं, जंबुद्दीवस्सगणियपयं ॥१०॥ (युग्मम्)

अर्थ—(गाउअमेगं) एक कोश (पन्नरस धणुसया) पंद्रहसों धनुष्योपरी (धणुणिपन्नरस्स) पनराधनुष्य (च) पुनः (सट्ठि अंगुलाइं) साठ अंगुल (जंबुद्दीवस्स) जंबुद्वीपका (गणिमययं) गणितपद जाणना ॥ इति द्वितीयद्वारम् ॥ १० ॥

एक कोष पनरेसो पनरा धनुष, साठ अंगुल यह एक लाख जोजनके जंबुद्वीपका गणितपद (क्षेत्रफल) जानना. अंकसें गणित (७९०, ५६, ९४, १५०) योजन. (१) कोष (१५१५) धनुष्य (६०) अंगुलेति ज्ञेयम् ॥ १० ॥

भरहाइ सत्त वासा, वियड्ढ चउ चउरतीस वट्टियरे। सोलसवक्खारगिरि, दो चित्त विचित्त दो जमगा ११

अर्थ—(भरहाइ सत्तवासा) भरतादि सात वास क्षेत्र. "उसके नाम" १ भरत २ हेमवत ३ हरिवर्ष ४ महाविदेह ५ रम्यक ६ एरण्यवत ७ एरवत ॥ इति तृतीयद्वारम् ॥

"चतुर्थ निश्चल शैलद्वार"

देवकुरु उत्तरकुरु यह दो युगलियांके क्षेत्र छोडकर, शेष च्यार क्षेत्रोंके अंदर (वियड्ढ चउवट्ट) वर्तुल वैताढ्य च्यार है. फिर (इयरे) इन वैताढ्योंसे इतर (चउरतीस) चउतीस लम्बे वैताढ्य पर्वत है, पुनः (सोलसवक्खारगिरि) शोले वक्खारागिरि "विजयांके अंतरमे है" फिर (चित्त विचित्त) १ चित्त २ विचित्त यह दो पर्वत और है. इतर दो पर्वत, (जमगा) एक जमग दुसरा समग ॥ ११ ॥

भावार्थ—भरत १ हेमवत २ हरिवर्ष ३ महाविदेह ४ रम्यक ५ हिरण्यवत ६ एरवत ७ यह सातवारा क्षेत्र है ॥

देवकुरु, उत्तरकुरु इन दोनो क्षेत्रोंको छोड शेष च्यार क्षेत्रोंमें वर्तुल वैताढ्य एक एक है. इनसें भिन्न चोतीश लम्बे, वैताढ्य, शोले वक्खारा गिरि, दो. चित्त १ विचित्त २ दो. जमग १ और समग २ यह सब मिल अठ्ठावन शास्वते पर्वत, शेष आगे ॥ ११ ॥

दोसय कणय गिरीणं, चउ गयदंताय तह सुमेरुय । छवासहरापिंडे, एगुणसत्तरिसयादुन्नी ॥ १२॥

अर्थ—देवकुरु और उत्तरकुरु इन प्रत्येक क्षेत्रमें पांच २ द्रह है. और एकैक द्रहके उभयतर्फ दश २ कंचनगिरि है, अतः इन सबको मिलानेसै (दोसयकणयगिरीणं) दोसो (२००) कंचनगिरि होते है, (च) फिर (चउगयदंता) च्यार गजदंते पर्वत है. (तह) तैसे (सुमेरु) एक सुमेरु (च) और इनके दोनो तर्फे, तीन २ मिलकर (छ) छ (वासहरा) वर्षधर, पर्वत है, इन सबको (पिंडे) इकठ्ठाकरणेसै (सयादुन्नी) दोसो (एगुणसत्तरि) एक कम सित्तर पर्वत होते है ॥ १२ ॥

भावार्थ—देवकुरु उत्तरकुरु इन प्रत्येक क्षेत्रमें पांच २ द्रह है, और एक २ द्रहके दोनो तर्फ दश २ कंचन गिरी है. इससें इन दोनो क्षेत्रोंमें दोसो पर्वतोंकी संख्या हुई. फिर च्यार गजदंत पर्वत एक मेरु गिरी इन मेरु गिरीके दोनो तर्फ तीन २ वर्षधर पर्वत. इन सबको मिलानेसें दोसो इग्यारा (२११) पर्वत ए इसके साथ पूर्वके (५८) मिलानेसें दोसो एक कम सित्तर (२६९) शास्वते पर्वत इस जंबुद्वीपमें है ॥ १२ ॥

सोलस वक्खारेसु, चउ चउ कूडाय हुंति पत्तेयं। सोमणस गंधमायण, सत्तट्ठय रुप्पि महाहिमवे ॥१३॥

अर्थ—(सोलसवक्खारेसु) शोला वक्षस्कार पर्वतांके अंदर (पत्तेयं) प्रत्येकपर (चउचउकूडा) च्यार च्यार शिखर (हुंति) है, यह शोले पर्वतांपर सर्व चोसठ शिखर हुए. फिर (सोमणस गंधमायण) एक सौमनस द्वितीय गंधमादन इन प्रत्येक गिरिपर (सत्ते) सात सात कूट हैं. (रुप्पि महाहिमवे) रूपी और महाहिमवंत इन दोनो पर्वतोंपर (अट्ठय) आठ आठ कूट है, एवं ९४ कूट (शिखर हुए) ॥ १३ ॥

भावार्थ—शोले वक्षस्कार पर्वतांके प्रत्येकपर च्यार २ कूट होनेसें, चोसठ कूट, फिर सोमनस और गंधमादन इन दोनोंपर सात २ कूट होनेसे चवदा व रूपी और महाहिमवंत इन दोनोंपर आठ २ कूट होनेसे शोला. यह सब मिलानेसे चोराणु (९४) कूट होते है ॥ १३ ॥

चउतीस वियड्ढेसु, विज्जुप्पह निसढ नीलवंतेसु। तह मालवंत सुरगिरि, नव नव कूडाइं पत्तेयं ॥१४॥

अर्थ—(चउतीस वियङ्केसु) वैताढ्यनामके चोतीश पर्वतांपर, व (विज्जुप्पह) विद्युत् प्रभ नामका गजदंत गिरि तथा (निसढ) निषध गिरि तथा (नीलवंतेसु) नीलवंत गिरि (तह) तेसेहि (मालवंत) माल्यवंत नामका गजदंत गिरितथा (सुरगिरि) मेरुगिरि, यह एक कम चालीश पर्वतांपर (पत्तेयं) प्रत्येके २ (नव नव कूडाइं) नव नव कूट है ॥ एवं पूर्वके और यह मिलकर (४४५) कूट हुए ॥ १४ ॥

भावार्थ—चोतीश लम्बे वैताढ्य व एक विद्युत्प्रभ, दुसरा निषध, तीसरा नीलवंत, चोथा माल्यवंत पांचमा सुमेरु इन उन चालीश पर्वतांपर, नव २ कूट होनेसे तीनसो इकावन कूट हुए, और पूर्वके मिलानेसे (४४५) कूट होते है ॥ १४ ॥

हिम सिहरिसु इक्कारस, इय इगसट्ठि गिरीसु कूडाणं। एगत्ते सवधणं, सय चउरो सत्तसट्ठीयं ॥१५॥

अर्थ—(हिम) हिमवंत गिरितथा (सिहरिसु) शिखरी पर्वत, इन प्रत्येकपर (इक्कारस) इग्यारा २ कूट है, (इय) यह (इगसट्ठि गिरीसु) सर्व इगसठ पर्वतोंपर जो (कूडाणं) कुट हैं उसको (एगत्ते) एकत्व करणेसे (सवधणं) सर्व संख्या (सयचउरो) च्यारसे (सत्तसट्ठीयं) सडसठ कूट (शिखर) होते हैं ॥ १५ ॥

भावार्थ—हिमवंत और शिखरी इन दोनों पर्वतोंपर इग्यारा २ कूट है, एवं सर्व इगसठ पर्वतांपर च्यारसो सडसठ (४६७) कूट होते है ॥ १५ ॥

चउसत्त अट्ठ नवगे, गारसकूडेहिं गुणह जह संखं। सोलस दुदु गुणयालं, दुवेयसगसट्ठि सय चउरो ॥१६॥

अर्थ—(सोलस) षट्दश पर्वतोंके (चउ) च्यार च्यार कूट गिननेसें चोसठ होते है ॥ (दु) दो पर्वतोंके (सत्त) सात २ कूट गिननेसे चवदे होते है. (दु) और दो पर्वतोंके (अट्ठ) आठ २ कूट गिननेसे शोले होते है. (गुणयालं) एक कम चालीस पर्वतोंके (नवगे) नव २ कूट गिनते तीनसो इकावन (३५१) होते है. (दुवेय) दो पर्वतोंके (एगा- रस कूटेहिं) इग्यारा २ कूट गिननेसै बाबीस होते है. एवं पूर्वोक्त सर्व कूटें (गुणह) गुनतां (जहसंखं) यथासंख्यासै (सय चउरो सगसट्ठि) च्यारसे सडशठ (४६७) होते है ॥ १६ ॥

भावार्थ—शोलेपर च्यार २ के हिसाबसें चौसठ, दोपर सात २ के हिसाबसें चवदा, दोपर आठ २ के हिसाबसें शोला उन चालीसपर नव २ के हिसाबसें तीनसो इकावन दोपर इग्यारा २ के हिसाबसे बाबीस, एवं इगसठ पर्वतोंपर च्यारसे सडसठ (४६७) कूट जाणना ॥ १६ ॥

चउतीसंविजएसु, उसहकूडा अट्ठमेरु जंबुमि । अट्ठयदेवकुराइं, हरि कूड हरिस्सयसट्ठी ॥ १७ ॥

अर्थ—(चउतीसं विजएसु) चक्रवर्तिके चौतीस (३४) विजयमें एकैक (उसहकूडा) ऋषभकूट है, और (मेरु) मेरु पर्वतके व (जंबुमि) जंबु वृक्षके (अट्ठ) आठ २ कूट है, पुनः (देवकुराइं) देवकुरु अंदरभी (अट्ठ) आठ कूट

है, फिर शाल्मलि वृक्षके मध्यका (हरिकूड) हरिकूट, और (हरिस्सस) हरिसह ये दो कूट इन कूटांके साथ मिलाणेसे (सट्ठी) साठ भूमि कूट होते है ॥ पंचम कूट द्वार मिति ॥ १७ ॥

भावार्थ—चोतीश विजयके चोतीश ऋषभ कूट और एक मेरु पर्वत, दुसरा जंबुवृक्ष तीसरा देवकुरु इन तीनांके आठ २ भुमिकूट, फिर शाल्मलिवृक्षके बीच हरि कूट और हरिसह यह दो कूट, एवं भुमि कूटांकि संख्या साठ (६०) होती है ॥ १७ ॥

मागह वरदाम पभासं, तित्थविजएसु एरवय भरहे । चउतीसा तिहिंगुणिया, दुरुत्तरसयं तु तित्थाणं १८

अर्थ—(विजएसु) बत्तीस विजय, व (एरवय) ऐरवत, और (भरहे) भरतक्षेत्र, इन प्रत्येक चोत्तीश स्थानोके अन्दर, एक (मागह) मागध, दुसरा (वरदाम) वरदाम, तीसरा (पभासं) प्रभास, ये तीनो (तित्थ) तीर्थ है, अतः (चउतीसा) चउतीशको (तिहिं) तीनसें (गुणिया) गुणा करें तो (तु) फिर (दुरुत्तरसयं तित्थाणं) एकसो दो (१०२) तीर्थ होते है ॥ १८ ॥

भावार्थ—बत्तीशविजय और एक ऐरवत, एक भरत इन चोतीश क्षेत्रांमें एक मागध. दुसरा वरदाम तीसरा प्रभास यह तीन २ तीर्थ हरएक क्षेत्रमें होते है. अस्तु. एकसो दो (१०२) सबी तीर्थोंकी संख्या जानना ॥ १८ ॥

विज्जाहर अभिओगिय, सेढीओ दुन्निदुन्नि वेयड्ढे । इय चउगुण चउतीसा, छत्तीस सयं तु सेढीणं ॥१९॥

अर्थ—(वेयड्ढे) वेताढ्यके ऊपर, एक (विज्जाहर) विद्याधर और दुसरी (अभिओगिय) आभियोगिक देवांकी (दुन्निदुन्नि) दो दो (सेढीओ) श्रेणिये है. तब (इय) ये (चउतीसा) चोतीश दीर्घ (लम्बे) वेताढ्यांको (चउगुण) च्यार गुणा करणेसे (तु) फिर (छत्तीस सयं सेढीणं) एकसो छत्तीस श्रेणिये जंबुद्वीपमें होती है ॥ १९ ॥

भावार्थ—प्रत्येक लम्बे वैताढ्यांपर, विद्याधर और आभियोगिक देवांकी दो दो श्रेणिये है ॥ अतः प्रत्येकपर च्यार २ के हिसाबसै एकसो छत्तीश श्रेणिये होती है ॥ १९ ॥

चक्कीजेअव्वाइं, विजयाइं इत्थहुंति चउतीसा । महद्दह छ पउमाइ, कुरुसुदसगंति सोलसगं ॥ २० ॥

अर्थ—(चक्कीजे अव्वाइं) चक्कीजेलव्यानि, याने चक्रवर्त्ती जिन क्षेत्रको जीतकर उस्मे राज्य करे. एसे (विजयाइं) विजय (इत्थ) इस जंबुद्वीपमे "बत्तीस महाविदेह एक ऐरवत एक भरत यह मिलकर (चउतीसा) चउतीश (हुंति) है ॥

(पउमाइ) पद्मादिक महाद्रह (छ) षट् याने. १ पद्म, २ महापद्म, ३ तिगिच्छि, ४ केसरी, ५ पुंडरीक, ६ महापुण्डरीक, यह छ है, पुनः (कुरुसु) देवकुरु और उत्तरकुरु इन दोनो क्षेत्रोंमें पांच पांच द्रह है. यह मिलकर (दसगंति) दशद्रह हुए इसके साथ ऊपरके मिलानेसै (सोलसगं) सोलह (महद्दह) महान्द्रह इस जंबुद्वीपमें जाणना ॥ २० ॥

भावार्थ—जिस क्षेत्रको चक्रवर्त्ती जीतकर उस्मे राज्य करे उसको विजय कहते है, ऐसे विजय जंबुद्वीपमें, बत्तीश महाविदेह. एक ऐरवत. और एक भरत, यह चोतीश है ॥

पद्म १ महापद्म २ तिगिच्छि ३ केसरी ४ पुण्डरीक ५ और महापुण्डरीक ६ इन छके साथ देवकुरु ओर उत्तरकुरु इन क्षेत्रांके पांच २ द्रह मिलानेसै शोले महान्द्रह जंबुद्वीपमें जानना ॥ २० ॥

गंगा सिंधुरत्ता, रत्तवई चउनईओ पत्तेयं । चउदसहिं सहस्सेहिं, समग्ग वच्चंति जलहिम्मि ॥ २१ ॥

अर्थ—जंबुद्वीपके दक्षिण भरत क्षेत्रमें एक (गंगा) गंगा दुजी (सिंधु) सिन्धु यह दो बडी नदीये है, इसी तरह उत्तरकी तर्फ ऐरवत क्षेत्रमें एक (रत्ता) रक्ता दुजी (रत्तवई) रक्तवत्ती यह दो बडी नदीये है, इन (पत्तेयं) प्रत्येक २ (चउ) च्यार (नइओ) नदियोंके (चउदसहिं सहस्सेहिं) चउदा चउदा हजार नदियांका परिवार है, और इनकी (समग्ग) समग्र याने सर्व संख्या, छप्पन्न हजार नदियें होती है. और (जलहिम्मि) समुद्रके अंदर जाके (वच्चंति) मिलती है ॥ २१ ॥

भावार्थ—जंबुद्वीपके भरत क्षेत्र आस्री एक गंगा, दुजी सिन्धु, और ऐरवत क्षेत्र आस्री. एक रक्ता, दुजी रक्तवती, यह च्यारां नदिये अपने २ चउदह २ हजार नदियांके परिवारसें समुद्रमें जाके मिलती है ॥ २१ ॥

एवं अभिंतरिया, चउरो पुण अट्ठवीस सहस्सेहिं । पुणरवि छप्पन्नेहिं, सहस्सेहिंजंति चउसलिला ॥२२॥

अर्थ—(पुण)फिर (एवं) ऐसेहि एक हेमवत. दुजा ऐरण्यवत. इन दो युगलियांके (अभिंतरिया) अभ्यंतर क्षेत्रकी नदिये. एक रोहिता. दुजी रोहितांशा. तीजी रूपकूला. और चोथी सुवर्णकूला, यह (चउरो) च्यारों नदिये

अपनी २ (अट्ठवीस सहस्सेहिं) अट्ठाइस २ हजार नदियांके परिवार सहित समुद्रमें जाके मिलती है, (पुणरवि) पुनरपि एक हरिवर्ष दुजा रम्यक इन दो युगलियांके क्षेत्रकी. एक हरिकांता दुजी हरिसलिला, तीजी नरकांता. और चोथी नारिकांता. ये (चउसलिला) च्यारों नदिये अपनी २ (छप्पन्नेहिं सहस्सेहिं) छपन्न, २ हजार नदियांके परिवार सहित समुद्रमें (जंति) जाती है ॥ २२ ॥

भावार्थ—हेमवत और ऐरण्यवत इन दो युगलियांके अभ्यंतर क्षेत्रकी, रोहिता १ रोहितांशा २ रूपकूला ३ और सुवर्णकूला ४ यह च्यारों नदिये अपने २ अठाईश २ हजार नदियांके परिवारसें, व हरिवर्ष, और रम्यक इन दो क्षेत्रांकी हरिकांता १ हरिसलिला २ नरकंता ३ और नारिकांता ४ यह च्यारों नदियें अपने २ छप्पन २ हजार नदियांके परिवारसें समुद्रमें जाके मिलती है ॥ २२ ॥

कुरु मझे चउरासि, सहस्साइं तहय विजय सोलसेसु। बत्तीसाण नईणं, चउदस सहस्साइं पत्तेयं ॥२३॥

अर्थ—(कुरु मझे) देवकुरु और उत्तरकुरु इन दोनो क्षेत्रोंकी क्रमसें सीतोदा और सीता नदियोंमें छ छ अंतर नदिमें मिलती है. और उन छ छ नदियांका याने प्रत्येक छ नदियांका परिवार. (चउरासि सहस्साइं) चोराशी हजार नदिये है, (तहय) तैसेंहि, पश्चिम महाविदेहकी (विजय सोलसेसु) शोले विजयके अन्दर प्रत्येकमें, रक्ता और रक्तवती यह दो दो नदिये गिणनेसें (बत्तीसाण नईणं) बत्तीस नदियें होती है, और यह (पत्तेयं) प्रत्येक २ अपने २ (चउदस सहस्साइं) चउदह २ हजार नदियांके परिवारसै है ॥ २३ ॥

भावार्थ—उत्तरकुरु और देवकुरु इन दोनो क्षेत्रोंको क्रमसें, सीता और सीतौदा नदियांमें छ छ अंतर नदिये मिलती है. और प्रत्येक नदीका परिवार चउदह २ हजार नदियांका है ॥

फिर पश्चिम महाविदेहकी, शोले विजयांमें प्रत्येक विजयके अन्दर, रक्ता. और रक्तवती, इन नामकी दो नदिये होनेसे बतीश नदिमें होती है. और इन प्रत्येकका चौदह २ हजार नदियांका परिवार है ॥ २३ ॥

चउदस सहस्स गुणिया, अडतीस नइओ विजय मझिल्ला। सीओयाए निवडंति, तहय सीयाइं एमेव २४

अर्थ—(विजय मझिल्ला) महाविदेहकी पश्चिम शोले विजयके अन्दरकी ३२ व छ. अंतर नदिये यह मिलाकर, (अडतीस नइओ) अडतीस नदियांको (चउदस सहस्स गुणिया) चौदह हजारसै गुणा करते पांच लाख बत्तीस हजार (५३२०००) नदिये होती है. यह सर्व (सीओयाए) सीतौदाके अन्दर (निवडंति) मिलती है, (तहय) ऐसेही (सीयाइं) सीता नदीके अन्दरभी. (एमेव) एसेही याने पूर्व शोले विजयकी, और छ. उत्तरकुरु क्षेत्रकी अंतर नदिये यह सब मिलकर पूर्व संख्यावत् (५३२०००) नदिये मिलती हैं ॥ २४ ॥

भावार्थ—पश्चिम शोले विजयके अन्दरकी बत्तीस पश्चिम विदेहक्षेत्रकी अन्तरनदिये छ. इन अडतीश नदियांको चौद हजारसे गुणा करनेपर "पांच लाख बतीश हजार (५३२०००) नदियें होती है. और यह सब सीतोदा नदीमें जाके मिलती हैं" एसेहि पूर्वी शोले विजयकी बतीश और पूर्वविदेह क्षेत्रकी अन्तर छ. यह अडतीश नदियेंभी पूर्वोक्त हिसाबसे (५३२०००) के परिवारसे सीता नदीमें जाके मिलती है ॥ २४ ॥

सीया सीओया विय, बत्तीस सहस्स पंचलक्खेहिं। सव्वे चउदस लक्खा, छप्पन्न सहस्स मेलविया ॥२५॥

अर्थ—प्रत्येक (सीया सीओयाविय) सीता और सीतौदा यह दोनो नदिये. अपने २ (बत्तीस सहस्स पंचलक्खेहिं) पांच लाख और बत्तीस हजार नदियों सहीत समुद्रमे जाती है. एवं (सव्वे) सर्व इस जंबुद्वीपके अन्दर. (चउदस लक्खा) चौदह लाख (छप्पन्न सहस्स) छप्पन हजार नदियें (मेलविया) मिलानेसें होती है ॥ २५ ॥

भावार्थ—सीता और सीतौदा यह दोनो अपनी २ पांच २ लाख बतीश २ हजार नदियांके परिवारसे समुद्रमें जाके मिलती है ॥ एवं इस जंबुद्वीपमें सब नदियांकी संख्या चौदह लाख छप्पन हजार होती है ॥ २५ ॥

छज्जोयण सकोसे, गंगा सिंधुण वित्थरो मूले। दसगुणिओ पज्जंते, इय दुदु गुणणेण सेसाणं ॥ २६ ॥

अर्थ—(गंगा सिंधूण) गंगा और सिंधु इन दो नदियांका (मुले) मूलमें याने जहां पद्मद्रहसे निकली है वहां (सकोसे) कोशसहित (छ जोयण) छ योजन (विरथरो) विस्तार है ॥ बाद विस्तार बधते २ (दसगुणिओ) दशगुणायाने साढा बासठ योजन (पज्जंते) पर्यंत हो. समुद्रमें मिलती है. (इय) एसे (दुदु गुणणेण) दुगणी २ (सेसाणं) शेष पूर्वोक्त नदियोंका निर्गमन और प्रवेश अनुक्रमसें जानना ॥ २६ ॥

भावार्थ—जहांसे गंगा और सिंधु यह दोनो नदिये निकली है. वहां इसका सवा छ योजनका विस्तार है ॥ और

इन्हीका जहां समुद्रमें जाके मिली है वहां साढावासठयोजनका विस्तार है. इसी तरह इनसे दुणा २ क्रमवार शेष नदियांका निर्गमन और प्रवेश विस्तार जानना ॥ २६ ॥

जोयण सयमुच्चिट्ठा, कणगमया सिहरि चुल्लहिमवंता। रुप्पि महाहिमवंता, दुसउच्चारुप्प कणयमया २७॥

अर्थ—एक (सिहरि) शिखरी दुसरा (चुल्ल हिमवंता) लघु हिमवंत ये दो पर्वत (सय) एकसो (जोयण) योजन (मुच्चिठ्ठा) उंचे पनेमे, और (कणयमया) स्वर्णमयी है. पुनः एक (रुप्पि) रूपी दुसरा (महाहिमवंता) महाहिमवंत. ये दो पर्वत (दुसउच्चा) दोसो योजन उंचे पनेमें है, इसमे रूपी पर्वत (रुप्प) चांदीमयी और महाहिमवंत (कणयमया) स्वर्णमइ है ॥ २७ ॥

भावार्थ—शिखरी और छोटाहिमवंत यह दो पर्वत एकसो योजन उंचे और स्वर्णमयी है, रूपी और महाहिमवंत यह दो पर्वत दोसो योजन उंचे और क्रमसे स्वर्ण और रूप्यमयी है ॥ २७ ॥

चत्तारि जोयणसए, उच्चिट्ठो निसढ नीलवंतोय। निसढो तवणिज्जमओ, वेरुलिओ नीलवंतोय ॥ २८ ॥

अर्थ—(निसढ नीलवंतो) निषध और नीलवंत यह दोनो पर्वत (चत्तारि जोयणसए) च्यारसें योजन (उच्चिठ्ठो) उंचे है, इसमे (य) जो (निसढो) निषध पर्वत है वो (तवणिज्जमओ) तप्त स्वर्णमयी याने लालवर्ण और दुसरा (नीलवंतो) नीलवंत पर्वत जो है वो (वेरुलिओ) वैडुर्य याने नीलारत्नमई है ॥ २८ ॥

भावार्थ—निषध और नीलवंत यह दो पर्वत च्यारसें योजन उंचे और क्रमसे तपेहुए सोनेके और नीलेरत्नके है ॥ २८ ॥

सव्वेवि पव्वयरा, समयखित्तम्मि मंदरविहुणा। धरणि तलेमुवगाढा, उस्सेह चउत्थ भायम्मि ॥ २९ ॥

अर्थ—इस (समय खित्तम्मि) समयक्षेत्र याने जिस क्षेत्रमें समयकी गिणना होती है उसमें (मंदर विहुणा) पांच मेरु पर्वतोको छोड शेष जितने शास्वते (पव्वयरा) पर्वत है वो (सव्वेवि) सर्व अपने (उस्सेय) उच्च प्रमाणसें (चउत्थ भायम्मि) चोथा भाग (धरणितले) जमीनके अंदर (उवगाढा) अवगाह्य याने दटे हुए है ॥ और समयक्षेत्र जिसको अढाइ द्वीप समझना चाहिये उसमें जो पांच मेरु पर्वत है इन पांचांके अन्दर जंबुद्वीपका जो मध्य मेरु है वो निन्नाणुं हजार योजन उचा और एकहजार योजन जमीनके अन्दर है एवं यह मेरु सब मिलकर एक लाख योजनका है ॥ अत एव शेष च्यार मेरु एक २ हजार योजन जमीनमें और चउरासी २ (८४) हजार योजन उंच पनेमें है ॥ २९ ॥

भावार्थ—इस समय क्षेत्रयाने अढाइ द्वीपमें पांच मेरु पर्वतोको छोड शेष जितने शास्वते शैल है उनकी उचाइ भागके चौथे हिस्सेका भाग भूगर्भमें है, और पांच मेरु पर्वतोंके अंदर जो जंबुद्वीपका मध्य मेरु है वो निन्नाणुहजार योजन उंचा और एकहजारयोजन भूतले, एवं लाखयोजनका जानना ॥ शेष च्यारों मेरु एक २ हजार योजन भूगर्भमें और चउरासी २ हजार योजन उंचपनेमें है ॥ २९ ॥

खंडाईगाहाहिं, दसहिं दारेहिं जंबुदीवस्स । संघयणी समत्ता, रइया हरिभदसूरीहिं ॥ ३० ॥

अर्थ—इस तरह (खंडाई गाहाहिं) खंडादिकोकी गाथा ये (दसहिं दारेहिं) दशद्वारकरके (हरिभदसुरीहिं) श्रीहरिभद्रसुरिजी महाराजनें (रइआ) रचि है एसी (जंबुदीवस्स) जंबुद्वीप आश्रीकी (संघयणी समत्ता) लघुसंघयणी नामका प्रकरण समाप्त हुवा ॥ ३० ॥

भावार्थ—एसे श्रीहरिभद्रसुरि महाराजने यह लघुसंघयणी नामका प्रकरण जिसमें जंबुद्वीपके शास्वते खंडादिकोका विवरण दशद्वार करके रचा समाप्त किया ॥ ३० ॥ इत्यलम् ॥

॥ इति लघुसंघयणी प्रकरणम् ॥

ॐ श्रीसर्वज्ञाय नमः ।

अथ ।

श्रीपंडितदेवचंद्रजीकृत–आगमसार ।

भव्यजीवने प्रतिबोधवा निमित्ते मोक्षमार्गनी वचनिका कहे छे. तिहां प्रथम जीवअनादिकालनो मिथ्यात्वीहतो ते काललब्धि पामीने त्रणकरण करे छे. तेनानाम–पहेलुं यथाप्रवृत्तिकरण, बीजुं अपूर्वकरण, अने त्रीजुं अनिवृत्तिकरण.

तेमा पहेलुं यथाप्रवृत्तिकरण कहे छे. १ ज्ञानावरणी, २ दर्शनावरणी, ३ वेदनी, ४ अंतराय, एचारकर्मनी त्रीस-कोडाकोडीसागरोपमनी स्थिति छे. तेमांथी उगणत्रीस कोडाकोडी खपावे अने एककोडाकोडी बाकी राखे, तथा १ नामकर्म, २ गोत्रकर्म, ए बेकर्मनी वीसकोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति छे, तेमांथी उगणीस खपावे अने एककोडा-कोडी राखे, अने मोहनीयकर्मनी सित्तेर कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति छे, तेमांथी अगणोत्तेर खपावे, बाकी एककोडाकोडी राखे । एवीरीते एक आयुकर्म वर्जीने बाकी सातेकर्मनी एकपल्योपमना असंख्यातमा भागे न्यून एककोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति राखे, एवुं जे वैराग्यरूप उदासी परिणाम ते यथाप्रवृत्तिकरण कहिये. ए पहेलुं करण सर्वसंज्ञी पंचेंद्रीजीव अनन्तीवार करे छे.

हवे बीजुं अपूर्वकरण कहे छे. ते एक कोडाकोडी सागरोपमनी स्थितिमाहेथी एकमुहूर्त अने अनादि मिथ्यात्व जे अनंतानुबंधीआनी चोकडी ते खपाववाने अज्ञान हेय ते छांडवुं अने ज्ञान उपादेय एटले आदरवुं, ए वांछारूप अपूर्व कहेतां पहेलां क्यारे नाव्यो एवो जे परिणाम ते अपूर्व करण कहिये, ए बीजुंकरण ते समकितयोग्य जीवने थाय.

हवे त्रीजुं अनिवृत्तिकरण कहे छे. ते मुहूर्त रूपस्थिति खपावीने निर्मल शुद्ध समकित पामे मिथ्यात्वनो उदय मटे त्यारे जीव उपशम समकित पांमे, एवो जे परिणाम ते अनिवृत्ति करण कहिये. ए करण कीधाथी गंठीभेदथयो कहिये. उक्तञ्च आवश्यक निर्युक्तौ "जागंठीतापढमं । गंठीसमयछेओ भवेबीओ ।। अनिअट्टिकरणं पुण । समत्तपुरक्खडेजीवे ।। १ ।। ऊसर देसं दढुल्लिअं च । विज्जाइवणदवोपप्प ।। मिच्छत्तस्सअणुदए । उभसमसम्मं लहइ जीवो ।। २ ।। एम मिथ्यात्वनो उदयमट्याथी जीव समकित पामे, ते समकितनी सद्दहणाना बे भेद छे, एक व्यवहार समकितसद्दहणा, बीजी निश्चय समकित सद्दहणा.

देवश्रीअरिहंत देवाधिदेव अने गुरु सुसाधु जे सूधो अर्थ कहे ते तथा धर्म केवलीनो परुप्यो जे आगममां सातनय तथा एक प्रत्यक्ष बीजुं परोक्ष ए बे प्रमाण अने चार निक्षेपेकरी सद्दहे, एवी सद्दहणा ते व्यवहार समकित कहिये. ए पुण्यनुं कारण तथा धर्म प्रगट करवानुं कारण छे एवी रुची ज्ञानविनापण घणाजीवोंने उपजे.

बीजुं निश्चयसमकित ते आवीरीते जे निश्चयदेव ते आपणोज आत्मा जीव निष्पन्नस्वरूपी सिद्ध ते संग्रहनयनीस-

चागवेषतां तथा निश्चयगुरु ते पण आपणो आत्माज तत्त्वरमणी अने निश्चयधर्म ते आपणा जीवनो स्वभावज छे एवी सद्दहणा ते मोक्षनुं कारण छे केमके जीव स्वरूप ओळख्या विना कर्मखपे नहीं एवी शुद्ध सद्दहणा ते निश्चयसमकित.

हवे ज्ञाननुं स्वरूप कहे छे ते ज्ञानना बे भेद छे. एक व्यवहारज्ञान, बीजुं निश्चयज्ञान, तेमां जे अन्यमतिनां सर्व-शास्त्र जाणवां. अथवा जैनागममध्ये कह्या जे एकगणितानुयोग ते क्षेत्रमान, बीजो चरणकरणानुयोग ते क्रियाविधि, त्रीजो धर्मकथानुं योग ए त्रण अनुयोगनुं जाणवापणुं ते सर्वव्यवहारज्ञान छे अथवा अन्तरउपयोगविना जे सूत्रना अर्थकरवा ते पण व्यवहारज्ञान कहियें.

हवे निश्चयज्ञान ते छे द्रव्य तथा तेनागुण अने पर्याय सर्वने जाणे तेमां पांच अजीवद्रव्य छे ते हेय-केतां छांडवा-योग्य जाणी छांडवा अने एक जीवद्रव्य ते निश्चयेंकरी सिद्धसमान मोक्षमयी मोक्षनोजाणनार मोक्षनुं कारण मोक्षनो-जावावालो मोक्षमांजरहे छे एहवो आपणो जीव अनंतगुणी अरूपी छे तेनेज ध्यावे ते निश्चयज्ञानकहियें.

हवे एकधर्मास्तिकाय, बीजो अधर्मास्तिकाय, त्रीजो आकाशास्तिकाय, चोथो पुद्गलास्तिकाय, पांचमो जीवास्तिकाय, अने छट्ठो काल ए छे द्रव्य शाश्वता छे तेनुं ज्ञान कहे छे. ए छेद्रव्यमध्ये पांच अजीव द्रव्य छे अने एक जीवद्रव्य ते चेतनालक्षणवंत छे उपादेय छे.

हवे ए छद्रव्यना गुण कहे छे पहेलो धर्मास्तिकाय तेना चार गुण एक अरूपी बीजो अचेतन त्रीजो अक्रिय चोथो गतिसहायगुण, अने बीजो अधर्मास्तिकाय तेना पण चारगुण छे एक अरूपी बीजो अचेतन त्रीजो अक्रिय चोथो स्थिति-

सहायगुण, अने त्रीजो आकाशास्तिकायद्रव्य तेना चार गुण छे एक अरूपी बीजो अचेतन त्रीजो अक्रिय चोथो अवगाहना दानगुण, हवे कालद्रव्यना चारगुण कहे छे. एक अरूपी बीजो अचेतन त्रीजो अक्रिय चोथो नवापुराणवर्त्तनालक्षण, हवे पुद्गलद्रव्यना चारगुण कहे छे. एकरूपी बीजो अचेतन त्रीजो सक्रिय चोथो मिलणविखरणरूप पूरणगलन गुण, हवे जीवद्रव्यना चार गुण कहे छे. एक अनंतज्ञान बीजो अनंतदर्शन त्रीजो अनन्तचारित्र चोथो अनंतवीर्य ए छद्रव्यना गुण कह्या ते नित्यध्रुव छे.

हवे छद्रव्यना पर्याय कहे छे धर्मास्तिकायना चारपर्याय छे एक खंध, बीजो देश, त्रीजो प्रदेश, चोथो अगुरुलघु, अधर्मास्तिकायना चारपर्याय. एकखंध, बीजोदेश, त्रीजोप्रदेश, चोथो अगुरुलघु; पुद्गल द्रव्यना चारपर्याय एकवरण बीजो गंध, त्रीजो रस, चोथो स्पर्श अगुरुलघुसहित; तथा आकाशास्तिकायनाचार पर्याय. एकखंध, बीजो देश, त्रीजो प्रदेश, चोथो अगुरुलघु; कालद्रव्यना चारपर्याय. एकअतीत काल, बीजो अनागतकाल, त्रीजो वर्त्तमानकाल, चोथो अगुरुलघु; अने जीव द्रव्यना चारपर्याय. एक अव्याबाध, बीजो अनवगाह, त्रीजो अमूर्तिक, चोथो अगुरुलघु. ए छे द्रव्यनापर्याय कह्या.

हवे छ द्रव्यना गुणपर्यायनुं साधर्म्यपणुं कहे छे. अगुरुलघुपर्याय सर्वद्रव्यमां सरीखो छे अने अरूपीगुण पांच द्रव्यमां छे एक पुद्गलद्रव्यमां नथी; तथा अचेतनगुण पांच द्रव्यमां छे एकजीवद्रव्यमां नथी, अने सक्रियगुणजीव तथा पुद्गल ए बे द्रव्यमां छे बाकी चारद्रव्यमां नथी; तथा चलणसहायगुण एकधर्म्मास्तिकायमां छे, बीजा पांचद्रव्यमां नथी;

वली स्थिर सहायगुण एक अधर्मास्तिकायमां छे. बीजा पांच द्रव्यमां नथी; तथा अवगाहनागुण ते एक आकाशद्रव्यमां छे, बीजा पांच द्रव्यमां नथी; अने वर्तनागुण ते एक कालद्रव्यमांज छे, बीजा पांच द्रव्यमां नथी; तेमज मिलणविखरणगुण ते पुद्गलमां छे, बीजा द्रव्यमां नथी. तथा ज्ञानचेतनागुण ते एक जीवद्रव्यमां छे, पण बीजा द्रव्यमां नथी. ए मूलगुण कोइ द्रव्यना कोइ द्रव्यमां मिले नही. एक धर्म बीजो अधर्म त्रीजो आकाश ए त्रण द्रव्यना त्रणगुण तथा चार पर्याय सरिखा छे अने त्रणगुणें करी तो कालद्रव्य पण ए समान छे.

हवे वली अग्यार बोलेकरी छ द्रव्यना गुणजाणवाने गाथा कहे छे.

परिणामिजीवमुत्ता, सपएसा एगखित्तकिरिआ य । निच्चं कारणकत्ता, सव्वगयइयरअप्पवेसे ॥ १ ॥

अर्थ—निश्चयनयथी आप आपणा स्वभावे छए द्रव्य परिणामी छे अने व्यवहारनयथी जीव तथा पुद्गल ए बे द्रव्य परिणामी छे तथा एक धर्म, बीजो अधर्म, त्रीजो आकाश, अने चोथो काल, ए चार द्रव्य अपरिणामी छे. तथा छे द्रव्यमां एक जीव द्रव्य ते जीव छे, बीजा पांच द्रव्य अजीव छे तथा छे द्रव्यमां एक पुद्गल मूर्तिवन्त रूपी छे अने पांच द्रव्य अमूर्तिवंत अरूपी छे. छ द्रव्यमां पांच द्रव्य सप्रदेशी छे, अने एक कालद्रव्य अप्रदेशी छे. तेमां एक धर्मास्तिकाय. बीजो अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्य असंख्यातप्रदेशी छे अने एक आकाशद्रव्य अनंतप्रदेशी छे. जीवद्रव्य असंख्यात प्रदेशी छे, पुद्गलपरमाणु अनंत प्रदेशी छे; परमाणुआ अनंता छे, एम पांच द्रव्य सप्रदेशी छे अने छट्ठो काल अप्रदेशी छे.

छे द्रव्यमां एक धर्मास्तिकाय, बीजो अधर्मास्तिकाय, त्रीजो आकाशास्तिकाय ए त्रण ते एकेक द्रव्य छे, तथा एक जीवद्रव्य बीजो पुद्गलद्रव्य त्रीजो कालद्रव्य ए त्रण द्रव्य अनेक अनेक छे, छ द्रव्यमां एक आकाशद्रव्य क्षेत्र छे, अने बीजा पांच द्रव्य क्षेत्री छे; निश्चयनयथी छे द्रव्य पोतपोताना कार्यें सदा प्रवर्त्ते छे माटे सक्रिय छे; अने व्यवहारनयथी जीव तथा पुद्गल ए बे द्रव्य सक्रिय छे, तेमां पण पुद्गल सदा सक्रिय छे, अने जीवद्रव्य तो संसारी थको सक्रिय छे; पण सिद्धअवस्थायें थको संसारी क्रियाकरवाने अक्रिय छे, तथा बाकीना चार द्रव्य तो अक्रिय छे; निश्चयनयथी छे द्रव्य नित्य छे ध्रुव छे; अने उत्पादव्ययेंकरी अनित्यपणे पण छे तथा व्यवहारनयें जीव अने पुद्गल ए बे द्रव्य अनित्य छे, बाकीना चार द्रव्य नित्य छे, यद्यपि उत्पादव्यय ध्रुवपणे सर्व पदार्थ परिणमे छे तोपण एक धर्म, बीजो अधर्म, त्रीजो आकाश, चोथो काल, ए चार द्रव्य सदा अवस्थित छे ते माटे नित्य कह्यां.

छे द्रव्यमां एक जीवद्रव्य अकारण छे अने पांच द्रव्य कारण छे केमके पांचे द्रव्य जीवने भोगमां आवे छे माटे कारण कहिये केमके धर्मास्तिकाय चालवानो साह्य आपे छे अधर्मास्तिकाय थिर रहेवानो साह्य आपे छे आकाशास्तिकाय अवकाश आपे छे पुद्गलास्तिकाय जीवने मधुरादि सुरभिगंधादिक तथा सकोमल स्पर्शादिक भोगपणे थाय छे तथा कालद्रव्य ते जीवने जरा बाल तारुण्य अवस्थादिए छे तथा अनादि संसारी जीव भवस्थिति परिपाक छता एक अंतर मुहूर्तकालमां सकलकर्म निर्जरी मोक्ष पहोंचे तिहां सिद्ध अवस्थायें अनंतोकाल पर्यंत जीव अनंता सुखने विलसे माटे काल द्रव्यपण जीवने भोग थाय छे. पण एक जीव द्रव्य कोइने भोग आवतो नथी माटे अकारण कह्युं अने

पांच द्रव्य भोग आवे माटे कारण कह्या तथा "घणां प्रतोमां तो संक्षेपे एटलुं छे जे छ द्रव्यमां एक जीव द्रव्य कारण छे पांच द्रव्य अकारण छे ए पण वात घणीरीते मलती छे. माटे जे बहुश्रुत कहे ते खरुं मारीधारणा प्रमाणे जीव-द्रव्य कारण अने पांच द्रव्य अकारण एम संभवे छे" निश्चयनयथी छए द्रव्य कर्ता छे अने व्यवहारनयें एक जीवद्रव्य कर्ता छे बाकी पांच द्रव्य अकर्ता छे. छ द्रव्यमां एक आकाशद्रव्य सर्व व्यापी छे अने पांच द्रव्य लोक व्यापी छे. छए द्रव्य एक क्षेत्रमां एकठां रह्यां छे पण एक बीजा साथे मली जाय नहीं ए छ द्रव्यनो विचार कह्यो.

हवे एकेका द्रव्यमां एक नित्य, बीजो अनित्य त्रीजो एक चोथे अनेक, पांचमो सत्, छट्ठो असत्, सातमो वक्तव्य, आठमो अवक्तव्य, ए आठ आठ पक्ष कहे छे.

धर्मास्तिकायना चार गुण नित्य छे तथा पर्यायमां धर्मास्तिकायनो एक खंध नित्य छे बाकीना देश प्रदेश तथा अगु-रुलघु पर्याय अनित्य छे. अधर्मास्तिकायना चार गुण तथा एक लोक प्रमाण खंध नित्य छे अने एक देश बीजो प्रदेश त्रीजो अगुरुलघु ए त्रण पर्याय अनित्य छे. तथा आकाशास्तिकायना चार गुण तथा लोकालोकप्रमाणखंध नित्य छे अने एक देश बीजो प्रदेश त्रीजो अगुरुलघु ए त्रण पर्याय अनित्य छे. तथा कालद्रव्यना चार गुण नित्य छे अने चार पर्याय अनित्य छे पुद्गल द्रव्यना चार गुण नित्य छे अने चार पर्याय अनित्य छे जीवद्रव्यना चार गुण तथा त्रण पर्याय नित्य छे अने एक अगुरुलघु पर्याय अनित्य छे ए रीते नित्यानित्य पक्ष कह्यो.

हवे एक अनेक पक्ष कहे छे. एक धर्मास्तिकाय बीजो अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्यनो खंधलोकाकाश प्रमाण एक छे

अने गुण अनंता छे पर्याय अनंता छे प्रदेश असंख्याता छे तेणेंकरी अनेक छे, आकाशद्रव्यनो लोकालोक प्रमाण खंध एक छे अने गुण अनंता छे पर्याय अनंता छे प्रदेश अनंता छे माटे अनेक छे, काल द्रव्यनो वर्त्तनारूप गुण एक छे अने गुण अनंता छे पर्याय अनंता छे समय अनंता छे केमके अतीत काले अनंता समय गया अने अनागतकाले अनंता समय आवशे. तथा वर्त्तमानकाले समय एक छे माटे अनेक पक्ष छे पुद्गल द्रव्यना परमाणु अनंता छे ते एकेक परमाणुमां अनंतागुण पर्याय छे ते अनेक पणुं छे अने सर्व परमाणुमां पुद्गलपणुं ते एकज छे माटे एक छे.

जीवद्रव्य अनंता छे एकेका जीवमां प्रदेश असंख्याता छे तथा गुण अनंता छे पर्याय अनंता छे ते अनेकपणुं छे पण जीवितव्यपणुं सर्व जीवोनुं एकसरीखुं छे माटे एक पणुं छे इहां शिष्य पूछे छे जे सर्व जीव एक सरीखा छे तो मोक्षना जीव सिद्ध परमानंदमयी देखाय छे अने संसारी जीव कर्म वश पड्या दुःखी देखाय छे अने ते सर्व जुदाजुदा देखाय छे ते केम? तेहने गुरु उत्तर कहे छे के निश्चयनये तो सर्व जीव सिद्ध समान छे माटेज सर्व जीव कर्म खपावीने सिद्ध थाय छे तेथी सर्व जीवनी सत्ता एक छे.

फरि शिष्य पुछे छे के जो सर्व जीव सिद्ध समान कहो छो तो अभव्य जीव पण सिद्ध समान छे एम ठेखुं अने ते तो मोक्ष जता नथी तेहने उत्तर जे अभव्यने कर्म चीकणा छे अने अभव्यमां परावर्त्त धर्म नथी तेथी सिद्ध थता नथी माटे तेनो एहवोज स्वभाव छे जे मोक्षे जवुंज नथी अने भव्य जीवमां परावर्त्त धर्म छे माटे कारण सामग्री मिले पलटण पामे गुणश्रेणी चढी मोक्षं करी सिद्ध थाय पण जीवना मुख्य आठ रुचक प्रदेश जे छे ते निश्चय नयथी भव्य

तथा अभव्य तथा सर्वना सिद्ध समान छे माटे सर्व जीवनी सत्ता एक सरीखी छे केमके ए आठ प्रदेशने बिलकुल कर्म लागता नथी ते "श्री आचारांग सूत्रनी श्री सिलांगाचार्य-कृत टीकाना लोकविजयाध्ययने प्रथमोद्देशके साख छे तिहांथी सविस्तर पणे जोवुं."

हवे सत् तथा असत् पक्ष कहे छे ए छद्रव्य ते स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल अने स्वभावपणे सत् एटले छता छे अने पर द्रव्य परक्षेत्र परकाल तथा परभावपणे असत् एटले अछता छे तेनी रीत बतावावाने अर्थे छए द्रव्यनो द्रव्य क्षेत्र काल भाव कहिये छैये.

धर्मास्तिकायनो मूलगुण चलण सहायपणो ते स्वद्रव्य, अधर्मास्तिकायनो मूलगुण स्थिति सहायपणो ते स्वद्रव्य, आकाशास्तिकायनो मूल गुण अवगाहपणो ते स्वद्रव्य, कालद्रव्यनो मूल गुण वर्तनालक्षणपणो ते स्वद्रव्य, तथा पुद्गलनो मूलगुण पुरण गलनपणो ते स्वद्रव्य, अने जीवद्रव्यनो मूलगुण ज्ञानादिक चेतनालक्षणपणो ते स्वद्रव्य ए छद्रव्यनो स्वद्रव्यपणो कह्यो.

हवे स्वक्षेत्र ते द्रव्यनो प्रदेशपणो छे ते देखाडे छे तिहां एक धर्मास्तिकाय बीजो अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्यनो स्वक्षेत्र असंख्यात प्रदेश छे अने आकाशद्रव्यनो स्वक्षेत्र अनंतप्रदेश छे कालद्रव्यनो स्वक्षेत्र समय छे पुद्गलद्रव्यनो स्वक्षेत्र एक परमाणु छे ते परमाणु अनंता छे जीवद्रव्यनो स्वक्षेत्र एक जीवना असंख्याता प्रदेश छे.

हवे स्वकाल ते छए द्रव्यमां अगुरुलघुनोज छे अने ए छ द्रव्यना पोतपोताना गुण पर्याय ते सर्व द्रव्यनो स्वभाव

जाणवो एटले धर्मास्तिकायमां पोतानाज द्रव्य क्षेत्र काल भाव छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्यमध्ये पण स्वद्रव्यादिक चार छे. पण बीजा पांच द्रव्यना नथी एमज आकाशास्तिकायने विषे आकाशनाज स्वद्रव्यादिक चार छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी कालद्रव्यमां कालना द्रव्यादिक चार छे बीजा पांच द्रव्यना नथी अने पुद्गलना द्रव्यादिक चार ते पुद्गलमांज छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी तथा जीव द्रव्यना स्वद्रव्यादिक चार ते जीवमां छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी.

ए द्रव्य ते गुण पर्यायनो द्रव्यथी अभेदपर्याय होय ते द्रव्य कहियें तथा स्वधर्मनो आधारवंतपणो ते क्षेत्र कहियें अने उत्पाद व्ययनी वर्त्तना ते काल कहियें तथा विशेषगुण परिणति स्वभाव परिणति पर्यायप्रमुख ते स्वभाव कहियें.

इहां १ भेदस्वभाव २ अभेदस्वभाव ३ भव्यस्वभाव ४ अभव्यस्वभाव ५ परमस्वभाव ए पांच स्वभाव कहेवा तेमां द्रव्यना सर्वधर्मने पोतपोताना स्वस्वकार्यने करवेकरी भेद स्वभाव छे अने अवस्थानपणे अभेदस्वभाव छे अणपलटण स्वभावें अभव्य स्वभाव छे तथा पलटण स्वभावे भव्यस्वभाव छे अने द्रव्यना सर्वधर्म ते विशेष धर्मने अनुयायीज परिणमे ते माटे ते परमस्वभाव कहियें ए सामान्यस्वभाव जाणवा ए रीते छए द्रव्य स्वगुणे सत् छे अने परगुणे असत् छे.

हवे वक्तव्य तथा अवक्तव्यपक्ष कहे छे ए छ द्रव्यमां अनंता गुण पर्याय ते वक्तव्य एटले वचने कहेवा योग्य छे अने अनंता गुण पर्याय ते अवक्तव्य एटले वचने कह्या जाय नहीं एवा छे तिहां केवली भगवंते समस्त भावदीठा

तेने अनंत मे भागे जे वक्तव्य एटले कहेवा योग्य हता ते कह्या वली तेनोपण अनंतमो भाग श्रीगणधर देवे सूत्रमां गुंथ्यो ते सूत्रमां गुंथ्या तेने असंख्यातमे भागे हमणां आगम रह्या छे ए छ द्रव्यनां आठ पक्ष कह्या.

हवे नित्य तथा अनित्य पक्षथी चौभंगी उपनी ते कहे छे एक जेनी आदि नथी अनें अंत पण नथी ते अनादि अनंत पहेलो भांगो अने जेनी आदि नथी पण अंत छे ते अनादिसांत बीजो भागो तथा जेनी आदि पण छे अने अंत एटले छेहेडो पण छे ते सादिसांत त्रीजो भांगो वली जेहने आदि छे पण अंत नथी ते सादिअनंत नामे चोथो भागो जाणवो.

हवे ए चार भांगा छ द्रव्यमां फलावी देखाडे छे जीवद्रव्यमां ज्ञानादिक गुण ते अनादि अनंत छे नित्य छे अने भव्य जीवने कर्म साथे संबन्ध तथा संसारी पणानी आदि नथी पण सिद्धथाय तेवारे अंत आव्यो तेथी ए अनादिसांत भांगो छे अने देवता तथा नारकी प्रमुखना भवकरवा ते सादिसांत भांगो छे अने जे जीव कर्म खपावी मोक्ष गया तेनी सिद्धपणे आदि छे अने पाछो संशारमां कोइ कालें आववुं नथी माटे अंत नथी तेथी ए सादि अनंत भांगो छे ए जीव द्रव्यमां चौभंगी कही जीवद्रव्यना चार गुण अनादि अनंत छे जीवने कर्मसाथें संयोग ते अनादि सांत छे केमके केवारे पण कर्म छूटेहे.

हवे धर्मास्तिकायमां चार गुण तथा खंधपणो ते अनादि अनंत छे अने अनादि सांत भांगो नथी तथा १ देश २ प्रदेश ३ अगुरुलघु ए सादि सांत भांगो छे तथा सिद्धना जीवमां धर्मास्तिकायना जे प्रदेश रह्या छे ते प्रदेश आश्र-

यीने सादि अनंत भांगो छे एवीज रीतें अधर्मास्तिकायमां पण चौभंगी जाणवी अने आकाशद्रव्यमां गुण तथा खंध अनादि अनंत छे बीजो भांगो नथी अने १ देश २ प्रदेश तथा ३ अगुरु लघु सादि सांत छे तथा सिद्धना जीवनी साथे संबन्ध ते सादि अनंत छे.

पुद्गल द्रव्यमां गुण अनादि अनंत छे जीव पुद्गलनो संबन्ध अभव्यने अनादि अनंत छे भव्यजीवने अनादि सांत छे पुद्गलना खंध सर्व सादि सांत छे जे खंध बांध्या ते स्थिति प्रमाणे रही खरे छे वली नवा बंधाय छे माटे सादि अनंत भांगो पुद्गलमां नथी.

कालद्रव्यमां गुण चार अनादि अनंत छे पर्यायमां अतीत काल अनादि सांत छे अने वर्तमानकाल सादि सांत छे अनागत काल सादि अनंत छे ए कालनुं स्वरूप ते सर्व उपचारथी छे ए रीतें कालद्रव्यमां चौभंगी कही.

हवे द्रव्यक्षेत्र काल तथा भावमां चौभंगी कहे छे जीवद्रव्यमां स्वद्रव्यथी ज्ञानादिक गुण ते अनादि अनंत छे स्वक्षेत्रें जीवना प्रदेश असंख्याता छे ते सादि सांत छे तसोद्वर्त्तनापणे फरे छे ते माटे. अथवा अवगाहना माटे सादि सांत छे पण छतीपणे तो अनादि अनंत छे स्वकाल अगुरुलघुने गुणे अनादि अनंत छे अने अगुरुलघु गुणनो उपजवो तथा विणशवो ते सादि सान्त छे तथा स्वभाव गुणपर्याय ते अनादि अनंत छे अने भेदान्तरे अगुरुलघु ते सादि सांत छे.

धर्मास्तिकायमां स्वद्रव्य जे चलण सहाय गुण ते अनादि अनंत छे अने स्वखेत्र असंख्यात प्रदेश लोकप्रमाण छे ते अवगाहना पणे सादि सांत छे स्वकाल ते अगुरुलघु गुणे करी अनादि अनंत छे अने उत्पाद व्यय ते सादि सांत छे

स्वभाव ते चार गुण अगुरुलघु अनादि अनंत छे १ खंध २ देश ३ प्रदेश ते अवगाहनाने प्रमाणे सादि सांत छे एम अधर्मास्तिकायना पण द्रव्यादि चार भांगा जाणवा तथा आकाशास्तिकायमां स्वद्रव्य अवगाहना दान गुण ते अनादि अनंत छे अने स्वखेत्र लोकालोक प्रमाण अनंत प्रदेश ते अनादि अनंत छे स्वकाल ते अगुरुलघु गुण सर्वथा पणे अनादि अनंत छे अने उपजवे तथा विणसवे सादि सांत छे स्वभाव ते चार गुण तथा खंध अने अगुरुलघु ते अनादि अनंत छे तथा देश प्रदेश ते सादिसांत छे ते आकाश द्रव्यना बे भेद छे एक चौदराजलोकनो खंध लोकाकाश ते सादिसांत छे बीजो अलोकाकाशनो खंध ते सादि अनंत छे.

काल द्रव्यमां स्वद्रव्य जे नव पुराणवर्त्तना गुण ते अनादि अनंत छे स्वखेत्र समय काल ते सादिसांत छे केमके वर्त्तमान समय एक छे ते माटे. तथा स्वकाल ते अनादि अनंत छे स्वभाव ते गुण चार अने अगुरुलघु अनादि अनंत छे अतीत काल अनादि सांत छे अने वर्त्तमान काल सादि सांत छे अनागत काल सादि अनंत छे.

पुद्गल द्रव्यमां स्वद्रव्य ते द्रव्यपणे जे पूर्णगलन धर्म ते अनादि अनन्त छे अने स्वखेत्र परमाणु ते सादिसांत छे स्वकालस्थिति अगुरुलघु गुण ते अनादि अनंत छे अगुरुलघुनो उपजवो विणशवो ते सादि सांत छे स्वभाव ते गुण चार अनादि अनंत छे वर्णादिपर्याय चार एटले वर्ण गंध रस स्पर्श ते सादि सांत छे ए द्रव्यादि चारमां चौभंगी कही.

हवे छ द्रव्यना संबन्ध आश्री चौभंगी कहे छे, तिहां प्रथम आकाशद्रव्य छे तेमां अलोकाकाशमां कोइ द्रव्य नथी, अने लोकाकाशमां छ द्रव्य छे, तिहां लोकाकाश द्रव्य तथा बीजुं धर्मास्तिकायद्रव्य अने त्रीजुं अधर्मास्तिकायद्रव्य

ते अनादि अनंत संबंधी छे जे लोकाकाशना एकेक प्रदेशमां धर्मद्रव्य तथा अधर्मद्रव्यनो एकेक प्रदेश रह्यो छे तेपण किवारे विछडसे नही माटे अनादि अनंत संबंधी छे आकाश खेत्रलोकसर्व अने जीवद्रव्यनो अनादि अनंत संबंध छे, अने संसारी जीव कर्म सहित तथा लोकना प्रदेशनो सादि सांत संबन्ध छे. लोकांत सिद्धखेत्रना सिद्धजीवोनो आकाश प्रदेश साथें सादि अनंत संबन्ध छे, लोकाकाश अने पुद्गल द्रव्यनो अनादि अनंत संबन्ध छे. आकाश प्रदेशनी साथें पुद्गल परमाणुनो सादि सांत संबन्ध छे एम आकाश द्रव्यनी परे धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकायनो पण सर्व संबन्ध जाणवो जीव अने पुद्गलना संबंधमां अभव्य जीवने पुद्गलनो अनादि अनंत संबंध छे केमके अभव्य जीवना कर्म किवारें खपशे नही माटे अने भव्य जीवने कर्मनुं लागवुं अनादि कालनुं छे पण ते किवारेक छूटशे माटे भव्य जीवने पुद्गल संबंध अनादि सांत छे तथा निश्चें नयकरी छ द्रव्य स्वभाव परिणाम परिणम्या छे ते परिणामी पणो सदा शाश्वतो छे ते माटे अनादि अनंत छे अने जीव तथा पुद्गल बेहु द्रव्य मलि संबंध भाव पामे छे ते पर परिणामी पणो छे ते परपरिणामिपणो अभव्य जीवने अनादि अनंत छे अने भव्य जीवने अनादि सांत छे अने पुद्गलनो परिणामी पणो ते सत्तायें अनादि अनंत छे अने पुद्गलनो मिलवो विछडवो ते सादि सांत छे एटले जीव द्रव्य पुद्गल साथे मिल्यो सक्रिय छे अने पुद्गल कर्मथी रहित थाय तेवारें जीव द्रव्य अक्रिय छे अने पुद्गल द्रव्य सदा सक्रिय छे.

हवे एक, अनेक–पक्षथी निश्चे ज्ञान कहेवाने नय कहे छे, सर्व द्रव्यमां अनेकस्वभाव छे, ते एक वचनथी कह्या जाय नही माटे मांहो मांहें नय करी संक्षेप पणे कहे छे, तिहां मूल नयना बे भेद छे एक द्रव्यार्थिक बीजो पर्याया-

र्थिक तेमां उत्पाद व्यय पर्याय गौण पणे अने प्रधान पणे द्रव्यनो गुण सत्ताने ग्रहे ते द्रव्यार्थिकनय कहियें तेना दश भेद छे १ सर्व द्रव्यनित्य छे ते नित्यद्रव्यार्थिक २ अगुरु लघु अने खेत्रनी अपेक्षा न करे मूल गुणने पिंडपणे ग्रहे ते एकद्रव्यार्थिक ३ ज्ञानादिक गुणे सर्व जीव एकसरीखा छे माटे सर्वने एक जीव कहे स्वद्रव्यादिकने ग्रहे ते सत् द्रव्यार्थिक जेम सत् लक्षणं द्रव्यं ४ द्रव्यमां कहेवा योग्य गुण अंगीकार करे ते वक्तव्य द्रव्यार्थिक ५ आत्माने अज्ञानी कहेवुं ते अशुद्ध द्रव्यार्थिक ६ सर्व द्रव्य गुणपर्याय सहित छे एम कहवुं ते अन्वय द्रव्यार्थिक ७ सर्व जीवद्रव्यनी मूल सत्ता एक छे ते परम द्रव्यार्थिकनय ८ सर्व जीवना आठ प्रदेश निर्मल छे ते शुद्ध द्रव्यार्थिकनय ९ सर्व जीवना असंख्यात प्रदेश एकसरीखा छे ते सत्ता द्रव्यार्थिकनय १० गुणगुणी द्रव्य ते एक छे ते परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक जेम आत्मा ज्ञानरूप छे इत्यादिक ए द्रव्यार्थिक नयना दश भेद कह्या.

हवे पर्यायार्थिक नयना छ भेद कहे छे जे पर्यायने ग्रहे ते पर्यायार्थिक नय कहियें, तेना छ भेद छे १ द्रव्यपर्याय ते जीवने भव्यपणुं तथा सिद्धपणुं कहेवुं २ द्रव्यव्यंजनपर्याय ते द्रव्यनुं प्रदेशमान ३ गुणपर्याय जे एक गुणथी अनेकता थाय जेम धर्माधर्मादि द्रव्य पोताना चलण सहकारादि गुणथी अनेक जीव तथा पुद्गलने सहाय करे ४ गुण व्यंजन पर्याय जे एक गुणना घणा भेद छे ५ स्वभाव पर्याय ते अगुरु लघु पर्यायथी जाणवुं ए पांच पर्याय सर्व द्रव्यमां छे अने छट्ठो विभाव पर्याय ते जीव पुद्गल ए बे द्रव्य मां छे तिहां जीव जे चार गतिना नवा नवा भव करे ते जीवमां विभाव पर्याय तथा पुद्गलमां खंध पणुं ते विभाव पर्याय जाणवो.

हवे पर्यायना बीजा छ भेद कहे छे १ अनादि नित्यपर्याय ते जेम पुद्गल द्रव्यनो मेरु प्रमुख २ सादि नित्य पर्याय ते जीव द्रव्यनुं सिद्धपणुं ३ अनित्यपर्याय ते समय समयमां द्रव्य उपजे विणशे छे ४ अशुद्ध अनित्यपर्याय ते जन्म मरण थाय छे तेणे करी कहेवुं ५ उपाधिपर्याय ते कर्म संबंध ६ शुद्धपर्याय जे मूळपर्याय सर्व द्रव्यना एक सरीखा छे. ए पर्यायार्थिकनुं स्वरूप कह्युं.

हवे सात नय कहे छे १ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ रुजुसूत्र ५ शब्द ६ समभिरूढ ७ एवंभूत—ए सात नयना नाम जाणवां, तेमां पहेलो नैगम नय कहे छे. नथी एक गमो ते नैगम कहियें गुणनो एक अंश उपनो होय तो नैगम नय कहियें दृष्टान्त—जेम कोइक मनुष्यने पायली लाववानो मन थयो तेवारें जंगलमां लाकडुं लेवा चाल्यो रस्तामां कोइक मनुष्य मल्यो तेणें पूछ्युं तुं क्यां जाय छे तेवारें तेणें कह्युं जे पायली लेवा जाउं छुं ते पायली तो हजी घडी नथी पण मनमां चिंतवी ते थइ एम गण्युं तेम नैगम नय सर्व जीवने सिद्ध समान कहे केमके सर्व जीवना आठ रुचक प्रदेश निर्मल सिद्ध रूप छे तेथी एक अंशें सिद्ध छे ते माटे सिद्ध समान सर्व जीव कह्या ते नैगम नयना त्रण भेद छे १ अतीत नैगम २ अनागत नैगम ३ वर्तमान नैगम ए नैगम नय कह्यो.

हवे संग्रह नय कहे छे. सत्ताग्रहे ते संग्रह जे एक नाम लीधांथी सर्व गुण पर्याय परिवार सहित आवे ते संग्रहनय जाणवो. तेनो दृष्टान्त—जेम कोइक मनुष्ये प्रभातें दातण करवाने अर्थे पोताना घरना बारणे बेशीने चाकर पुरुषने कह्युं जे दातण लइ आवो तेवारें ते चाकर मनुष्य पाणीनो लोटो तथा रुमाल अने दातण एम सर्व चीज लइ आव्यो.

हवे शेठें तो एक दातण नाम लइने मगाव्युं हतुं पण सर्वनो संग्रह करी चाकर लेइ आव्यो तेमज द्रव्य एवुं नाम कह्युं तो द्रव्यना गुण पर्याय सर्व आव्या. ए संग्रह नयना बे भेद छे एक जे द्रव्य पणो सामान्य पणे बोलतां जीव तथा अजीव द्रव्यनो भेद पड्यो नही ते पेहेलो सामान्य संग्रह तथा बीजो विशेषताने अंगीकार करे छे जे जीव द्रव्य एम कह्युं तो अजीव सर्व टल्या ते विशेष संग्रह.

हवे व्यवहार नय कहे छे जे बाह्यस्वरूप देखीने भेदनी वेहेंचण करे अने जे बाहेर देखता गुणनेज माने पण अंतरंग सत्ता न माने एटले ए नयमां आचार क्रिया मुख्य छे अंतरंग परिणामनो उपयोग नथी केमके नैगम तथा संग्रह नय ते ज्ञान रूपध्यानना परिणाम विना अंश तथा सत्ता ग्राही छे तेम इहां करणी मुख्य छे ते व्यवहार नय-पणो जीवनी व्यवस्था अनेक प्रकारें छे तिहां नैगम तथा संग्रह नय करी सर्व जीव सत्तायें एक रूप छे पण व्यवहार नयथी जीवना बे भेद छे. एक सिद्ध बीजा संसारी ते वली संसारी जीवना बे भेद छे. एक अयोगी चौदमा गुण ठाणा वाला तथा बीजा सयोगी ते सयोगीना बे भेद एक केवली बीजा छद्मस्थ, छद्मस्थना बे भेद एक क्षीणमोही बारमा गुण ठाणे वर्त्तता मोहनीय कर्म खपाव्युं ते बीजा उपशान्त मोह ते उपशान्त मोहना वली बे भेद एक अकषायी इग्यारमा गुणठाणाना जीव बीजा सकषायी ते सकषायीना बे भेद छे एक सूक्ष्मकषायी दशमां गुण ठाणाना जीव बीजा बादर कषायी ते बादर कषायीना वली बे भेद छे एक श्रेणी प्रतिपन्न, बीजो श्रेणीरहित ते श्रेणीरहितना बे भेद एक अप्रमादी बीजो प्रमादी ते प्रमादीना बे भेद एक सर्वविरति बीजो देशविरति देशविरतिना बे भेद एक व्रति

परिणामि बीजा अव्रति परिणामि अव्रतिना बे भेद एक अव्रति समकेति बीजा अव्रति मिथ्यात्वी ते मिथ्यात्वीना बे भेद एक भव्य बीजा अभव्य ते भव्यना बे भेद एक ग्रंथीभेदी बीजा ग्रंथीअभेदी एवी रीते जे जीव जेवो देखाय तेने तेवो माने ए व्यवहार नय छे एमज पुद्गलना भेद करवा ते कहे छे पुद्गल द्रव्यना बे भेद छे एक परमाणुं, बीजो खंध, खंधना बे भेद एक जीवने लागा ते जीव सहित बीजा जीव रहित ते घडो प्रमुख अजीवनो खंध हवे जीव सहित खंधना बे भेद छे एक सूक्ष्म खंध बीजो बादर खंध.

इहां वर्गणानो विचार लखीये छैयें तिहां पुद्गलनी वर्गणा आठ छे १ औदारिकवर्गणा २ वैक्रियवर्गणा ३ आहारकवर्गणा ४ तेजसवर्गणा ५ भाषावर्गणा ६ उसासवर्गणा ७ मनोवर्गणा ८ कार्मणवर्गणा—ए आठ वर्गणानां नाम कह्यां बे परमाणु मेलाथाय त्यारे द्व्यणुकखंध कहेवाय त्रण परमाणु मेलाथाय तेवारे त्र्यणुकखंध थाय एम संख्याता परमाणु मिले संख्याताणुकखंध थाय तेमज असंख्याते असंख्याताणुकखंध थाय तथा अनंता परमाणु मिले अनंताणुकखंध थाय ए खंध ते सर्व जीवने अग्रहण योग्य छे अने जेवारें अभव्यथी अनंत गुणअधिक परमाणु मेलाथाय तेवारें औदारिक शरीरने लेवा योग्य वर्गणा थाय.

एमज औदारिकथी अनंत गुणा अधिक वर्गणामां दल मेला थाय तेवारें वैक्रिय वर्गणा थाय वली वैक्रिय थकी अनंत गुणा परमाणु मिले तेवारें आहारकवर्गणा थाय एम सर्व वर्गणाना एकेकथी अनंतगुणा अधिक परमाणु मिले तेवारें ते वर्गणा थाय एटले पहेलीथी बीजी वर्गणा बीजीथी त्रीजी एम सातमी मनोवर्गणाथी आठमी कार्मणवर्गणामां अनंत-

गुण परमाणु अधिक छे इहां १ औदारिक, २ वैक्रिय, ३ आहारक, ४ तैजस, ए चार वर्गणा बादर छे तेमां पांच वर्ण-बे गन्ध-पांच रस-आठ स्पर्श ए वीस गुण छे. तथा १ भाषा २ उसास ३ मन ४ कार्मण ए चार वर्गणा सूक्ष्म छे एमां पांच वर्ण-बे गन्ध पांच रस-चार स्पर्श-ए सोल गुण छे अने एक परमाणुमां एक वर्ण-एकगंध-एकरस-बे स्पर्श ए पांच गुण छे एम पुद्गल खंधना अनेक भेद छे.

ए व्यवहार नयना छ भेद छे १ शुद्धव्यवहार ते आगला गुण ठाणानुं छोडवुं अने ऊपरना गुणठाणानुं ग्रहण करवुं अथवा ज्ञान-दर्शन-चारित्र गुण ते निश्चयनय एकरूप छे पण ते शिष्यने समजाववाने जूदा जूदा भेद कहेवा ते शुद्ध व्यवहार छे. २ जीवमां अज्ञान राग द्वेष लाग्या छे ते अशुद्ध पणुं छे माटे अशुद्ध व्यवहार. ३ जे पुण्यनी क्रिया करवी ते शुभ व्यवहार ४ जेथकी जीव पापरूप अशुभकर्म करे ते अशुभ व्यवहार. ५ धन-घर-कुटुंब प्रत्यक्ष सर्व आपणाथी जूदा जूदा छे पण जीवें अज्ञानपणे आपणा करी जाण्या छे ते उपचरित व्यवहार. ६ शरीरादिक परवस्तु यद्यपि जीवथी जुदी छे तोपण परिणामिक भाव लोलीपणे एकठा मिली रह्या छे तेने जीव आपणा करी जाणे छे ते अनुपचरित व्यवहार जाणवो ए व्यवहार नय कह्यो.

हवे ऋजु सूत्र नयनो विचार कहे छे जे अतीत काल अने अनागत कालनी अपेक्षा न करे पण वर्त्तमान काले जे वस्तु जेवा गुणें परिणमे वर्त्ते ते वस्तुने तेवेज परिणामे माने माटे ए नय परिणामग्राही छे जेम कोइक जीव गृहस्थ छे पण अंतरंग साधुसमान परिणाम छे तो ते जीवने साधु कहे अने कोइक जीव साधुने वेषे छे पण मनना परिणाम

विषयाभिलाष सहित छे तो ते जीव अप्रतीज छे एम ऋजुसूत्रनुं मानवुं छे ते ऋजुसूत्रना बे भेद छे एक सूक्ष्म ऋजु सूत्र ते एम कहे जे सदा काल सर्व वस्तुमां एक वर्त्तमानसमय वर्त्ते छे एटले जे जीव गयाकालें अज्ञानी हतो अने अनागत कालें अज्ञानी भावें अज्ञानी थशे एम बेहुकालनी अपेक्षा न करे पण एक वर्त्तमान समये जे जेवो तेने तेवो कहे ते सूक्ष्म ऋजु सूत्र कहियें अने महोटा बाह्यपरिणामग्रहे ते स्थूल ऋजुसूत्र नय जाणवो एटले ऋजुसूत्र नय कह्यो.

हवे शब्दनय कहे छे जे वस्तु गुणवंत अथवा निर्गुण ते वस्तुने नामकही बोलावियें जे भाषावर्गणाथी शब्द पणें वचन गोचर थाय ते शब्द नय जे कारणे अरूपी द्रव्य वचनथी ग्रह्याजाय नही पण वचनथी कहेवा ते शब्द नय कहियें इहां जे शब्दनो अर्थ होय तेपणा जे वस्तुमां वस्तुपणे पामियें तेवारें ते वस्तु शब्दनय कहियें जेम घटनी चेष्टाने करतो होय ते घट ए शब्दनयमां व्याकरणथी नीपना अने बीजा पण सर्व शब्द लीधा ते शब्दनयना चार भेद छे १ नाम २ स्थापना ३ द्रव्य ४ भाव–अने चार निक्षेपाना पण एहिज नाम छे.

१ पहेलो नाम निक्षेपो ते आकार तथा गुणरहित वस्तुने नाम करी बोलाववो जेम एक लाकडीनो कटको लेइने कोइके तेहने जीव एवुं नाम कह्युं ते नाम जीव जाणवुं जेम काली दोरीने सांपनी बुद्धियें करी घावहणे तेहने सांपनी हिंसा लागे ए नाम सर्प थयुं एवीज रीते नाम तप अथवा नाम सिद्ध जेम वड प्रमुखने सिद्धवड एम कही बोलावे छे ते नाम निक्षेपो कहियें ए सूत्र साखें छे.

२ स्थापना निक्षेपो कहे छे जे कोइक वस्तुमां कोइक वस्तुनो आकार देखीने तेहने ते वस्तु कहे जेम चित्राम अथवा

काष्ट पाषाणनी मूर्त्ति तेने घोडा–हाथीनो आकार छे तो ते घोडा हाथी कहेवाय ते स्थापना जाणवी ए स्थापना निक्षेपो नाम निक्षेपें सहित होय जेम स्थापना सिद्ध जिनप्रतिमा प्रमुख ते सद्भाव स्थापना पण होय अने असद्भाव स्थापना पण होय अकृत्रिम जिनप्रतिमा ते नंदीश्वरद्वीप प्रमुखने विषे, अने जेह इहांनी जिनप्रतिमाते कृत्रिम ते सर्व स्थापना जाणवी जेम चित्रामनी स्त्री जिहां मांडी होय तिहां साधु रहे नही. कारण के स्थापना स्त्री छे ते स्त्री तुल्य जाणवी तेमज जिनप्रतिमा जिनसमान जाणवी इहां कोइक अज्ञानी जीव कहे छे, जे स्थापनामां ज्ञानादि गुण नथी तेथी स्थापनाने मानवी पूजवी नही तेने उत्तर कहे छे के स्थापनारूप स्त्रीमां स्त्रीपणाना गुण नथी तो पण ते विकारनुं कारण थाय छे. तेमज जिनप्रतिमां पण ध्याननुं कारण छे अने जे एम पुछे के हिंसा थाय छे अने भगवंते तो दयाने धर्म कह्यो छे तेहने एम कहेवुं जे परदेशी राजा केसी गुरुने वांदवाने अर्थे बीजे दीवसें मोहोटा आडंबरथी आव्यो ते वंदनामां हिंसा थयी पण लाभ कारण गणतां त्रोटो न थयो बीजो मल्लिनाथजीयें छ मित्र प्रतिबोधवाने पुतलीनो दृष्टान्त कह्यो ते हिंसा तो घणी थयी पण ते लाभना कारणमां गणी छे एम भाव शुद्ध होय तिहां हिंसा लागती नथी अथवा कोइक एम कहे छे जे अमे आपणे स्थानके बेठा नमुत्थुणं कहिसुं अमने लाभ थासे ते खरो पण भगवती सूत्रमां भगवानने वंदनाने अधिकारें तो तिहां जइ वंदना करवानुं फल महोटुं कह्युं छे तथा निक्षेपाने अधिकारें एम कह्युं जे भाव निक्षेपो एकलो थाय नही पण नाम स्थापना तथा द्रव्य ए त्रण मिल्या भाव निक्षेपो थाय माटे स्थापना अवश्य मानवी. हवे जे स्थापना न माने तेने कहियें जे चित्रामनी मूर्त्तिने हिंसाना परिणामथी फाडे तेहने हिंसा लागे

छे तेमज जिनवरनाध्याने जिनप्रतिमा पूजतां लाभ थाय छे एम युक्ति करतां तथा आगमनी साखे पण जिनप्रतिमाने जिनसमान माने ते आराधक अने जे जिनप्रतिमाने न माने तेणे स्थापना निक्षेपो उथाप्यो अने स्थापना उथापी तो द्रव्य तथा भाव निक्षेपो थापना विना थाय नही माटे द्रव्य तथा भाव पण उथाप्यो एम त्रण निक्षेपा उथाप्या तेवारें सिद्धान्त उथाप्याज माटे जे जिनप्रतिमाने नही माने ते विराधक जाणवो ते स्थापना इतर अने यावत् कथिक ए बे भेदें छे.

२ द्रव्य निक्षेपो कहे छे, जेनो नाम पण होय तथा आकार थापना गुण पण होय अने लक्षण होय पण आत्मोपयोग न मिले ते द्रव्य निक्षेपो जाणवो एटले अज्ञानी जीव ते जीव स्वरूपना उपयोग विना द्रव्य जीव छे "अणुव ओगोदवं" इति अनुयोगद्वारवचनात् वली कह्युं छे जे सिद्धान्त वांचतां पूछतां पद अक्षर मात्रा शुद्ध अर्थ करे छे अने गुरुमुखे सद्दहे छे ते पण शुद्ध निश्चें पोतानी सत्ता ओलख्या विना सर्व द्रव्य निक्षेपामां छे जे भाव विना द्रव्यपणो छे ते पुण्यबंधनुं कारण छे पण मोक्षनुं कारण नथी एटले जे करणीरूप कष्ट तपस्या करे छे अने जीव अजीव पदार्थनी सत्ता ओलखी नथी तेने भगवती सूत्रमां अव्रती तथा अपच्चख्खाणी कह्यां छे तथा जे एकली बाह्य करणी करे छे अने पोते साधु कहेवाय छे ते मृषा वादी छे एम उत्तराध्ययन सूत्रमां कह्युं छे "नमुणीरन्नवासेणं" एवचनें "नाणेणय मुणी होइ" एवचनथी जे ज्ञानवान ते मुनि छे अने जे अज्ञानी ते मिथ्यात्वी छे तथा कोइक गणितानुयोगना नरक देवताना बोल अथवा यति श्रावकनो आचार जाणीने कहे जे अमेज्ञानी छैयें ते पण ज्ञानी नथी पण जे द्रव्य गुण

पर्याय जाणे तेने ज्ञानी कहियें श्रीउत्तराध्ययने मोक्षमार्गे कह्यो छे. गाथा "एयं पंचविहनाणं दव्वाणयगुणाणय, पज्जवाणं सव्वेसिंच नाणं नाणी हिं देसियं ॥ १ ॥ माटे वस्तु सत्ता जाण्या विना ज्ञानी समजवुं नहीं अने नवतत्व ओळखे ते समकित अने एहवा ज्ञान दर्शन विना जे कहे के अमे चारित्रिआ छैयें ते पण मृषावादी छे कारण के श्रीउत्तराध्ययन सूत्र मध्ये कह्युं छे जे "नाणं दंसण नाणं नाणेण विना न हुंति चरण गुणा" ए वचन छे तेमाटे आज केटलाक ज्ञान हीन क्रियानो आडंबर देखाडे छे ते ठग छे तेहनो संग करवो नही ए बाह्य करणी अभव्यजीवने पण आवे माटे ए बाह्य करणी ऊपर राचवुं नही अने आत्मानुं स्वरूप ओळख्या विना सामायक पडिकमणा पच्चक्खाण करवां ते सर्व द्रव्य निक्षेपामां पुण्याश्रय छे पण संवर नथी श्रीभगवती सूत्र मध्ये कह्युं छे "आया खलु सामाइयं" ए आलावाथी जाणजो तथा जीव स्वरूप जाण्या विना तप संयम पुण्य प्रकृति ते देवतानां भवनुं कारण छे "पुव्व तवेणं पुव्व संयमेणं देवलोए उववज्जंति नो चेवणं आयभाववत्तवयाए" ए आलावो भगवतीमां कह्यो छे तथा जे क्रियालोपी आचारहीन छे अने ज्ञानहीन छे मात्र गच्छनी लाजें सिद्धान्त भणे वांचे छे व्रत पच्चक्खाण करे छे ते पण द्रव्य निक्षेपो जाणवो एम श्री अनुयोगद्वारमां कह्युं छे.

जे इमे समणगुणमुक्कजोगी छकायनिरणुकंपा हयाइव उद्दामा गयाइव निरंकुसा घट्ठामट्ठा तुप्पोट्ठा ॥ पंडुरपडपाउरणा जिणाणमणाणाएसछंदा विहरिऊण उभओ कालं आवस्सगस्स उवट्ठंति से तं लोगुत्तरियं दव्वावस्सयं ॥

अर्थ—जेने छकायनी दया नथी घोडानीपेरें उन्मद छे हाथीनीपेरें निरंकुश छे पोताना शरीरने धोवतां मसळता

उजले कपडे शिणगार करी गच्छना ममत्वभावें माचतां स्वेच्छाचारी वीतरागनी आज्ञा भांजता जे तप क्रिया करे छे ते पण द्रव्य निक्षेपामां छे अथवा ज्योतिष वैद्यक करे छे अने पोताने आचार्य उपाध्याय कहेवरावीने लोकपासें महिमा करे छे ते पत्रीबंध खोटा रूपैया जेवा छे घणा भव भमसे माटे अवंदनीक छे ए साख उत्तराध्ययन मध्ये अनाथी मुनिना अध्ययन थकी जाणवी अने सूत्रना अर्थ गुरुमुखे सिख्याविना तथा नय प्रमाण जाण्या विना निश्चें आत्मानुं स्वरूप ओळख्या विना निर्युक्ति विना उपदेश आपे छे ते पोते तो संसारमां बुड्या छे पण जे तेमनी पासे बेसे छे तेमने पण संसारमां बुडावे छे एम प्रश्नव्याकरणसूत्र तथा अनुयोगद्वारसूत्रमां कह्युं छे "अजत्थ चेव सोलसमं" इत्यादि अने भगवती सूत्रमां पण कह्युं छे "सुतत्थो खलु पढमो, बीओ निज्जुत्तिमीसओ भणिओ, तइओ य निरवसेसो एस विही होइ अणुओगो" अने केटलाक एम कहे छे जे अमे सूत्र ऊपर अर्थ करिये छैयें तो निर्युक्ति तथा टीका प्रमुखनुं शुं काम छे तेपण मृषावाद छे केम के श्रीप्रश्नव्याकरणमां "वयणतियं लिंगतियं" इत्यादिक जाण्या विना अने नय निक्षेप जाण्या विना जे उपदेश आपे ते मृषावाद छे एम अनेक सूत्रमां कह्युं छे माटे बहुश्रुत पासे उपदेश सांभळवो श्री उत्तराध्ययन मध्ये बहुश्रुतने मेरुनी तथा समुद्रनी अने कल्पवृक्षादि सोल उपमा दीधी छे ए द्रव्य-निक्षेपो कह्यो.

४ भावनिक्षेपो कहे छे. जे नाम स्थापना अने द्रव्य ए त्रण निक्षेपा ते एक भावनिक्षेपा विना अशुद्ध छे जे नाम तथा आकार लक्षण गुण सहित वस्तु ते भाव निक्षेपो जाणवो उवओगोभाव इति वचनात् एटले पूजा दान शील

तप क्रिया ज्ञान ए सर्व भावनिक्षेपे सहित लाभनुं कारण छे इहां कोइ कहेशेजे मनना परिणाम दृढ करीने जे करियें तेने भाव कहियें एम कहे छे ते जूठा छे ए तो सुखनी वांछायें मिथ्यात्वी पण घणा करे छे ते गणावुं नही इहां सूत्रनी साखे वीतरागनी आज्ञा हेय उपादेयनी परिक्षा करी अजीवतत्व तथा आश्रवतत्व अने बन्धतत्व ऊपर हेय केहतां त्याग भाव अने जीवना स्वगुण जे संवर निर्जरा तथा मोक्षतत्व ऊपरें उपादेय परिणाम ते भाव कहिये एटले रूपी-गुण ते द्रव्य निक्षेप छे अने अरूपीगुण ते भावनिक्षेप छे एटले मन वचन काया लेश्यादिक सर्व द्रव्य निक्षेपामां छे अने ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य ध्यान प्रमुख सर्व गुण भावनिक्षेपामां छे ए भाव निक्षेपो ते नामस्थापना तथा द्रव्य सहित होय एटले चार निक्षेपा कह्या.

हवे चार निक्षेपा पदार्थ ऊपर लगाडी देखाडे छे नाम जीव ते चेतना अथवा मांचाने एक वाणने जीव कही बोलावे छे. ते नाम निक्षेपे जीव, मूर्ति प्रमुख थापियें ते स्थापना जीव एकेंद्रीथी पंचेंद्री पर्यंत सर्व जीव छे पण उपयोग मिले नहि ते द्रव्यजीव अने मूर्तिमां जीव स्वरूप ओलखी समकितना उपयोगमां छे ते भावजीव एम धर्मास्तिकायादिक द्रव्यमां पण जाणवुं नामथी धर्मास्तिकाय कही बोलाववो तेना नाम धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय एहवा अक्षर लखवा दृष्टांत कारणे कांइक वस्तु थापवी ते स्थापना धर्मास्तिकाय तथा धर्मास्तिकाय जे असंख्यातप्रदेशी धर्मद्रव्य छे ते द्रव्य धर्मास्तिकाय ए धर्मास्तिकायने जेवारें चलण सहाय गुणनी अपेक्षासहित ओलखियें ते भाव धर्मास्तिकाय.

हवे कोइकनो साधु एहवो नाम छे ते नाम साधु अने स्थापना करियें ते स्थापनासाधु तथा जे पंचमहाव्रत पाले

क्रिया अनुष्ठान करे सुजतो आहारलीये पण ज्ञानध्याननो जेवो उपयोग जोइये तेवो उपयोग न होय ते द्रव्यसाधु जे भाव संवरमोक्षनो साधक थइ भाव साधुनी करणी करे ते भाव निक्षेपे साधु कहियें.

कोइकनो अरिहंत नाम छे ते नाम अरिहंत अने अरिहंतनी प्रतिमा ते थापना अरिहंत जेटलासुधी छद्मस्थ अवस्था ते द्रव्य अरिहंत अने केवलज्ञान पाम्या पछे लोकालोकनो भाव जाणे देखे ते भाव अरिहंत एम सिद्धमां पण कहेवो.

कोइ जीवनो ज्ञान एहवो नाम अथवा भवें अजीवनो नाम ते नामज्ञान तथा जे ज्ञान पुस्तकमां लख्युं छे ते स्थापनाज्ञान जे उपयोग विना सिद्धांतनो भणवो अथवा अन्यमतिना सर्वशास्त्र भणवा तथा ज्ञशरीरादिक ते सर्व द्रव्यज्ञान जे नवतत्वनुं जाणवुं ते भावज्ञान.

तथा कोइकनुं तप एहवुं नाम ते नामतप तथा पुस्तकमां तपनी विधीनुं लखन ते थापनातप अने पुण्यरूप मासखमणादिक करवो ते द्रव्यतप जे परवस्तु ऊपर त्यागनो परिणाम ते भावतप एम संवरादिक सर्वमां चार चार निक्षेपा जाणवा तथा श्रीअनुयोगद्वार मध्ये कह्युं छे–यतः "जत्थ य जं जाणिज्जा निक्खेवं निक्खिवे निरवसेसं ॥ जत्थविय न जाणेज्जा चउक्कगं निक्खिवे तत्थ ॥ १ ॥ ए चार निक्षेपा कह्या एटले शब्द नय कह्यो.

हवे छट्ठो समभिरूढ नय कहे छे जे वस्तुना केटलाक गुण प्रगट्या छे अने केटलाक गुण प्रगट्या नथी पण अवश्य प्रगटशे एहवी वस्तुने वस्तु कहे ते वस्तुना नामांतर एक करी जाणे जेम जीव चेतन तथा आत्मा एहनो एक अर्थ

कहे ते समभिरूढ नय कहियें ए नय एक अंश ओछी वस्तुने पूरे पूरी वस्तु कहे जेम तेरमां गुणठाणे केवली होय तेहने सिद्ध कहे ए नयना भेद बिलकुल नथी ए समभिरूढ नय कह्यो.

हवे एवंभूत नय कहे छे जे वस्तु पोताने गुणे संपूर्ण छे अने पोतानी क्रिया करे छे तेने ते वस्तु कही बोलावे जेम मोक्षस्थानकें जे जीव पहोतो तेनें सिद्ध कहे जेम पाणीथी भरेलो स्त्रीना माथा ऊपर आवतो जल धरण क्रिया करतो तेने घडो कहे ए एवं भूतनय कह्यो.

हवे सात नयना दृष्टान्त श्रीअनुयोगद्वारसूत्रथी लखियें छैयें. जेम कोइक पुरुषे कोइक बीजा पुरुषने पूछ्युं जे तमे किहां वसोछो तेवारें ते पुरुषे कह्युं हुं लोकमां वसुं छुं तेवारें अशुद्ध नैगमवाले पुछ्युं जे लोकना त्रण भेद छे १ अधो-लोक २ त्रिछोलोक ३ ऊर्ध्वलोक तेमां तुं किहां रहे छे तेवारें शुद्धनैगमें कह्युं जे त्रिछालोकमां रहुं छुं वलीपुछ्युं जे त्रिछेलोकमां असंख्याता द्वीप समुद्र छे तेमां तुं कयाद्वीपमां रहे छे तेवारें विशुद्धनैगमें कह्युं जे जंबुद्वीपमां रहुं छुं ते जंबुद्वीपमां खेत्र घणा छे ते तेमां तु कया खेत्रमां रहे छे तेवारें अतिशुद्धनैगम बोल्यो जे भरत क्षेत्रमां रहुं छुं ते क्षेत्रना छ खंड छे ते मांहेलां कया खंडमां रहे छे तेवारें कह्युं जे मध्य खंडमां रहुं छुं एम क्रमे पूछतां छेल्ले कह्युं जे आपणा देशमां रहुं छुं तेवारें फरी पुछ्युं जे देशमां तो नगरग्राम घणा छे तो तुं किहां रहे छे तेवारें कह्युं जे हुं अमुक गाममां रहुं छुं ते गाममां वली अमुक पाडो तथा अमुक घर बताव्युं तिहां सुधी नैगम नय जाणवो.

अने संग्रह नयवालो बोल्यो जे मारा पोताना शरीरमां वसुं छुं तथा व्यवहार नयवालो बोल्यो जे संथारे बेठो छुं

तेटलाज बिछानामां रहुं छुं अने ऋजुसूत्र नयवाले कह्यं जे मारा आत्माना असंख्याता प्रदेशमां रहुं छुं वली शब्द नय कहे जे मारा स्वभावमां रहुं छुं तेमज समभिरूढ नय कहे जे हुं मारा गुणमां रहुं छुं अने एवंभूतनयवादी कहे जे ज्ञान दर्शनगुणमां वसुं छुं ए दृष्टांत कह्यो एम सर्व वस्तुमां कहेवुं,

तथा कोइके प्रदेशमात्र खेत्र अंगीकार करी पुछयुं जे ए प्रदेश कया द्रव्यनो छे तेवारें नैगमनय बोल्यो जे छए द्रव्यनो प्रदेश छे केमके एक आकाश प्रदेशमध्ये छ द्रव्य भेला छे तेवारें संग्रहनय बोल्यो जे काल द्रव्य तो अप्रदेशी छे ते माटे सर्व लोकमां एक समय सरिखो छे पण ते एक आकाश द्रव्यना प्रदेशमां जूदो नथी माटे काल विना पांच द्रव्यनो प्रदेश छे तेवारें व्यवहार नय बोल्यो के जे द्रव्य मुख्य देखाय छे तेहनो प्रदेश छे तेवारें ऋजूसूत्रनय बोल्यो के जे द्रव्यनो उपयोग देइ पुछियें ते द्रव्यनो प्रदेश छे जो धर्मास्तिकायनो उपयोग देइ पुछियें तो धर्मास्तिकायनो प्रदेश छे जो अधर्मास्तिकायनो उपयोग देइ पुछियें तो अधर्मास्तिकायनो प्रदेश छे तेवारें शब्दनय बोल्यो के जे द्रव्यनो नाम लइ पुछियें ते द्रव्यनो प्रदेश छे हवे समभिरूढ नय बोल्यो जे एक आकाश प्रदेश मध्ये धर्मास्तिकायनो एक प्रदेश छे अधर्मास्तिकायनो एक प्रदेश छे अने जीवना अनंता प्रदेश छे पुद्गलना पण अनंता प्रदेश छे तेवारें एवं भूत-नय बोल्यो के प्रदेशने जे द्रव्यनी क्रिया गुण पर्याय अंगीकार करी देखियें ते समय ते प्रदेश ते द्रव्यनो गणियें ए प्रदे-शमां सात नय कह्या.

हवे जीवमां सात नय कहे छे प्रथम नैगमनयनी मते जे गुण पर्यायवंत शरीर सहित ते जीव एटले शरीरमां जे

बीजा पुद्गल तथा धर्मास्तिकायादिक द्रव्य छे ते सर्व जीवमांज गण्या तेवारें संग्रहनय बोल्यो जे असंख्यात प्रदेशी ते जीव एटले एक आकाशना प्रदेश टल्या बीजा सर्वद्रव्य एमां गणाणा तेवारें व्यवहारनय बोल्यो जे विषयलेयी काम वात संभारे ते जीव इहां धर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय आकाश तथा बीजा पुद्गल सर्व टल्या पण पांचेइन्द्री तथा मन अने लेश्या ए पुद्गल छे ते जीवमां गणाणा कारणके विषयादिकतो इंद्रियो लेछे ते जीवथी न्यारा छे पण इहां व्यवहार नय मते जीव भेला लीधा छे तेवारें ऋजुसूत्रनय बोल्यो जे उपयोगवंत ते जीव इहां इंद्रियादिक सर्व टल्या पण अज्ञान तथा ज्ञानना भेद टल्या नही हवे शब्द नय बोल्यो जे नामजीव स्थापनाजीव द्रव्यजीव भावजीव इहां जीवमां गुण-निर्गुणनो भेद पड्यो नही तेवारें समभिरूढ नय बोल्यो जे ज्ञानादि गुणवंत ते जीव तेवारें मतिज्ञान श्रुतज्ञान इत्यादिक साधक अवस्थाना गुण ते सर्व जीव स्वरूपमां आव्या हवे एवंभूतनय बोल्यो जे अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंत चारित्र शुद्धसत्तावंत ते जीव ए नये जे सिद्ध अवस्थामां गुणहता तेजग्रह्या ए सात नये जीव द्रव्य कह्यो.

हवे सात नयें धर्म कहे छे नैगमनय बोल्यो जे सर्व धर्म छे केमके सर्व प्राणी धर्मने चाहे छे ए नय अंशरूप धर्मने धर्म एहवुं नाम कहे हवे संग्रहनय बोल्यो जे वडेरायें आदर्यो ते धर्म एणे अनाचार छोड्यो पण कुलाचारने धर्म कह्यो व्यवहार नय बोल्यो जे सुखनुं कारण ते धर्म एणे पुण्यकरणीने धर्म करी मान्यो ऋजुसूत्रनय मते जे उपयोग सहित वैरागरूप परिणाम ते धर्म कहियें ए नयमां यथा प्रवृत्ति करणना परिणाम प्रमुख सर्व धर्ममां गण्यां ते मिथ्यात्वीने पण होय हवे शब्दनय बोल्यो जे धर्मनुं मूल समकित छे माटे समकित तेज धर्म तेवारें समभिरूढनय बोल्यो

जे जीव अजीव नवतत्व तथा छ द्रव्यने ओलखीने जीव सत्ताध्यावे अजीवनो त्याग करे एहवो ज्ञान दर्शन चारित्रनो शुद्ध निश्चय परिणाम ते धर्म ए नये साधक सिद्धना परिणाम ते धर्म पणे लीधा एवं भूतनय बोल्यो जे शुक्लध्यान रूपातीतना परिणाम क्षपकश्रेणी कर्म क्षयना कारण ते धर्म जे जीवनो मूलस्वभाव ते वस्तुधर्म जे मोक्षरूप कार्यने करे ते धर्म ए साते नयें धर्म कह्यो.

हवे सात नयें सिद्धपणो कहे छे नैगमनयने मते सर्वजीव सिद्ध छे केमके सर्वजीवना आठरुचकप्रदेश सिद्ध समान निर्मल छे माटे, संग्रहनय कहे जे सर्वजीवनी सत्ता सिद्धसमान छे एणे पर्यायार्थिकनयें करी कर्म सहित अवस्था ते टालीने द्रव्यार्थिक नयें करी अवस्था अंगीकार करी तेवारें व्यवहारनय बोल्यो जे विद्या लब्धि प्रमुख गुणे करी सिद्ध थयो ते सिद्ध ए नये बाह्य तप प्रमुख अंगीकार कर्या हवे ऋजुसूत्रनय बोल्यो के जेणे पोताना आत्मानी सिद्धपणानी सत्ता ओलखी अने ध्याननो उपयोग पण तेज वर्त्ते छे ते समयें ते जीव सिद्ध जाणवो ए नये समकेति जीव सिद्ध समान छे एम कह्युं हवे शब्दनय बोल्यो जे शुद्ध शुक्लध्यान परिणाम नामादिक निक्षेपें ते सिद्ध तेवारें समभिरूढनय बोल्यो जे केवलज्ञान केवलदर्शन यथाख्यात चारित्र ए गुणे सहित ते सिद्ध जाणवा ए नयें तेरमां चउदमां गुणठाणाना केवलीने सिद्ध कह्या अने एवंभूतनय कहे छे के जेना सकल कर्मक्षय थया लोकने अंते विराजमान अष्टगुण संपन्न ते सिद्ध जाणवा एरीते सिद्ध पदें सात नय कह्या एम सात नय मिल्या समकेति छे अने जे

एक नयने ग्रहण करे ते मिथ्यात्वी छे ए साते नयसिद्ध ते वचन प्रमाण छे अने ए सात नयमां कोइपण नयने उथापे तेनुं वचन अप्रमाण छे.

हवे प्रमाणनो विचार कहे छे. प्रमाणना बे भेद छे एक प्रत्यक्षप्रमाण बीजुं परोक्षप्रमाण तेमां जे जीव पोताना उपयोगथी द्रव्यने जाणे ते प्रत्यक्ष प्रमाण कहियें जेम केवली छ द्रव्य प्रत्यक्ष प्रमाणे जाणे तथा देखे ते माटे केवल ज्ञान ते सर्वथी प्रत्यक्ष ज्ञान छे अने मनपर्यवज्ञान ते मनो वर्गणा प्रत्यक्ष जाणे तथा अवधिज्ञान ते पुद्गल द्रव्यने प्रत्यक्ष जाणे माटे ए बे ज्ञान देशप्रत्यक्ष छे बीजुं छद्मस्थ ज्ञान ते सर्व परोक्ष प्रमाण छे.

हवे परोक्ष प्रमाण कहे छे मतिज्ञाननो अने श्रुतज्ञाननो उपयोग परोक्ष प्रमाण छे केमके जे शास्त्रना बलथी जाणे ते परोक्ष प्रमाण कहियें ते परोक्ष प्रमाणना त्रण भेद छे १ अनुमाणप्रमाण २ आगमप्रमाण ३ उपमानप्रमाण तेमां अनुमाण एटले कोइक सहिनाण देखीने जे ज्ञान थाय जेम धुमाडो देखीने अग्निनुं अनुमान थाय अने आगम एटले शास्त्रनी साखथी जे वात जाणियें जेम देवलोक तथा नरक निगोद विगेरेनो विचार आगमथी जाणियें छैये ते आगम प्रमाण अने कोइक वस्तुनो दृष्टान्त आपीने वस्तुने ओलखाववी ते उपमान प्रमाण जाणवो ए प्रमाण कह्या हवे सत् असत् पक्षथी सप्तभंगी कहे छे.

१ स्यात् केहतां अनेकांत पणे सर्व अपेक्षा लेइ जीवद्रव्यमां आपणो द्रव्य आपणो क्षेत्र आपणो काल आपणो भाव एम आपणे गुण पर्यायें जीव छे तेम सर्व द्रव्य आपणे गुणपर्यायें छे ते स्यात् अस्ति नामा पहेलो भांगो थयो.

२ जे जीवमां बीजा पांच द्रव्यना १ द्रव्य २ खेत्र ३ काल ४ भाव ते परद्रव्यना गुणपर्याय जीवमांनथी एटले पर-द्रव्यना गुणनो नास्तिपणो सर्व द्रव्यमां छे ए स्यात् नास्ति बीजो भांगो थयो.

३ द्रव्य स्वगुणे अस्ति अने परगुणे नास्ति ए बे भांगा एक समये द्रव्यमां छे जेम जे समये शुद्ध स्वगुणनी अस्ति छे तेज समयें परगुणनी नास्ति पण छे माटे अस्ति नास्ति ए बेहुं भांगा भेला छे ते स्यात् अस्ति नास्ति त्रीजो भांगो थयो.

४ अस्ति अने नास्ति ए बेहु भांगा एक समयमां छे तो वचने करी अस्ति एटलो बोलतां असंख्याता समय लागे तेथी नास्ति भांगो. तेज वखते कहवाणो नही अने जो नास्ति भांगो कह्यो तो अस्ति पणो नाव्यो माटे एकज अस्ति कहेतां थकां नास्तिपणो तेज समये द्रव्यमां छे ते नही कहेवाणो माटे मृषावाद लागे तेमज नास्ति कहतां अस्तिनो मृषावाद लागे माटे वचने अगोचर छे एक समयमां बेहु वचन बोल्या जाय नही केमके एक अक्षर बोलतां असं-ख्याता समय लागे छे माटे वचनथी अगोचर छे ते स्यात् अवक्तव्य ए चोथो भांगो कह्यो.

५ ते अवक्तव्यपणो वस्तुमां अस्तिधर्मनो पण छे माटे स्यात् अस्ति अवक्तव्य पांचमो भांगो कह्यो.

६ तेमज नास्ति धर्मनो पण अवक्तव्य पणो वस्तु मध्ये छे माटे स्यात् नास्ति अवक्तव्य छट्ठो भांगो जाणवो.

७ ते अस्तिपणो तथा नास्तिपणो बेहु धर्म एक समये वस्तु मध्ये छे पण वचनथी अवक्तव्य छे माटे स्यात् अस्ति-नास्ति युगपत् अवक्तव्य ए सातमो भांगो कह्यो.

हवे ए सात भांगा नित्य तथा अनित्यपणमां लगाडे छे १ स्यात् नित्यं २ स्यात् अनित्यं ३ स्यात् नित्यानित्यं ४

स्यात् अवक्तव्यं ५ स्यात् नित्य अवक्तव्यं ६ स्यात् अनित्य अवक्तव्यं ७ स्यात् नित्यानित्यं युगपत् अवक्तव्यं एमज एक अनेकना सात भांगा कहेवा तथा गुणपर्यायमां पण कहेवा केमके सिद्ध मध्ये नय नथी तोपण सप्तभंगीतो सिद्धमां छे.

हवे सत्ता ओळखाववाने त्रिभंगीयो कहे छे. १ मिथ्यात्व दशा ते बाधकदशा २ समकित गुणठाणाथी मांडीने अयोगी केवली गुणठाणा सुधीसाधक दशा जाणवी ३ सर्वकर्मथी रहित ते सिद्धदशा १ ज्ञाननो जाणपणो ते जीवनो गुण २ तेनो ज्ञाता ते जीव ३ ज्ञेय ते सर्व द्रव्य १ ध्यान ते जीवना स्वरूपनो २ ते ध्याननो ध्याताजीव ३ ध्येय आत्मानो स्वरूप १ कर्त्ता ते जीव २ कर्मते एक मोक्ष बीजो बन्ध ३ क्रिया ते एक संवर बीजी आश्रव १ कर्म ते चेतनाने कर्म बंधना परिणाम २ कर्मनुं फल ते चेतनाने जे कर्म उदयनापरिणाम ३ ज्ञान चेतना ते जीवनो स्वगुण ते आत्माना त्रण भेद छे १ अज्ञानी जीव शरीरादिक परवस्तुने आत्मबुद्धियें करीमाने ते पहेलो बहिरात्मा २ जे देह सहित जीव छे ते पण निश्चै सत्तागुण सिद्ध समान छे एटले पोताना जीवने सिद्ध समान करी ध्यावे ते बीजो अंतर आत्मा जाणवो ३ कर्मखपावी केवल ज्ञानपाम्या ते अरिहंत तथा सिद्ध सर्व परमात्मा जाणवा ए त्रिभंगीनो विचार कह्यो एटले आठ पक्षनो विचार कह्यो.

हवे एक द्रव्य मध्ये छ सामान्य गुण छे ते कहे छे पहेलो अस्तित्व ते जे छ द्रव्य आपणा गुण पर्याय प्रदेशे करी अस्ति छे तेमां धर्म अधर्म आकाश अने जीव ए चार द्रव्यमां तीन द्रव्यनो असंख्याता प्रदेश मिल्या खंध थाय छे अने आकाशनो अनंत प्रदेशनो खंध थाय अने पुद्गलमां खंध थवानी शक्ति छे माटे ए पांच द्रव्य अस्तिकाय छे अने

छट्ठो काल द्रव्यनो समय कोइ कोइथी मिलतो नथी केमके एक समय विणस्या पछे बीजो समय आवे छे माटे काल अस्तिकाय नथी ए द्रव्यमां अस्तित्व पणो कह्यो.

२ वस्तुत्व केहतां वस्तुपणो कहे छे ते द्रव्य छए एकठा एक खेत्र मध्ये रह्या छे एक आकाश प्रदेशमां धर्मास्तिकायनो एक प्रदेश रह्यो छे तथा अधर्मास्तिकायनो पण एक प्रदेश रह्यो छे अने जीव अनंताना अनंता प्रदेश रह्या छे पुद्गल परमाणु अनंता रह्या छे ते सर्व पोतानी सत्ता लीधा थका रह्या छे पण कोइ द्रव्य कोइ द्रव्य साथे मिली जातो नथी ते वस्तु पणो.

३ द्रव्यत्व केहतां द्रव्यपणो ते सर्व द्रव्यपोतपोतानी क्रिया करे एटले धर्मास्तिकायमां चलणगुण ते सर्व प्रदेश मध्ये छे सदा कालें पुद्गल तथा जीवने चलाववा रूपक्रिया करे छे इहां कोइ पुछे जे लोकान्त सिद्धखेत्रमां धर्मास्तिकाय छे ते सिद्धना जीवने चलाववापणो करती नथी ते केम? तेने उत्तर कहे छे जे सिद्धना जीव अक्रिय छे माटे चालता नथी पण ते खेत्रमां जे सूक्ष्म निगोदना जीव तथा पुद्गल छे तेहने धर्मास्तिकाय चलावे छे माटे पोतानी क्रिया करे छे तेमज अधर्मास्तिकाय जीव तथा पुद्गलने स्थिर राखवानी क्रिया करे छे तथा आकाशद्रव्य ते सर्व द्रव्यने अवगाहना रूपकार्य करे छे इहां कोइ पूछे जे अलोकाकाशमां तो बीजुं कोइ द्रव्य नथी तो अलोकाकाश कया द्रव्यने अवगाहदान आपे छे तेने उत्तर कहे छे जे अलोकाकाशमां अवगाह करवानी शक्ति तो लोकाकाश जेवीज छे परंतु तिहां

अवगाहनो दान लेनार द्रव्य कोइ नथी माटे अवगाहदान करतो नथी अने पुद्गल द्रव्य मिलवा विखरवारूप क्रिया करे छे तथा कालद्रव्य वर्त्तनारूप क्रिया करे छे अने जीवद्रव्य ज्ञान लक्षण उपयोगरूप क्रिया करे छे एम सर्व द्रव्य पोताने परिणामी स्वसत्तानी क्रिया करे छे ए द्रव्यत्वपणो कह्यो.

४ प्रमेयत्वं केहतां प्रमेयपणो, जे छ द्रव्यमां प्रमेयपणो छे तेनो प्रमाण केवली पोताना ज्ञानथी करे छे जे धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय अने आकाशास्तिकाय एकेक द्रव्य छे अने जीव द्रव्य अनंता छे तेहनी गणति कहे छे संज्ञी मनुष्य संख्याता छे असंज्ञी मनुष्य असंख्याता छे नारकी असंख्याता छे देवता असंख्याता छे तिर्यंच पंचेन्द्री असंख्याता छे बेंद्री असंख्याता छे तेन्द्री असंख्याता चौरेंद्री असंख्याता छे ते थकी पृथ्वीकाय असंख्याता अपकाय असंख्याता तेउकाय असंख्याता वायुकाय असंख्याता प्रत्येक वनस्पति जीव असंख्याता ते थकी सिद्धना जीव अनंता ते थकी बादर निगोदना जीव अनंत गुणा एटले बादर निगोद ते कंदमूल आदु सूरण प्रमुख एहने सुइने अग्रभागें अनंता जीव छे ते सिद्धना जीवथी अनंत गुणा छे अने सूक्ष्म निगोद सर्वथी अनंत गुणा छे ते सूक्ष्म निगोदनो विचार कहे छे जेटला लोकाकाशना प्रदेश छे तेटला गोला छे ते एकेक गोलामां असंख्याता निगोद छे निगोद शब्दनो अर्थ ए छे जे अनंता जीवनो पिंडभूत एक शरीर तेहने निगोद कहियें ते एकेकी निगोद मध्ये अनंता जीव छे ते अतीत कालना सर्व समय तथा अनागतकालना सर्व समय अने वर्त्तमान कालनो एक समय तेने भेला करी अनंत गुणा करियें एटला एक निगोदमां जीव छे एटले अनंता जीव छे ए संसारी जीव एकेकाना असंख्याता प्रदेश छे अने एकेका

प्रदेशे अनंतिकर्मवर्गणा लागी छे ते एकेक वर्गणा मध्ये अनंता पुद्गल परमाणु छे एम अनंता परमाणु जीवसाथे लाग्या छे ते थकी अनंत गुणा पुद्गल परमाणुं जीवथी रहित छुटा छे.

गोलाय असंखिज्जा, असंखनिगोयओ हवइ गोलो । इक्किक्कम्मि निगोए, अनंतजीवा मुणेयव्वा ॥१॥

अर्थ—लोकमांहे असंख्याता गोला छे एकेका गोला मध्ये असंख्याति निगोद छे एकेक निगोदमां अनंता जीव छे.

सत्तरससमहिआ, किर इगाणुपाणुम्मिहुंति खुड्डभवा । सगतिससयतिहुत्तर, पाणुं पुण इगमुहुत्तंमि ॥१॥

अर्थ—निगोदिया जीव ते मनुष्यना एक उसासमां सत्तर १७ भव झाजेरा करे छे अने सडत्रीससो तिहुंतेर ३७७३ श्वासोच्छ्वास एक मुहूर्त्तमां थाय.

पणसट्ठिसहस्स पणसय, छत्तिसा इगमुहुत्त खुड्डभवा । आवलियाणं दो सय, छपन्ना एगखुड्डभवे ॥ १ ॥

अर्थ—निगोदना जीव एक मुहूर्त्तमां ६५५३६ भव करे अने निगोदनो एक भव २५६ आवलीनो छे क्षुलक भवनो ए प्रमाण छे.

अत्थि अनंताजीवा, जेहिं न पत्तो तसाइपरिणामो । उववज्जंति चयंति य, पुणोवि तत्थेव तत्थेव ॥ १ ॥

अर्थ—निगोदमां अनंता जीव एहवा छे जे जीव त्रस पणो पहेला किवारें पाम्यां नथी अनंतो काल पूर्वे गयो अने अनंतो काल जाशे पण ते जीव वारंवार तिहांज उपजे छे अने तिहांज चवेछे एम एक निगोदमां अनंता जीव छे ते

निगोदना बे भेद छे एक व्यवहारराशीनिगोद अने बीजो अव्यवहारराशीनिगोद तेमां जे बादरएकेंद्रीपणो भावें त्रसपणो पामीने पाछा निगोदमां जाइ पड्या छे ते निगोदिया जीवने व्यवहार राशीया कहियें अने जे जीव कोइपण काले निगोदमांथी निकल्या नथी ते जीव अव्यवहारराशीया कहियें अने इहां मनुष्यपणाथी जेटला जीव कर्म खपा-वीने एक समयमां मोक्ष जाय छे तेटला जीव तेज समये अव्यवहार राशी सूक्ष्म निगोदमांथी निकलीने उचां आवे छे जो दशजीव मोक्षजायतो दशजीव निकले कोइक वेलाए भव्यजीव ओछा निकले तो ते ठेकाणे एक बे अभव्य निकले पण व्यवहारराशीमां जीव कोइ वधे घटे नही एवा निगोदना असंख्याता लोकमांहेला गोलाते छ दिशीना आव्या पुद्गलने आहारादि पणे ले छे ते सकल गोला कहेवाय अने लोकने अंतना प्रदेशे जे निगोदना गोला रह्या छे तेने त्रण दिशीना आहारनी फरशना छे माटे विकल गोला कहियें ए सूक्ष्म निगोदमां पांच थावरना सूक्ष्म जीव ते सर्व लोकमां काजलनी कुंपलीनीपेरे भर्याथका व्यापी रह्या छे अने साधारणपणो ते मात्र एक वनस्पतिमांज छे पण चार थावरमां नथी ए सूक्ष्म निगोदमां अनंतु दुःख छे तेनुं उदाहरण कहे छे सातमी नरकनुं आउष्य तेत्रीस सागरोपमनुं छे तेत्रीस सागरोपमना जेटला समय थाय तेटला वखत सातमी नरकमां उत्कृष्टो तेत्रीस सागरोपमने आयुषे कोइक जीव उपजे तेटला. भवमां जेटलुं छेदन भेदननुं दुःख थाय ते सर्व एकठुं करियें तेथी अनंतगुणुं दुःख निगोदना जीव एक सम-यमां भोगवे छे दृष्टान्त जेम कोइक मनुष्यने साडा त्रण क्रोड लोढानी सुइने अग्निथी तपावीने कोइक देवता समकाले चोभे तेने जे वेदना थाय तेथी अनंत गुणी वेदना निगोद मध्ये छे अने भव्य जीवने निगोदनुं कारण ते अज्ञान दशा

छे माटे तेहनो त्याग करो ए निगोदनो विचार कह्यो ए सर्व प्रमेयनो प्रमाता आत्मा पोताना ज्ञान गुणे करी प्रमेयनो प्रमाण करे ए प्रमेयत्व पणो कह्यो.

५ सत्वपणो ते छ द्रव्य एक समयमां उपजे विणशे छे अनेस्थिरपणे छे उत्पाद व्यय ध्रुवपणो तेहिज सत्पणो (उत्पाद व्ययध्रुवयुक्तं सत्) इति तत्वार्थ वचनात् ते विस्तारथी कहि देखाडे छे जे धर्मास्तिकायना असंख्याता प्रदेश छे तिहां एक प्रदेशमां अगुरुलघु असंख्यातो छे अने बीजा प्रदेशमां अनंतो अगुरुलघु छे त्रीजा प्रदेशमां असंख्यातो अगुरु लघु छे एम असंख्याता प्रदेशमां अगुरुलघु पर्याय घटतो वधतो रहे छे ते अगुरुलघु पर्याय चल छे ते जे प्रदेशमां असंख्यातो छे ते प्रदेशमां अनंतो थाय छे अने अनंत जे ठेकाणे असंख्यातो थाय छे एम लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेशमां सरीखो समकालें अगुरु लघु पर्याय फिरे छे ते जे प्रदेशमां असंख्यातो फिटीने अनंतो थाय छे ते प्रदेशमां असंख्यातपणानो विनाश छे अने अनंत पणानो उपजवो छे अने अगुरुलघु पणे गुण ध्रुव छे एम उपजवो विणसवो अने ध्रुव ए त्रणे परिणाम छे.

अधर्मास्तिकायमां पण ए त्रणे परिणाम असंख्यात प्रदेशें सदा समय समयमां परिणामी रह्या छे तेमां पण उपजे विणशे अने थिररहे छे एम आकाशना अनंता प्रदेशमां पण एक समयें त्रण परिणाम परिणमे छे अने जीवनां असंख्याता प्रदेश छे ते मध्ये पण उपजे विणशे थिर रहे तथा पुद्गल परमाणुमां पण समय समय थाय छे अने कालनो वर्त्तमान समय फिटीने अतीत काल थाय छे तो ते समयमां वर्त्तमानपणानो विनाश छे अने अतीतपणानो उपजवो छे

काल पणे ध्रुव छे ए स्थूल थकी उत्पाद व्यय ध्रुवपणो कह्यो अने वस्तुगते मूलपणे ज्ञेयने पलटवे ज्ञाननो पण ते भासन पणे परिणमवो थाय ते पूर्व पर्यायना भासननो व्यय अने अभिनव ज्ञेयनां पर्याय भासननो उत्पाद तथा ज्ञान-पणानो ध्रुव ए रीते सर्व गुणना धर्मनी प्रवृत्तिरूप पर्यायनो उत्पाद व्यय श्रीसिद्ध भगवन्तमां पण थइ रह्यो छे एमज धर्मास्तिकायना प्रदेशें जे खेत्रगत असंख्याता पुद्गल तथा जीवने पहेले समय चलण सहायी पणो परिणमतो हतो अने बीजे समय अनन्त परमाणुं तथा अनन्ता जीव प्रदेशने चलण सहायी थयो तेवारें असंख्याता चलण सहायनो व्यय अने अनंता चलण सहायनो उपजवो अने गुणपणे ध्रुव एम धर्मद्रव्य मध्ये उत्पाद व्यय थयी रह्यो छे तेमज अधर्मा-दिक द्रव्यने विषे पण भाववुं तथा वली कार्य कारण पणे उत्पाद व्यय तथा अगुरुलघुना चलणनो उत्पाद व्यय पंचा-स्तिकायने विषे कहेवुं तथा काल द्रव्य ते उपचार छे तेनुं स्वरूप सर्व उपचारथीज कहेवुं ए रीते सर्व द्रव्यमां सत् पणो छे जो अगुरु लघुनो भेद न थाय तो पछे प्रदेशनो मांहोमांहे भेद कहेवो थाय ते माटे अगुरुलघुनो भेद सर्वमां छे अने जेनो उत्पाद व्यय रूप सत्पणो एक छे ते द्रव्य एक छे तथा जेनो उत्पाद व्यय सत्पणो जूदो ते द्रव्य पण जूदो छे एटले सत् केहतां सत्वपणो कह्यो.

६ अगुरुलघुत्व पणो कहे छे जे द्रव्यनो अगुरुलघु पर्याय छे ते छ प्रकारनी हानि वृद्धिकरे तेमां छ प्रकारनी वृद्धि छे १ अनन्त भागवृद्धि २ असंख्यात भागवृद्धि ३ संख्यात भागवृद्धि ४ संख्यात गुणवृद्धि ५ असंख्यात गुणवृद्धि ६ अनंत गुणवृद्धि हवे छ प्रकारनी हानी कहे छे १ अनंत भागहानि २ असंख्यात भागहानि ३ संख्यात भागहानि ४

संख्यात गुणहानि ५ असंख्यात गुणहानि ६ अनंत गुणहानि ए रीते छ प्रकारनी वृद्धि तथा छ प्रकारनी हानि ते सर्व द्रव्यमां सदा समय समय थयी रही छे वृद्धि ते उपजवो अने हानि ते व्यय कहियें ए अगुरुलघु पणो कह्यो नहीं गुरु तथा नही लघु ते अगुरुलघु स्वभाव कहियें ए सर्व द्रव्य मध्ये छे ते श्रीभगवतीसूत्रे "सव्वदव्वा सव्वगुणा सव्वपएसा सव्वपज्जवा सव्वद्धा अगुरुलहुआए" अगुरुलघु स्वभावने आवरण नथी तथा आत्मा मध्ये जे अगुरुलघु गुण ते आत्माना सर्व प्रदेशें क्षायक भाव थये सर्व गुण सामान्य पणे परिणमे पण अधिका ओछा परिणमे नही ते अगुरुलघुगुणनुं प्रवर्तन जाणवुं ते अगुरुलघु गुणने गोत्रकर्म रोके छे ए अगुरुलघु स्वभाव ते सर्व द्रव्यमां छे.

हवे गुणनी भावना कहे छे तिहां जेटला छए द्रव्यमां सरीखा गुण छे ते सामान्य गुण कहियें अने जे गुण एक द्रव्यमां छे अने बीजा द्रव्यमां नथी ते विशेष गुण कहियें जे गुण कोइक द्रव्यमां छे अने कोइक द्रव्यमां नथी ते साधारण असाधारण गुण कहियें एम ए छ द्रव्यमां अनंत गुण अनन्त पर्याय अनन्त स्वभाव सदा शाश्वता छे जेम श्रीकेवली भगवंतें परूप्या ते सर्व जेरीतें छे तेरीतें सद्दहणा पूर्वक यथार्थ उपयोगथी श्रुतज्ञानादिकथी यथार्थ पणे जाणवा सद्दहवा ए निश्चें ज्ञान ते मोक्षनुं कारण छे जे जीव ज्ञान पाम्यो ते जीव विरति करे छे ते चारित्र कहियें ज्ञाननुं फल विरतिपणो छे ते मोक्षनुं तत्काल कारण छे.

हवे निश्चेंचारित्र अने व्यवहार चारित्रनो विचार कहे छे. तेमां प्रथम व्यवहार चारित्र ते जे प्राणातिपात विरमण प्रमुख पंचमहाव्रतरूप ते सर्वविरति कहियें अने स्थूल प्राणातिपात विरमणव्रतादिक श्रावकना बारव्रत ते देशविरति

चारित्र जाणवुं ए व्यवहार चारित्र सुखनुं कारण छे एवी करणीरूप श्रावकना बारव्रत अने यतिनां पांच महाव्रत ते अभव्यने पण आवे तेथी देवतानी गति पामे पण सकाम निर्जरानुं कारण न थाय इहां कोइ पूछेके मोक्षनुं कारण नथी तो एटलुं कष्ट शावास्ते करियें तेने उत्तर जे त्याग बुद्धी निश्चें ज्ञानसहित चारित्र ते मोक्षनुं कारण छे माटे निश्चें चारित्र सहित व्यवहार चारित्र पालवुं ते निश्चें चारित्र कहे छे शरीर इन्द्रिय विषय कषाय योग ए सर्व पर वस्तु जाणी छांडवा तथा आहार ते पुद्गल वस्तु जाणी छांडवो आत्मा अणाहारी छे ते माटे मुझने आहार करवो घटे नही आहार ते पुद्गल छे आत्मा अपुद्गली छे ते माटे त्याग करवो तद्रूप जे तप ते तप निश्चें चारित्रमां जाणवुं चारित्र कहेतां चंचलता रहित थिरताना परिणाम अने आत्मस्वरूपने विषे एकत्वपणे रमण तन्मयता स्वरूप विश्रांति तत्वानुभव ते चारित्र कहियें ते चारित्रना बे भेद छे एक देशविरति बीजो सर्व विरति तिहां देश विरति केहतां श्रावकना बारव्रत निश्चें तथा व्यवहारथी कहे छे.

१ प्राणातिपात विरमण व्रत ते परजीवने आपणा जीवसरीखो जाणी सर्व जीवनी रक्षा करे ते व्यवहार दया थयी माटे व्यवहार प्राणातिपातविरमण व्रत जाणवुं अने जे आपणो जीव कर्मवशपड्यो दुःखी थाय छे ते आपणा जीवने कर्मबंधनथी मुकाववुं अने आत्मगुण रक्षा करी गुणवृद्धि करवी ते स्वदया बंधहेतु परिणति निवारी स्वरूपगुणने प्रगटपणे करवा जे गुण प्रगट थयो ते राखवो एटले ज्ञाने करी मिथ्यात्व टाली आपणा जीवने निर्मल करे ते निश्चेंथी प्राणातिपात विरमण व्रत कहियें.

२ मृषावाद विरमणव्रत कहे छे. जूठुं वचन त्रिलकुल बोलवुं नही ते व्यवहार मृषावाद विरमणव्रत अने जे पर पुद्गलादिक वस्तुने आपणी कहेवी ते मृषावाद वचन छे अने जीवने अजीव कहे तथा अजीवने जीव कहे इत्यादिक अज्ञान भाव ते सर्व निश्चे मृषावाद छे. अथवा सिद्धान्तना अर्थ खोटा कहे ए मृषावाद जेणे छांड्यो ते निश्चे मृषावाद विरमणव्रत कहियें एटले बीजा अदत्तादानादिक व्रत जो भांजे तो तेनो मात्र चारित्र भंग थाय पण ज्ञान दर्शननो भंग न थाय अने जेणे निश्चे मृषावादनो भंग कर्यो तेणे दर्शन तथा ज्ञान अने चारित्र ए त्रणेनो भंग कर्यो तथा आगममां एम कह्युं छे जे एक साधुयें चोथो व्रत भंग कर्यो अने एक साधुयें बीजो मृषावाद व्रत भंग कर्यो तो जेणे चोथो व्रत भंग कर्यो ते आलोवण लेइ शुद्ध थाय पण जे सिद्धान्तना अर्थनो मृषा उपदेश आपे ते आलोवण लीधे पण शुद्ध थाय नही.

३ अदत्तादान विरमण व्रत कहे छे जे पारकुं धन वस्तु छुपावे चोरी करे ठगबाजी करी लीये ते चोरी छे एटले पारकी वस्तु धणीना दिधा विना लेवी नही ए व्यवहारथी अदत्तादान विरमण व्रत जाणवुं अने जे पांच इंद्रियना त्रेवीस विषय आठ कर्म वर्गणा इत्यादिक परवस्तु लेवी नही तथा तेनी वांछा न करवी ते आत्माने अग्राह्य छे माटे ते निश्चेथी अदत्तादान विरमण व्रत कहियें इहां कोइ पूछे जे विषयनी अने कर्मनी वांछा कोण करे छे तेने उत्तर जे पुण्यने लेवा योग्य छे ते जीव कर्मनी वांछा करे छे जे पुण्यना ४२ भेद छे ते चार कर्मनी शुभ प्रकृति छे एटले जे व्यवहार अदत्तादान तो नथी लेता पण अंतरंग पुण्यादिकनी वांछा छे तेने निश्चे अदत्तादान लागे छे.

४ मैथुन विरमण व्रत कहे छे. जे पुरुष परस्त्रीनो परिहार करे तथा जे स्त्री परपुरुषनो परिहार करे इहां साधुने स्त्रीनो सर्वथा त्याग छे अने गृहस्थने परणेली स्त्री मोकली छे परस्त्रीनो पच्चखाण छे ते व्यवहारथी मैथुननुं विरमण कहियें अने जे विषयना अभिलाषनुं तथा ममता तृष्णानो त्याग परभाव वर्णादिक परद्रव्यना स्वामित्वादिक तेनो अभोगी पणो आत्मा स्वगुण ज्ञानादिकनो भोगी छे अने ए पुद्गलखंध ते अनंता जीवनी एठछे तेने केम भोगवे ए रीते त्याग ते निश्चेंथी मैथुन विरमण कहियें जेणे बाह्य विषय छांड्यो छे अने अंतरंग लालच छूटी नथी तो तेहने ते मैथुनना कर्म लागे छे.

५ परिग्रह परिमाणव्रत कहे छे. परिग्रह धन–धान्य–दासदासी–चौपद–जमीन–वस्त्र–आभरणनो त्याग तेमां साधुने तो सर्वथा परिग्रहनो त्याग छे तथा श्रावकने इच्छा परिमाण छे जेटली इच्छा होय तेटलो परिग्रह मोकलो राखे बीजानी व्रती करे ए व्यवहारथी कह्यो अने जे कर्म रागद्वेष अज्ञानद्रव्य ज्ञानावरणी प्रमुख आठ कर्म अने शरीर इन्द्रियनो परिहार एटले कर्मने परिग्रह जाणी छांड्यो ते निश्चेंथी परिग्रहनो त्याग एटले परवस्तुनी मूर्छा छांडवी जेणे मूर्छा छोडि तेणे परिग्रह छोड्योज छे एम जाणवुं.

६ दिशिपरिमाण व्रत कहे छे. तिहां तिरछि चार दिशी पांचमी अधो छट्ठी ऊर्ध्व ए छदिशीना खेत्रनो मान करी मोकलो राखे ते व्यवहारथी दिशी परिमाण कहियें अने चार गतिमां भटकवुं ते कर्मनुं फल छे एम जाणी तेथी उदासीनपणो अने सिद्ध अवस्थाबुं उपादेय पणो ते निश्चेंदिशिपरिमाण व्रत कहियें.

७ भोगोपभोग परिमाण व्रत कहे छे जे एकवार भोगववुं ते भोग अने जे वारंवार भोगववुं ते उपभोग तेनो परिमाण करे ते व्यवहार भोगोपभोग व्रत कहियें अने जे व्यवहारनयें कर्मनो कर्ता भोक्ता जीव छे अने निश्चय नये तो कर्मनो कर्ता कर्म छे आत्मा अनादिनो परभाव भोगी थयो छे तेथी परभावग्राहक अने परभावरक्षक थयो एटले आत्मानी ज्ञायकता ग्राहकता भोग्यता रक्षकता बीगडे कर्ता पणो बीगड्यो तेवारें परभाव कर्ता थयो ते पण परभाव रंगीपणें आठ कर्मनो कर्ता थयो छे पण सत्तायें तो स्वभावनो कर्ता छे पण उपगरण अवराणा तेथी स्वकार्य करी शकतो नथी विभावने करे छे अज्ञान पणे जीवनो उपयोग मल्यो छे पण न्यारो छे पोताना ज्ञानादिक गुणनो कर्ता भोक्ता छे एहवो स्वरूपानुयायी परिणाम ते निश्चें भोगोपभोग व्रत त्याग जाणवो.

८ अनर्थदण्ड विरमण व्रत कहे छे. जे काम विना जीवनो वध करवो पारकावास्ते आरंभ प्रमुख करवानी आज्ञा प्रमुख आपवी ते व्यवहार अनर्थ दंड अने शुभाशुभ कर्म ते मिथ्यात्व अविरति कषाय योगथी बंधाय छे तेने जीव आपणा करी जाणे ए निश्चेंथी अनर्थदंड.

९ सामायक व्रत कहे छे. जे मनवचनकायाना आरंभ टालीने तेने निरारंभपणे वर्त्तावे ते व्यवहार सामायक जाणवो अने जे जीवना ज्ञान दर्शन चारित्र गुण विचारे सर्व जीवना गुणनी सत्ता एक समान जाणी सर्व जीव साथे समता परिणामें वर्ते ते निश्चेंथी समतारूप सामायक कहियें.

१० देशावगाशिक व्रत कहे छे. जे मन वचन कायाना योग एक ठोर करी एकस्थानकें बेसी धर्म ध्यान करवो ते

व्यवहार देशावगाशिक कहियें अने जे श्रुत ज्ञाने करी छ द्रव्य ओलखीने पांच द्रव्यनो त्याग करे अने ज्ञानवंत जीवने ध्यावे ते निश्चें देशावगाशिक व्रत कहियें.

११ पोशह व्रत कहे छे. जे चार पहोर अथवा आठ पहोर सुधी समता परिणामें सावद्य छोडी निरारंभपणे सिज्झायध्यानमां प्रवर्ते ते व्यवहार पोशह कहियें अने पोताना जीवने ज्ञान ध्यानथी पोषीने पुष्ट करे ते निश्चेंथी पोशह व्रत कहियें जीवने पोतानां स्वगुणे करी पोषीजे तेने पोशह कहियें.

१२ अतिथिसंविभाग व्रत कहे छे. जे पोशहने पारणे अथवा सदा सर्वदा साधुने तथा जैनधर्मि श्रावकने पोतानी शक्तिप्रमाणे दान देवुं ते व्यवहार अतिथिसंविभाग कहियें अने पोताना जीवने अथवा शिष्यने ज्ञाननुं दानते भणवुं भणाववुं सुणवुं सुणाववुं ते निश्चेंथी अतिथि संविभाग व्रत कहियें एटले श्रावकना बारव्रत कह्यां ते समकित सहित जे निश्चें तथा व्यवहारथी बार व्रतधारे ते जीवने पांचमें गुणठाणे देशविरति श्रावक कहियें देश केहतां देशथकी थोडीशी व्रतिपणो छे माटे अने यतिने सर्वथी व्रतिपणो छे तेथी पांच महाव्रतज छे साधुने पांच महाव्रतमां सर्व व्रत आव्यां ए निश्चें त्यागरूप ज्ञान ध्यान संवर निर्जरामां थिरताना परिणाम ते निश्चें चारित्रना एक उत्सर्ग बीजो अपवाद ए बेमार्ग छे तेमां जे उत्कृष्ट तीक्ष्ण परिणाम ते उत्सर्ग अने जे उत्सर्ग राखवाने कारणरूप ते अपवाद–उक्तंच ॥ "संथरणंमि असुद्धं, दुन्नवि गिह्नंतदेंतयाणऽहियं ॥ आउर दिट्ठंतेणं, ते चेवहियं असंथरणे" ॥१॥ एटले ज्यां सुधी साधक भावने बाधक नपडे त्यांसुधी जेहनी नाकही ते आदरवो नही अने जो साधक परिणाम रहेता न दीठा तेवारें जेहनी ना ते

आचरे तेने अपवादमार्ग कहियें जे आत्मगुण राखवाने करवो ते अपवाद अने गुणीने रागे भक्तियें करवो ते प्रशस्त ए बे तो साधन छे अने जे उदैकने अखमवाथी करवुं ते अतिचार छे तथा सबलो अने उदैक माटे अशक्त पणे करवुं ते पडिबाइ छे ते मध्ये अपवाद मार्ग ते परिणाम दृढ रहे तेम आज्ञायें करवो.

हवे चार ध्यान कहे छे. १ आर्तध्यान. २ रौद्रध्यान. ३ धर्मध्यान. ४ शुक्लध्यान. तिहां पहेला बे ध्यान ते अशुभ कहियें अने पाछला बे ध्यान ते शुद्ध छे तिहां मनमां आहट दोहटना परिणाम ते आर्तध्यान कहियें तेना चार पाया छे १ भाइ मित्र सजन माता पिता स्त्री पुत्र धन प्रमुख इष्ट वस्तुनो वियोग थयाथी विलाप करे ते पहेलो इष्ट वियोगनामा आर्तध्यान तथा २ अनिष्ट जे भुंडां दुःखनां कारण दुस्मन दरिद्रीपणो तथा कुपुत्रादि मलवाथी मनमां दुःख चिंता उपजे ते अनिष्ट संयोग नाम आर्तध्यान ३ शरीरमां रोग उपना थका दुःखकरे चिंताघणी करे ते रोगचिंतानामा आर्तध्यान ४ मनमां आगलना वखतनो सोच करे जे आवर्षमां आकाम करशुं आवता वर्षमां अमुक काम करशुं तो अमुक लाभ थशे अथवा दान शील तपनुं फल मांगे जे आ भवमां तप कीधो छे माटे आवते भवें इंद्र चक्रवर्तिनी पदवि मले एहवी आगला भवनी वांछा छे ते अग्रशोच आर्तध्याननो चोथोपायो जाणवो. ए आर्तध्यानना चार भेद कह्या ए तिर्यंच गतिना कारण छे ए ध्यानना परिणाम ते पांचमा अथवा छट्ठा गुणठाणा सुधी होय.

२ जे कठोरपरिणामनुं चिंतवन ते रौद्रध्यान तेना चार भेद छे १ जीव हिंसाकरीने हर्ष पामे अथवा बीजो कोइ हिंसा करतो होय तेने देखी खुशी थाय अथवा युद्धनी अनुमोदना करे ते हिंसानुबंधी रौद्रध्यान २ जूठुं बोलिने मनमां हर्ष

पामे के जुओ में केवोकपटकेळव्यो मारा जूठापणानी खबर कोइने पडी नही एवो मृषावाद रूप परिणाम ते मृषानुबंधी रौद्रध्यान ३ चोरी करी अथवा ठगाइ करीं मनमां खुशी थाय के मारा जेवा जोरावर कोण छे हुं पारको माल खाउं छुं एवो परिणाम ते चोरानुबंधि रौद्रध्यान ४ परिग्रह धन धान्य परिवार घणो वधवानी लालच होय ते धन अथवा कुटुंबने माटे गमे तेवुं पाप करे अथवा घणो परिग्रह मिल्याथी अहंकार करे ते परिग्रह रक्षणानुबंधी रौद्रध्यान ए रौद्रध्यानना चारभेद कह्या ए ध्यान नरकगति पमाडवानुं कारण छे महाअशुभकर्मबंधनुं कारण छे ए पांचमा गुणठाणा सुधी छे अने छठ्ठे गुणठाणे पण एक हिंसानुबंधी रौद्रध्यानना परिणाम कोइक जीवने होय.

हवे धर्म ध्यान कहे छे. जे व्यवहार क्रियारूप कारण ते धर्म तथा श्रुतज्ञान अने चारित्र ए उपादानपणे साधन धर्म तथा रत्नत्रयी भेदपणे ते उपादान शुद्ध व्यवहार उत्सर्गाऽनुयायी ते अपवाद धर्म जाणवो अने अभेदरत्नत्रयी ते साधन शुद्ध निश्चें नयें उत्सर्ग धर्म अने (धम्मो वत्थु सहावो) जे वस्तुनो सत्तागम शुद्ध परिणामिक स्वगुण प्रवृत्ति कर्त्रादिक अनंतानंद रूप सिद्धावस्थायें रह्यो ते एवंभूत उत्सर्ग उपादान शुद्ध धर्म ते धर्मनुं भासन रमण एकाग्रतापणे चिंतन तन्मयतानो उपयोग एकत्वनो चिंतववो ते धर्म ध्यान कहियें तेना पाया चार छे ते कहे छे.

१ आज्ञाविचयधर्मध्यान ते जे वीतराग देवनी आज्ञा साची करी सर्द्दहे एटले भगवंते छ द्रव्यनुं स्वरूप नय प्रमाण निक्षेपा सहित सिद्ध स्वरूप निगोद स्वरूप जेम कह्या तेम सर्द्दहे वीतरागनी आज्ञा नित्य अनित्य स्याद्वाद पणे निश्चें

व्यवहार पणे माने सर्दहे ते आज्ञा प्रमाणे यथार्थ उपयोग भासन थयो तेने हर्षे करी ते उपयोग मध्ये निरधार भासन रमण अनुभवता एकता तन्मय पणो ते आज्ञाविचयधर्मध्यान कहियें.

२ अपायविचयधर्मध्यान ते जीवमां अशुद्धपणे कर्मना योगथी संसारी अवस्थामां अनेक अपाय केहतां दूषण छे ते अज्ञान राग द्वेष कषाय आश्रव ए मारा नथी हुं एथकी न्यारो छुं हुं अनंतज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यमयी शुद्ध बुद्ध अविनाशी छुं अज, अनादि, अनंत, अक्षय, अक्षर, अनक्षर, अचल, अकल, अमल, अगम्य, अनमी, अरूपी, अकर्म्मा, अबंधक, अनुदय, अनुदीरक, अयोगी, अभोगी, अरोगी, अभेदी, अवेदी, अछेदी, अखेदी, अकषायी, असखाइ, अलेशी, अशरीरी, अणाहारी, अव्याबाध, अनवगाही, अगुरुलघुपरिणामी, अतेंद्री, अप्राणी, अयोनी, असंसारी, अमर, अपर, अपरंपर, अव्यापी, अनाश्रित, अकंप, अविरुद्ध, अनाश्रव, अलख, अशोकी, असंगी, अनारक, लोकालोक ज्ञायक एवो शुद्ध चिदानंद मारो जीव छे एहवो एकाग्रतारूप ध्यानते अपायविचयधर्मध्यान जाणवो.

३ विपाकविचयधर्मध्यान कहे छे. जे एहवो जीव छे तो पण कर्म वशें दुःखी छे ते कर्मनो विपाक चिंतवे जे जीवनो ज्ञानगुण ते ज्ञानावरणी कर्मे दाब्यो छे अने दर्शनावरणी कर्मे दर्शनगुण दाब्यो छे एम आठ कर्मे जीवना आठगुण दाब्या छे एटले आ संसारमां भमतां थकां जीवने जे सुखदुःख छे ते सर्व कर्मनां कीधां छे माटे सुख उपने राचवुं नही अने दुःख उपने दिलगीर थवुं नही कर्म स्वरूपनी प्रकृति स्थिति रस अने प्रदेशनो बंध उदय उदीरणा तथा सत्ता चिंतववानुं एकाग्रता परिणाम ते विपाकविचयधर्मध्यान.

४ संस्थानविचयधर्मध्यान कहे छे ते चउदराजमान लोकनुं स्वरूप विचारे जे ए लोक ते चउदराज ऊंचो छे ते मध्ये कांइक अधिक सात राज अधो लोक छे विचमां अढारसो योजन मनुष्य खेत्र त्रिछो लोक छे ते ऊपर कांइक ऊणो सात राज ऊर्ध्व लोक छे तेमां सर्व वैमानिक देवता वसे छे अने ऊपरें सिद्ध शिला सिद्धखेत्र छे ए रीते लोकनुं प्रमाण छे ए लोकनुं संस्थान वैशाख छे अनंतो काल आपणा जीवें संसारमां भमतां सर्व लोकने जन्ममरण करी फरस्यो छे एवुं जे लोक स्वरूप तथा लोकने विषे पंचास्तिकायनुं अवस्थान तथा परिणमन द्रव्यमध्ये गुण पर्यायनुं अवस्थान तेनो जे एकमताये तन्मयचिंतवण परिणाम एहवुं जे ध्यान ते संस्थानविचयधर्मध्यान कहियें ए धर्मध्यानना चार पाया कह्या. ए धर्मध्यान चोथा गुणठाणाथी मांडीने बारमा गुणठाणा सुधी छे.

हवे शुक्लध्यान कहे छे. शुक्लकेहतां निर्मलशुद्ध परआलंबन विना आत्माना स्वरूपने तन्मय पणे ध्यावे एहवुं ध्यान तेने शुक्लध्यान कहियें तेहना पाया चार छे ते कहे छे.

१ पृथक्त्ववितर्कसप्रविचार ते पृथक्त्व केहतां जीवथी अजीव जूदा करवा स्वभाव विभाव तेने जूदा पृथक्पणे वहेंचण करवी स्वरूपने विषे पण द्रव्य तथा पर्यायनो पृथक्पणे ध्यान करी पर्याय ते गुणमां संक्रमावे अने गुण ते पर्यायमां संक्रमण करे एरीते स्वधर्मने विषे धर्मांतर भेद ते पृथक्त्व कहियें अने तेनो वितर्क ते जे श्रुतज्ञाने स्थित उपयोग अने सप्रविचार ते सविकल्पोपयोग एटले एक चिंतव्या पछि बीजो चिंतववो तेने विचार कहियें एटले निर्मल विकल्प

सहित पोतानी सत्ताने ध्याये ते पृथक्त्ववितर्कसप्रविचार पेहेलो पायो ए आठमा गुण ठाणाथी मांडी इग्यारमा गुण-ठाणा सुधी छे.

२ एकत्ववितर्कअप्रविचार नामा बीजो पायो कहे छे. जे जीव आपणा गुण पर्यायनी एकताकरी ध्यावे ते आवी रीते के जीवना गुण पर्याय अने जीयते एकज छे अने महारो जीव सिद्धस्वरूप एकज छे एवो एकत्व स्वरूप तन्मय पणे अनंता आत्म धर्मनो एकत्वपणे ध्यान वितर्क केहतां श्रुतज्ञानावलंबी पणे अने अप्रविचार केहतां विकल्प रहित दर्शन ज्ञाननो समयांतरें कारणता विना रत्नत्रयीनो एक समयी कारण कार्यता पणे जे ध्यान वीर्य उपयोगनी एका-ग्रता ते एकत्ववितर्क अप्रविचार जाणवो. ए पायो बारमा गुणठाणे ध्यावे ए बेहु पायामां श्रुतज्ञानावलंबनी पणो छे पण अवधि मनपर्यव ज्ञानोपयोगें वर्त्ततो जीव कोइ ध्यान करी सके नही ए बे ज्ञान परानुयायी छे माटे. ए ध्यानथी घनघातिया चार कर्म खपावे निर्मल केवल ज्ञान पामें पछे तेरमें गुणठाणे ध्यानतरिका पणे छे तेरमाना अंते अने चउ-दमे गुणठाणे ए बे पाया ध्यावें.

३ सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति पायो कहे छे. ते सूक्ष्म मन वचन कायाना योग रुंधे शैलेशी करण करी अयोगी थाय ते जे अप्रतिपाति निर्मलवीर्य अचलतारूपपरिणाम ते सूक्ष्मक्रियाअप्रतिपाति ध्यान जाणवुं इहां सत्ताये ८५ प्रकृति रही हती तेमध्ये ७२ खपावे.

४ उच्छिन्नक्रियानुवृत्ति पायो कहे छे. जे योग निरुंध कीधापछे तेर प्रकृति खपावे अकर्मा थाय सर्व क्रियाथी रहित

थाय ते समुच्छिन्न क्रिया निवृत्ति शुक्लध्यान कहियें ए ध्यान ध्यावतां शेष दल स्मरण रूप क्रिया उच्छेदे अवगाहना देहमानमांथी त्रीजो भाग घटाडे शरीर मूकी इहांथी सात राज ऊपर लोकने अंते जाय सिद्ध थाय इहां शिष्य पूछे जे चौदमे गुणठाणे तो अक्रिय छे तो सातराज उंचो गयो ए क्रिया केम करे छे तेने उत्तर जे सिद्ध तो अक्रिय छे परंतु पूर्व प्रेरणायें तुंबीने दृष्टान्ते जीवमां चालवानो गुण छे धर्मास्तिकाय मध्ये प्रेरणा गुण छे तेथी कर्म रहित जीव मोक्षेजता लोकने अंते जायी रहे इहां कोइ पूछे जे आगल उंचो अलोक छे तहां किम जातो नथी तेने उत्तर जे आगल धर्मास्तिकाय नथी माटे न जाय वली कोइ पुछे जे तो अधोगतियें अथवा तिरच्छी गतियें केम नथी जातो तेने उत्तर जे कर्मना भारथी रहित थयो हलुवो थयो माटे निचो तथा डाबो जिमणो न जाय कारण के प्रेरक कोइ नथी तथा कंप नथी केमके अक्रिय छे माटे तथा कोइ पूछे जे सिद्धने कर्म केम लागता नथी तेने कहे छे जे कर्म तो जीवने अज्ञानथी तथा योगथी लागे छे ते सिद्धना जीवने अज्ञान तथा योग नथी माटे कर्म लागे नही ए चार ध्याननों अधिकार कह्यो.

हवे वली बीजा चार ध्यान कहे छे १ पदस्थ २ पिंडस्थ ३ रूपस्थ. ४ रूपातीत तेमां पहेलुं पदस्थ ध्यान कहे छे जे अरिहंतादिक पांच परमेष्ठीना गुण संभारे तेनो चित्तमां ध्यान करे ते पदस्थ ध्यान. २ पिंडस्थ केहतां शरीरमां रह्यो जे आपणों जीव तेमां अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय अने साधुपणाना गुण सर्व छे एहवो जे ध्यान ते पिंडस्थ ध्यान अथवा गुणीना गुण मध्ये एकत्वता उपयोग करवो ते पिंडस्थ ध्यान. ३ रूपमां रह्यों थको पण ए मारो जीव अरुपी

अनंत गुणी छे जे वस्तुनो स्वरूप अतिशयावलंबी थया पछे आत्मानुं रूप एकता पणो एहवो जे ध्यान ते रूपस्थ ध्यान ए त्रण ध्यान धर्म ध्यानमां गणवा. ४ निरंजन निर्मल संकल्प विकल्प रहित अभेद एकशुद्धता रूप चिदानंद तत्वामृत असंग अखंड अनंतगुण पर्यायरूप आत्मस्वरूपनुं ध्यान ते रूपातीत ध्यान जाणवुं इहां मार्गणा गुणठाणा नयप्रमाण मतिआदिक ज्ञान क्षयोपशम भाव सर्व छांडवा योग्य थया एक सिद्धना मूल गुणने ध्यावे ते रूपातीत ध्यान जाणवो एटले मोक्षनुं कारण जे ध्यान ते कह्युं.

हवे भावना कहे छे. तेमां धर्म ध्याननी चार भावना कहे छे. १ मैत्रीभावना ते सर्व जीव साथे मित्रतानो भाव चिंतववो सर्वनुं भलुं चाहवुं पण कोइनुं माठुं चिंतववुं नही सर्व जीव ऊपर हितबुद्धि राखवी ते मैत्रीभावना २ गुणवंत अने ज्ञानादिक गुण ऊपरें राग ते बीजी प्रमोदभावना ३ जे धर्मवंत ऊपर राग अने मिथ्यात्वी ऊपर राग नही तेम द्वेषपण नही कारण के हिंसक ऊपरें पण उत्तम जीवने करुणा ऊपजे जो उपदेश थकी सारामार्गें आवे तो तेने शुद्ध-मार्गें आणवो कदाचित-मार्गें न आवे तोपण द्वेष न राखवो केमके ते अजाण छे एम समजवुं एहवा जे परिणाम ते मध्यस्थभावना ४ सर्व जीवनी पोताने तुल्यजाणी दया पाले कोइने हणे नही तथा जे दुःखी अथवा धर्महीन तेहना ऊपर करुणा तेना दुःख टालवानो परिणाम तथा धर्महीन जीव देखीने एवो चिंतवे जे ए जीव किवारें धर्म पामशे यथार्थ आत्मसाधन पामी स्वरूप धर्मने किवारें अवलंबशे एवो परिणाम ते चोथी करुणा केहतां दयाभावना. ए चार भावना कही.

१ हवे बार भावना कहे छे. शरीर कुटुंब धन परिवार सर्व विनाशी छे जीवनो मूल धर्म अविनाशी छे एम चिंतववुं ते पहेली अनित्यभावना २ संसारमां मरणसमये जीवने शरण राखनार कोइ नथी. एक धर्मनो शरण छे एवुं चिंतववुं ते बीजी अशरण भावना ३ मारा जीवे संसारमां भमतां सर्व भवकीधा छे ए संसारथी हुं केवारें छुटीश ए संसार मारो नथी हुं मोक्षमयी छुं एम विचारवुं ते त्रीजी संसारभावना. ४ ए माहरो जीव एकलो भोगवशे एम चिंतववुं ते चोथी एकत्वभावना ५ आ संसारमां कोइ कोइनो नथी एम चिंतववुं ते पांचमी अन्यत्वभावना ६ आ शरीर अपवित्र मलमूत्रनी खाण छे रोग–जराथी भर्यो छे ए शरीरथी हुं न्यारो छुं एम चिंतववो ते छट्ठी अशुचिभावना ७ रागद्वेष अज्ञान मिथ्यात्व प्रमुख सर्व आश्रव छे एम चिंतववुं ते सातमी आश्रवभावना ८ ज्ञानध्यानमां वर्त्ततो जीव नवा कर्म बांधे नही ते आठमी संवरभावना ९ ज्ञानसहित क्रियाते निर्जरानुं कारण छे ते नवमी निर्जराभावना १० चउदराज लोकनुं स्वरूप विचारवुं ते दशमी लोकस्वरूपभावना ११ संसारमां भमता जीवने समकित ज्ञाननी प्राप्ति पामवी दुर्लभ छे अथवा समकित पाम्यो पण चारित्र सर्व विरति परिणाम रूप धर्म पामवो दुर्लभ छे ते इग्यारमी बोधदुर्लभभावना.

१२ धर्मना कहेणहारगुरु तथा शुद्ध आगमनुं साभलवुं एहवी जोगवाइ मलवि दोहेली छे ते बारमी धर्मदुर्लभभावना एटले बार भावना कही ए चारित्रनुं स्वरूप संपूर्ण कह्युं.

एवो समकित सहित ज्ञान चारित्र ते मोक्षनुं कारण छे तेना ऊपर भव्य प्राणीयें विशेषें उद्यम करवो अने जो तेवुं

ज्ञान चारित्र नथी पले तोपण श्रेणिक राजानी पेरें सद्दहणा शुद्ध राखजो जो समकित शुद्ध छे तो मोक्ष नजीक छे समकित विना ज्ञान ध्यान क्रिया सर्व निःफल छे एम आगममां कह्यो छे.

जंसक्केइ तं किरइ, अहवा न सक्केइ तहय सद्दहइ । सद्दहमाणो जीवो, पावइ अयरामरं ठाणं ॥ १ ॥

अर्थ—रे जीव! तुं करी शके तो कर अने जो न करीशके तोपण जेवो वीतरागें धर्म कह्यो ते रीते सद्दहजे सद्दहणा शुद्ध राखनार जीव अजरामर स्थानक ते मोक्ष पदवी पामे.

हवे समकितनो मार्ग कहे छे. १ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य. ४ पाप ५ आश्रव ६ संवर ७ निर्जरा ८ बंध ९ मोक्ष—ए नव तत्व छे तेमां मोक्षनुं कारण जीव छे अने संवर तथा निर्जरा ए बे गुण छे एटले जीव संवर निर्जरा मोक्ष ए चार उपादेय छे अने बीजा पांच हेय छे एहवो परिणाम तेने समकित ज्ञान कहियें ते समकित ज्ञानभलोज थाय तिहां अनुयोगद्वारमां कह्यो छे.

नायम्मि गिन्हियवे, अगिन्हियव्वे अ इत्थ अत्थंमि । जइवमेवइयजो, सो उवएसो नओनाम ॥ १ ॥

अर्थ—ज्ञानथी छ द्रव्य जाणीने लेवा योग्य होय ते ले अने छांडवा योग्य छांडे एवो जे उपदेश ते नय उपदेश जाणवो हवे समकितनी दशरुचि कहे छे.

निसर्गरुचि ते निश्चय नय करी जीवादि नवतत्व जाणे आश्रव त्यागे संवर आदरे वीतरागना कह्या भाव जे छ द्रव्य

ते द्रव्य खेत्र काल भावसहित जाणे नामादिचार निक्षेपा पोतानी बुद्धिथी जाणे सद्दहे वीतरागना भाख्या भाव ते सत्य छे एवी सद्दहणा होय.

२ उपदेशरुचि नवतत्व तथा छ द्रव्यने गुरु उपदेशथी जाणी सद्दहे ते उपदेशरुचि.

३ आज्ञारुचि ते रागद्वेष मोह जेमना गया छे अज्ञान मिथ्युं छे एहवा अरिहंतदेव तेणे जे आज्ञा कही तेने माने सद्दहे ते आज्ञारुचि.

४ सूत्ररुचि १ आचारांग. २ सुयगडांग. ३ ठाणांग. ४ समवायांग. ५ भगवती. ६ ज्ञाताधर्मकथा. ७ उपासकदशांग. ८ अंतगडदशांग. ९ अनुत्तरोववाइ दशांग. १० प्रश्नव्याकरण. ११ विपाक. ए इग्यार अंग तथा बारमुं अंगदृष्टिवाद जेमां चउद पूर्व हता ते हमणा विच्छेद थया छे तथा १ उववाइ. २ रायपसेणी. ३ जीवाभिगम. ४ पन्नवणा. ५ जंबुद्वीपपन्नति. ६ चंदपन्नति. ७ सूरपन्नति. ८ कप्पिआ. ९ कप्पविडंसिया. १० पुप्फिआ. ११ पुप्फचुलीआ. १२ वह्निदिशा. ए बार उपांग जाणवा अने. १ व्यवहार सूत्र. २ बृहत्कल्प. ३ दशाश्रुतस्कंध. ४ निशीथ. ५ महानिशीथ. ६ जीतकल्प. ए छ छेदग्रंथ तथा १ चौसरण. २ संथारापयन्ना. ३ तंदुलवेयालिया. ४ चंदाविजय. ५ गणिविजय. ६ देविंदथुओ. ७ वीरथुओ. ८ गच्छाचार. ९ जोतिकरंड. १० आयुःपच्चखाण. ए दश पयन्नाना नाम. तथा १ आवश्यक. २ दशवैकालिक. ३ उत्तराध्ययन. ४ ओघनिर्युक्ति. ए चार मूलसूत्र तथा १ नंदि २ अनुयोगद्वार. एपिस्तालीस

आगम ते १ मूळ सूत्र सहा २ निर्युक्ति ३ भाष्य ४ चूर्णि ५ टीका ए पंचांगीना वचन जे जीव माने तथा आगम सांभळवानी तथा भणवानी जेने घणी चाहना होय ते सूत्ररुचि जाणवी.

५ जे जीव गुरुमुखथी एक पदनो अर्थ सांभळीने अनेक पद सद्दहे ते बीजरुचि.

६ अभिगमरुचि ते जे सूत्र सिद्धान्त अर्थ सहित जाणे अने अर्थ विचार सांभळवानी घणी चाहना होय ते अभिगमरुचि.

७ जे छ द्रव्यना गुण पर्यायने चार प्रमाण तथा सात नये करी जाणे ते विस्ताररुचि.

८ क्रियारुचिते दर्शन ज्ञान चारित्र तप विनय सुमति गुप्ति बाह्य क्रिया सहित आत्मधर्म साधे जेने रुचि घणी होय ते क्रियारुचि.

९ संक्षेपरुचि ते जे अर्थने ज्ञानमां थोडो कहे थके घणो जाणीने कुमतिमां पडे नही जिन मतमां प्रतीति माने ते संक्षेपरुचि.

१० जे पांच अस्तिकायनुं स्वरूप जाणे श्रुतज्ञाननो स्वभाव अंतरंग सत्ता सद्दहे ते धर्मरुचि.

हवे समकितना आठ गुण कहे छे. १ निसंका ते जिनागम मध्ये सूक्ष्म अर्थ कह्या ते सांचा सद्दहे तेमां संदेह आणे नही. तथा सात भयथी पण डरे नही २ निकंखा गुण ते पुण्यरूप फळनी चाहना न राखे केमके जिहां इच्छा तिहां कर्मनो बंध छे माटे ३ निव्वित्तिगिच्छागुण ते शुभ अशुभ पुद्गल एकसरिखा छे तेमां पुण्यना उदयथी शुभयोग मिल्या

खुशी थइ अहंकार न करवो तथा पापना उदयथी दुःखसंयोग मिल्या दिलगीर थावुं नही ४ अमूढ दृष्टि गुण ते जे आगममां सूक्ष्म निगोदना तथा छ द्रव्यना सूक्ष्म विचार कह्या छे ते सांभलतो थको मुजाय नही जे पोतानी धारणामां आवे ते धारी राखे अने जे धारणामां न आवे तेने सद्दहे ५ उववूहगुण जे ए आपणा जीवमां अनंत ज्ञानादिक गुण छे ते छुपाववा नही शुद्ध सत्ता जेवी तेवी कहेवी राग द्वेष अज्ञान ते कर्मनी उपाधि छे जीव ए उपाधीथी न्यारो छे ६ स्थिरिकरण गुण ते आपणा परिणाम ज्ञानमां स्थिर करवा डगाववा नही अथवा कोइ भव्य प्राणी धर्मथी पडतो होय तेने साह्यदेइ उपदेश आपी स्थिरकरवो ७ वात्सल्यतागुण ते जेनी साथें ज्ञान ध्यान तप पडिकमणो भेलो करता होइये अने सद्दहणा पण एकज होय ते आपणो सार्धामँभाइ छे तेनी भक्ति करवी अथवा सर्व जीवना ज्ञानादि गुण आपणा समान छे माटे सर्व जीव ऊपर दया करवी अथवा बीजा जीवना पण आपणा तुल्य ज्ञानादिगुण छे ते जीवने पोषवा योग्य ज्ञानध्याननो घणो अभ्यास करावे ८ प्रभावक गुण ते भगवंतना धर्मनी प्रभावना महिमा करवी अथवा पोताने ज्ञानादि गुणवधारवा दान शील तप भाव पूजा करी घणी महिमा करवी ए समकितना आठ गुण.

हवे समकितना पांच भूषण कहे छे १ उपशमभावभूषण ते विवेकी प्राणी प्रायें कषाय न करे अने जो कदाचित् कषाय करे तो पण तरत मनने पाछोवाले २ आस्ताभूषण ते भगवंतना वचन ऊपर शुद्ध प्रतीत राखें भगवंतें जेम आगममां आज्ञा करी तेम सद्दहे ३ दयाभावभूषण ते सर्व जीव पोताना सरीखा जाणी दया पालवी ४ संवेगभूषण जे संसारथी तथा धनथी शरीरथी उदासी पणो राखवो ५ निरवेद्यभूषण ते इन्द्रियना सुख जीवें अनंती वार

भोगव्या पण ते दुःखना कारण छे एक चिदानंद मोक्षमयी अतींद्रिय सुखने आपणा करी जाणे ए समकेतना पांच भूषण कह्या.

हवे छ आयतन कहे छे १ निश्चयकुगुरु ते भगवंतना वचनना खोटा अर्थ करे खोटी परुपणा करे २ व्यवहारकुगुरु ते योगी संन्यासी ब्राह्मण अने आचारहीन वेषधारी यति तेपण छोडवा ३ निश्चय कुदेव ते जिणे श्रीवीतरागदेवनुं स्वरूप नथी जाण्युं ४ व्यवहार कुदेव ते जे सरागीदेव कृष्ण महादेव खेत्रपाल देवी पितर प्रमुख तेपण छोडवा ५ निश्चेथी कुधर्म ते जे एकांत मार्ग बाह्यकरणी ऊपर राच्या छे अंतरंगज्ञान नथी ओलख्यो ते ६ व्यवहार कुधर्म ते पारका अन्य दर्शनीना मत सर्व छांडवा एटले कुदेव कुगुरु तथा कुधर्मने छोडी शुद्धदेव गुरु तथा धर्म सद्दहे ते समकितनी सद्दहणा जाणवी समकितना श्रद्धान पन्नवणा सूत्रथी कहे छे.

परमत्थसंथवो वा, सुदिट्ठपरमत्थसेवणावावि । वावन्न कुदंसणवज्जणाय समत्तसद्दहणा ॥ १ ॥

अर्थ—परमार्थ छ द्रव्य नवतत्वना गुण पर्याय मोक्षनुं स्वरूप एटले जे परमार्थ सूक्ष्म अर्थ छे ते जाणवानो घणो परचो करे अथवा जाणवानी घणी चाहना राखे अने सुदिट्ठ केहतां भली रीते दीठा जाण्या छे परमार्थ छ द्रव्य मोक्षमार्ग जेणे एहवा गुरुनी सेवा करे एटले ज्ञानी गुरु धारवा अने वावन्न केहतां जिनमति यतिना नाम धरावीने जे खेत्रपाल प्रमुखने समकित विना माने एवा गुरुनो संग वर्जे अने कुदर्शनी जे अन्यमति तेनो संग न करे एवा जे परिणाम ते समकितनी सद्दहणा जाणवी.

विरया सावज्जाओ, कषायहीणा महव्वयधरावि । सम्मदिट्ठिविहुणा, कयाविमुक्खं न पावंति ॥ २ ॥

अर्थ—जे सावद्य आरंभथी विरम्या छे क्रोधादि चार कषाय जीत्या छे अने शुद्ध पंचमहाव्रतपाले छे पण समकित विना छे ते जीव मोक्ष पामे नहीं.

हवे समकित ते सी वस्तु छे ते विषे गाथा कहे छे.

नयभंगपमाणेहिं, जो अप्पा सायवायभावेणं । जाणइ मोक्खसरूवं, सम्मदिट्ठिउ सो नेओ ॥ ३ ॥

अर्थ—नय तथा भंगेकरी तथा प्रमाणेकरी जे पोताना आत्माने जाणे ओलखे स्याद्वाद आठ पक्षे जाणे अने एम स्याद्वादपणे मोक्ष निकर्माऽवस्थाने पण जाणे परवस्तुने हेय जाणे जीवगुण उपादेय जाणे तेने समकिति जाणवा.

हवे जीवस्वरूप ध्यान करवाने गाथा कहे छे.

अहंमिक्को खलु सुद्धो, निम्ममओ नाण दंसण समग्गो । तम्मि दिट्ठिओ तच्चित्तो, सव्वे एए खयं नेमि ॥ ४ ॥

अर्थ—ज्ञानी जीव एहवुं ध्यान करे के हुं एकलुं परपुद्गलथी न्यारोछुं निश्चय नयकरी शुद्धछुं अज्ञानमलथी न्यारोछुं निर्मलछुं ममताथी रहित छुं ज्ञानदर्शनथी भर्यो छुं हुंमाराज्ञानस्वभाव सहित छुं हुंमारागुणमां रह्यो छुं चेतनागुणते महारीसत्ता छे हुंमाराआत्मस्वरूपने ध्यावतो सर्व कर्म क्षय करुं छुं.

निरंजणं निकल अयल, देवअणाइ अणइ अणंतं । चेयणलरकण सिद्धसम, परमप्पासिवसंतं ॥५॥

अर्थ—कर्म अंजनथी रहित निरंजन छुं कलंकरहित छुं अयल केहतां पोताना स्वरूपथी किवारे चलायमान थाउं नही परमदेव छुं जेनी आदि नथी तथा जेनो अंत नथी चेतना लक्षण छुं सिद्ध समान छुं संतसत्ता मयी छुं.

जीवादिसद्दहणं, सम्मत्तं एस अधिगमो नाणं । तत्थेव सया रमणं, चरणं एसो हु मुरकपहो ॥६॥

अर्थ—जीवादिक छ द्रव्य जेवा छे तेवा सद्दहवा ते समकित अने छ द्रव्य जेवा छे तेहवा गुणपर्यायसहित जाणे ते ज्ञान जाणवुं ते छ द्रव्य जाणीने अजीवने छांडे अने जीवना स्वगुणमां स्थिर थयीने रमे ते चारित्र कहियें ए ज्ञानदर्शन चारित्र शुद्धरत्नत्रयी ते मोक्षनो मार्ग छे माटे ए ज्ञानदर्शन चारित्रनो घणो यत्न करवो ए रत्नत्रयी पामीने प्रमाद करवो नही तिहां निश्चय व्यवहारनी गाथा.

निच्छय मग्गो मुरको, ववहारो पुन्नकारणो वुत्तो । पढमो संवररूवो, आसवहेउ तओ बीओ ॥७॥

अर्थ—निश्चे नयनो मार्ग ज्ञान सत्तारूप ते मोक्षनुं कारण छे एटले मोक्ष छे अने व्यवहार क्रिया नय ते पुण्यनुं कारण कह्यो पहेलो निश्चयनय संवर छे अने निश्चयसंवर निश्चे नय ते एकज छे जूदा नथी बीजो व्यवहार नय ते आश्रव नवा कर्म लेवानो हेतु छे एटले शुभ पुण्यकर्मनो आश्रव थाय छे अने अशुभ व्यवहारें अशुभ कर्मनो आश्रव थाय छे कोइ पूछे जे व्यवहार नय आश्रवनुं कारण छे तो अमे व्यवहार नही आदरसुं एक निश्चें मार्ग आदरसुं तेने उत्तर कहे छे.

जइ जिणमयं पवज्जह, ता मा ववहारनिच्छएमुयह। एकेणविणा तित्थं, छिजई अन्नेणओ तच्च ॥ ८॥

अर्थ—अहो भव्य प्राणी! जोतमने जिनमतनी चाहना छे अने जो तुमे जिनमतने इच्छो छो मोक्षने चाहो छो तो निश्चें नय अने व्यवहार नय छांडशो नही एटले बेहु नय मानजो व्यवहार नय चालजो अने निश्चय नय सद्दहजो जो तुमे व्यवहार नय उथापशो तो जिन शासनना तीर्थनो उच्छेद थाशे जेणे व्यवहार नय नमान्यो तेणे गुरु वंदना जिन भक्ति तप पच्चखाण सर्व नमान्या एम जेणे आचार उथाप्यो तेणे निमित्त कारण उथाप्यो अने निमित्त कारण विना एकलो उपादान कारण ते सिद्ध नथाय माटे निमित्त कारण रूप व्यवहार नय जरूर मानवुं अने जो एकलो व्यवहार नय मानियें तो निश्चय नय ओलख्या विना तत्वनुं स्वरूप जाण्युं नही माटे तत्वमार्ग अने मोक्षमार्ग ते निश्चय नय विना पामियें नही अने तत्व ज्ञानविना मोक्ष नथी एटले निश्चयविना व्यवहार निःफल छे अने निश्चय सहित व्यवहार ते प्रमाण छे तेनो दृष्टान्त-जेम सोनाना आभूषणमां उपधातु अथवा किणजो मिल्यो होय तेपण उंचा सोनाने भावें लेइ राखियें छैयें अने जो ते किणजो तथा सोनुं जूदुं करियें तो सहु कोइ सोनाने ले पण कोइ किणजो जे कुधातु ते लीये नही तेम निश्चय नय सोना समान छे माटे निश्चय नय सहित सर्व भला छे अने निश्चय नय विना सर्व अलेखे छे माटे आगममां निश्चय व्यवहार रूप मोक्ष मार्ग छे ते कह्यो.

वली शरीर ऊपर मोह करे नही ते विषे.

छिज्जो भिज्जो जाय खओ, जो इह मे हु शरीरं । अप्पा भावे निम्मलो, जं पावं भवतीरं ॥ ९ ॥

अर्थ—भव्य प्राणी एम चिंतवे जे ए शरीर छीजजाओ भेदीजजाओ क्षयथइजाओ विणशीजाओ ए माहारुं शरीर पुद्गलीक छे परवस्तु छे ते एकदिवसें मूकवुं छे माटे रे प्राणी! तुं आपणी आत्माने निर्मलपणे ध्याव तो संसारथी तरीने कांठो पामीश.

एहिज अप्पा सो परमप्पा, कम्म विसेसोई जायोजप्पा ।

इसहे देहमज्झसो परमप्पा, वहु तुझे अप्पो अप्पा ॥ १० ॥

अर्थ—अहो भव्य जीव! एहीज आपणो आत्मा छे ते शुद्ध ब्रह्म छे पण कर्मने वश पड्यो जन्ममरण करे छे पण ए शरीरमां जे जीव छे ते देव छे परमात्मा छे माटे तुमे आपणो आत्मा ध्यावो तरण तारण जिहाज ए आपणो आत्माज छे एम श्री हेमाचार्यें वीतराग स्तोत्रमां कह्यो छे.

यः परात्मा परं ज्योतिः, परमः परमेष्ठिनाम् । आदित्यवर्णोतमसः, परस्तादामनंति यं ॥ १ ॥

सर्वें ये नोदमूल्यंत, समूलाः क्लेशपादपाः इत्यादि ॥

अर्थ—परमात्मा छे परमज्योति छे पंचपरमेष्ठीथी पण अधिक पूज्य छे केम के पंचपरमेष्ठीतो मोक्षमार्गना देखाड-नारा छे पण मोक्षमां जवावालो तो आपणो जीव छे अज्ञाननो मिटावनार छे सर्व कर्म्म क्लेशनो खपावनार छे एवो

आत्मा ध्यावो एहिज परम श्रेयनुं कारण छे शुद्ध छे परम निर्मल छे एहवो आत्मा उपादेय जाणी सद्दहे अने जेथो पोताथी निरवाह थाय तेवो त्याग वैराग्यमां प्रवर्त्ते एटले धन ते परवस्तु जाणी सुपात्रने दान आपे अने इन्द्रियना विकार ते कर्म बंधना कारण जाणी परिहरे शील पाले जे आहार छे ते पुद्गलीक वस्तु छे शरीर पुष्टीनुं कारण छे अने शरीरपुष्ट कीधाथी इंद्रियोना विषयनो पोष थाय माटे ते परस्वभाव छे अज्ञान संसारनुं कारण छे माटे आहारनो त्याग करवो तेने तप कहियें तथा पूजा ते जे श्री अरिहंत देवें मोक्षमार्ग उपदेश्यो ते आपणे जाण्यो माटे आपणा उपकारी छे ते उपकारीनी बहुमान सहित भक्ति करियें माटे श्री अरिहंत देवाधिदेवनी पूजा करवी एम दानशील तप पूजा सर्व जीव अजीवनुं स्वरूप ओलख्याविना जे करवुं ते पुण्यरूप इंद्रिय सुखनुं कारण छे अने जे जीवने उपादेय करी वांछा विना करणी करे छे ते निर्जरानुं कारण छे एम दयापण श्रीभगवती सूत्रमां सातावेदनी कर्मनुं कारण छे एटले सम्यक् ज्ञानीने सर्व करणी ते निर्जरारूप छे अने ज्ञान विना सर्व करणी बंधनु कारण छे माटे ज्ञाननो घणो अभ्यास करजो ए भगवंतें सीखामण दीधी छे.

तथा ज्ञाननुं कारण श्रुत ज्ञान छे तेनो घणो भाव राखजो श्रीठाणांगमां तथा उत्तराध्ययनमां तथा भगवतीमां १ वाचना २ पृछना ३ परावर्तना ४ अनुप्रेक्षा ५ धर्मकथा ए सिज्झाय भणवा गुणवानुं फल मोक्ष कह्यो छे सिज्झाय करवाथी ज्ञानावरणी कर्म खपावे केमके वाचनाथी तीर्थधर्म प्रवर्ते महा निर्जरा थाय पूछवाथी सूत्र तथा अर्थ शुद्ध थाय मिथ्यात्व मोहनीय खपावे ते जेम जेम अर्थ विचार पूछे तेम तेम समकित निर्मल थाय अने अनुप्रेक्षा ते अर्थ विचारतां

सात कर्मनी स्थितिना रस पातला करे अनंतो संसार खपावीने पातलो करे तथा श्रुत ज्ञानकी आराधनाथी अज्ञान मिटे एवा फल कह्या छे.

माटे वांचवा तथा भणवानो घणो उद्यम करवो केमके आज पांचमा आरामां कोइ केवली नथी तथा मनपर्यवज्ञानी अने अवधिज्ञानी पण नथी एक मात्र श्रुतज्ञान तेहिज आगमनो आराधक छे. यतः—

कत्थ अम्हारिसापाणी, दुसमादोस दूसिया । हायणा हाकहं हुंता, नहुं तो जइ जिणागमो ॥ १ ॥

अर्थ—हे भगवंत! अम्ह सरिखा [illegible] गति थात जे अमें आ दुसम पंचमकालमां अवतार लीधो. हा–इति खेदे, अमे अनाथ छुं जो जिनराजना कहेलां आगम न होत तो आज शुं थात एटले आज आगमनोज आधार छे माटे आगम अने आगमधर जे बहुश्रुत तेनो घणो विनय करवो आगममां विनयनुं फल ते सांभलवुं अने सांभलवानुं फल ज्ञान छे ज्ञाननुं फल मोक्ष छे एम आगम सांभली लेवा योग्य लेजो अयोग्य छांडजो सद्दहणा शुद्ध राखजो सद्दहणा ते मोक्षनुं मूल छे ए इन्द्रिय सुख तो आ जीवें अनंतीवार पाम्या छे एहवी जाति–जन्म–योनी कोइ रही नथी जे आपणा जीवे नही करी होय ए जीवने संसारमां भमतां अनंता पुद्गल परावर्तन थया पण धर्मनी जोगवायी मली नही तो हवे मनुष्यभव श्रावककुल निरोगशरीर पंचेंद्रि प्रगट बुद्धि निर्मल एटला संयोग मल्या वली श्रीवीतरागनी वाणीना केहेनारा शुद्ध गुरुनी जोगवाइ पामीने अहो भव्यलोको! तुमे धर्मने विषे विशेष उद्यम करजो फिरिथी एवी जोगवाइ मिलवी दुर्लभ छे माटे प्रमाद करशो नही ए शरीर धन कुटुंब आयुष्य सर्व चंचल छे क्षण क्षण छीजे छे माटे पांच

समवाय कारण मल्या मोक्षरूप कार्य सिद्ध करवुं ते पंचसमवायना नाम कहे छे १ काल २ स्वभाव ३ नियति ४ पूर्वकृत ५ पुरुषाकार ए पांच समवाय माने ते समकिति छे एमां एक समवाय उत्थापे तेहने मिथ्यात्वी कहियें एम सम्मति सूत्रमां कह्यो छे.

कालो सहावनियइ, पुव्वकयं पुरिषकारणे पंच । समवाए समत्तं, एगं ते होय मिच्छत्तं ॥ १ ॥

अर्थ—काल लब्धिविना मोक्षरूप कार्य सिद्ध थाय नही एटले काल सर्वनुं कारण छे जे कार्य थवानो होय ते कार्य ते कालें थाय ए काल समवाय अंगीकार करी कह्यो इहां कोइ पूछे जे अभव्य जीव मोक्ष केम जता नथी तेने उत्तर जे अभव्यने कालमले पण अभव्यमां स्वभाव नथी तेथी मोक्ष जाय नहीं केमके काल स्वभाव ए बे कारण जोइये तेवारें फरि पूछ्युं जे भव्यजीवमां तो मोक्षे जवानो स्वभाव छे तो सर्व भव्य केम मोक्ष जता नथी तेने उत्तर जे नियति केहतां निश्चय समकित गुण जागे तेवारें मोक्ष पामे एटले काल स्वभाव नियति ए त्रण कारण मान्या तेवारें फरि पूछ्युं जे समकित आदि कारण तो श्रेणीक राजाने हता तो मोक्ष केम न थयो तेने उत्तर जे पूर्वकृत कर्म घणा हता अथवा पुरुषाकार जे उद्यम कर्यो नही फरी पूछ्युं जे शालीभद्र प्रमुखें तो उद्यम घणो कीधो तेनुं ऊत्तर जे तेमना पूर्वकृत शुभकर्म खप्या नहता माटे पांच समवाय मिल्या कार्यनी सिद्धि थाय तेवारें फरि पूछ्युं जे मरुदेवामाताने तो चार कारण मिल्या पण पांचमो पुरुषाकार उद्यम कांइ कीधो नही तेने उत्तर जे क्षपक श्रेणी चढवानो शुक्ल ध्यान रूप उद्यम कीधो छे माटे पांच समवाय मील्या मोक्षरूप कार्य सिद्ध थाय.

जेवारें केवलज्ञाने करी सर्व द्रव्य जेम रह्या छे तेम देखे एटले आकाशद्रव्य लोकालोक प्रमाण छे तेमां अलोकमां बीजुं द्रव्य कोई नथी लोकाकाशना एकेक प्रदेशे धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकायनो एकेक प्रदेश रह्यो छे तथा अनंता जीवना अनंतप्रदेश रह्या छे अनंता पुद्गल परमाणु रह्या छे कालनो समय सर्वत्र वर्त्ते छे.

हवे छ द्रव्यनी फरशना कहे छे धर्मास्तिकायना एक प्रदेशे धर्मास्तिकायना छ प्रदेश फरस्या छे ते आवी रीते के चार दिशिना चार अने पांचमो नीचे छट्ठो ऊपर ए छ प्रदेश फरस्या छे तथा एक मूल पोतें प्रदेश एम सात प्रदेशनो संबंध छे अने धर्मास्तिकायना एक प्रदेशने आकाशद्रव्य तथा अधर्मास्तिकायना सात सात प्रदेश फरशे छे ते एकमूलना प्रदेशने बीजा द्रव्यनो मूलनो प्रदेश फरशे माटे सात प्रदेशनी फरशना छे अने धर्मास्तिकायना एक प्रदेशें जीव पुद्गलना अनंता प्रदेशनी फरशना छे अने लोकने अंते जे धर्मास्तिकायना प्रदेश छे तेने आकाशनी फरशना तो छए दिशीनी छे अने एकमूल प्रदेश सुद्धां सात प्रदेशनी फरशना छे अने बीजा द्रव्यनी त्रण दिशीनी फरशना छे एम सर्व द्रव्यनी फरशना छे अने आकाशथी धर्म अधर्मनी अवगाहना सूक्ष्म छे धर्म अधर्म द्रव्यथी जीवनी अवगाहना सूक्ष्म छे जीवथी पुद्गलनी अवगाहना सूक्ष्म छे.

एम छ द्रव्यना गुण पर्याय सामान्य स्वभाव ११ छे अने विशेष स्वभाव दश छे ते श्रीकेवली भगवंत ज्ञानथी जाणे दर्शनथी देखे ते इग्यार सामान्य स्वभाव कहे छे १ अस्ति स्वभाव २ नास्ति स्वभाव ३ नित्य स्वभाव ४ अनित्य स्वभाव ५ एक स्वभाव ६ अनेक स्वभाव ७ भेद स्वभाव ८ अभेद स्वभाव ९ भव्य स्वभाव १० अभव्य स्वभाव ११ परम

स्वभाव ए इग्यार सामान्य स्वभाव सर्व द्रव्यमां छे ए सामान्य उपयोग दर्शन गुणथी देखे हवे दश विशेष स्वभाव कहे छे १ चेतन स्वभाव २ अचेतन स्वभाव ३ मूर्ति स्वभाव ४ अमूर्ति स्वभाव ५ एकप्रदेश स्वभाव ६ अनेकप्रदेश स्वभाव ७ शुद्ध स्वभाव ८ अशुद्ध स्वभाव ९ विभाव स्वभाव १० उपचरित स्वभाव ए दश विशेष स्वभाव ते कोइक द्रव्यमां कोइक स्वभाव छे कोइक द्रव्यमां कोइक स्वभाव नथी ए ज्ञानथी जाणे एटले सिद्ध भगवान लोकालोक सर्व ज्ञानोपयोगथी जाणी रह्या छे दर्शनोपयोगथी देखी रह्या छे एहवा अनंत गुणी अरूपी सिद्ध भगवान छे ते समान पोतानी आत्माने जाणे उपादेय करी ध्यावे ते समकित जाणवो.

॥ दोहा ॥

अष्ट कर्म वन दाहके, भए सिद्ध जिनचन्द । ता सम जो अप्पागणे, वंदे ताको इंद ॥ १ ॥
कर्मरोग ओषधसमी, ज्ञान सुधारस वृष्टि । शिवसुखामृत सरोवरी, जय २ सम्यक् दृष्टि ॥ २ ॥
एहिज सद्गुरु शीख छे, एहिज शिवपुर माग । लेजों निज ज्ञानादिगुण, करजो परगुण त्याग ॥ ३ ॥
ध्यान वृक्ष सेवो भविक, चारित्र समकित मूल । अमर अगम पद फल लहो, जिनवर पदवी फूल ॥ ४ ॥
संवत सत्तर छिहुत्तरे, मनशुद्ध फागुण मास । मोटे कोट मरोट मे, वसतां सुख चोमास ॥ ५ ॥
सुविहित खरतर गच्छ सुथिर, युगवर जिनचंदसूर । पुण्य प्रधान प्रधान गुण, पाठक गुणे पंडूर ॥ ६ ॥

तास शिष्य पाठक प्रवर, सुमतिसार गुणवंत । सकल शास्त्र ज्ञायक गुणी, साधुरंग जसवंत ॥ ७ ॥
तासशिष्य पाठक विबुध, जिनमत परमतजाण । भविककमल प्रतिबोधत्रा, राज सार गुरुभाण ॥ ८ ॥
ग्यानधर्म पाठक प्रवर, शमदम गुणे अगाह । राजहंस गुरु गुरु शक्ति, सहुजगकरे सराह ॥ ९ ॥
तासशिष्य आगमरुचि, जैनधर्मको दास । देवचंद आनंदमें, कीनो ग्रंथ प्रकाश ॥ १० ॥
आगमसारोद्धार एह, प्राकृत संस्कृत रूप । ग्रंथ कियो देवचंदमुनि, ग्यानामृत रस कूप ॥ ११ ॥
कर्‍यो इहां सहाय अति, दुर्गदास शुभचित्त । समजावन निज मित्रकुं, कीनो ग्रंथ पवित्त ॥ १२ ॥
धर्ममित्र जिन धर्म रतन, भविजन समकितवंत । शुद्ध अमरपद ओलखण, ग्रंथ कियो गुणवंत ॥ १३ ॥
तत्वग्यानमय ग्रंथ यह, जोवे बाला बोध । निजपर सत्ता सब लिखे, श्रोतालहे प्रबोध ॥ १४ ॥
ताकारण देवचंद मुनि, कीनो आगम ग्रंथ । भणसे गुणसे जे भविक, लहेशे ते शिवपंथ ॥ १५ ॥
कथक शुद्ध श्रोतारुची, मिलजो एह संयोग । तत्वग्यान श्रद्धासहित, वली काय निरोग ॥ १६ ॥
परमागमसुं राचजो, लहेसो परमानंद । धर्मराग गुरु धर्मसें, धरजो ए सुखकंद ॥ १७ ॥
ग्रंथ कियो मनरंगसें सितपख फागुणमास । भोमवार अरु तीज तिथि, सफल फली मन आस ॥ १८ ॥

॥ इति श्रीआगमसारोद्धार ग्रंथः समाप्तः ॥

श्रीपंडितदेवचंद्रजीकृत-आगमसार ।

(पत्र ६१ दूसरी पृष्टकी पंचमी पंक्तिकी अशुद्धि है.)

तथा कोइ पूछे जे प्रतिमानी पूजातो पहेला आस्रव मध्ये लखी छे तेने कहीये जे तुम्हे मृषावाद बोलो छो. इहां प्रश्नव्याकरण सूत्रमां पाठ इम छे नही, तिहां पाठ छे ते । लिखीये छे अविजाणओ परिजाणओ विसयहेउ इमेहिं कारणेहिं किं ते करीसण पोक्खरणी वावि वप्पणी कूवसरतलाग चिति वेति खाति आरामविहार थूभ पागारदार गोपूर अट्टालगच-रीय सेतु संकम पासाय विकप्प भवण घर सरणि लेण आवण चेइय देवकुल चित्तसभाए वा आयत-णवसई भूमिघर मंडवाणं कए हींसंति इहां पांच थावरना पांच आलावा छे तेहने छेडे कोहा माणा माया लोभा हिंसा रती इत्यादि पाठ छे ते जे जीव इंद्रीना सवादने माटे चेईअ व कहेतां प्रतिमादिक करे ते आश्रव खाते ए पाठ छे पण पूजानो पाठ नथी ते मृषा शामाटे बोलो छो तथा प्रश्नव्याकरणसूत्रे बीजे संवरद्वारे जे आलावो छे ते लिखीये छे. खवगयवत्ति आयरीय उवज्झाय सेह साहंमीए तवसि सीस वुड्ढ कुल गणसंघ चेईयट्ठे निज्जरट्ठी वेयाच्चं अणिस्सीओ दसविहंबहुविहं करेई. एआलावे आचरज प्रमुख चेईय केहेतां जिनप्रतिमानो वैयावच्च करे निर्जराना

अर्थी अणिस्सीओ कहेतां जस कीर्त्तिनी वांछा रहितथको वैयावच्च दशप्रकार तथा अनेक प्रकारनो करे इहां चेईय कहेतां प्रतिमा छे तो खोटी कल्पना स्यामाटे करो छो तथा बीजे प्रश्ने पूछ्यो जे अहिंसानां ६० नाम कह्यां छे. अभओ सव्वस्सवि अनाघाओ चुक्खाय विंत्ती पूया विमलप्पभा निम्मल करीत्ति एव माइणी निय–गुण निम्मियाइं पज्जय नामाणि हुंति अहिंसाए तिहां प्रतिमा तथा पूजानो नाम नथी तेहनो उत्तर तिहां अहिंसानो नाम जाणो तेहनो अर्थ देवपूजा छे पूजा एहवो दयानो नाम छे तो अजाण्यो इमस्यों प्ररूपणा करो छो बीजुं पूजा तो श्रीअरिहंत प्रतिमानी ते तो विनय तथा वेयावच्च ते अभिंतर तपना भेद छे ते तप मोक्षनो मार्ग छे श्री उत्तराध्ययन सूत्रे २८ मे अध्ययनें तपने मोक्षनां च्यार कारण कह्यां ते मध्ये गण्यो छे तथा तो पछे पुछ्यो जे बोलनी खबर न होवे ते बिचारी बोलीये तथा श्रावके कोणे देहरां कराव्यां तथा प्रतिमा पूजी तेहनो उत्तर श्रीसमवायांग सूत्रे तथा नंदी सूत्रे सर्व आगमनो नूंध छे ते मध्ये ए पाठ छे तिहां उपासक दशानो नोंध छे ते आलावो छे ते लखीए छे. सेकिंते उवासगदसाओ उवासगदसासुणं समणोवासगाणं नगराइं उज्जाणाइं चेइआइं वणसंडाइं समोसरणाइं रायाणो अम्मापियरो धम्मायरिया धम्मकहाओ इह लोइआ पारलोईया इड्ढिविसेसा भोगा परिआउ सुअपरिग्गहीया तवोवहाणाइ सीलव्वयगुणवेर–मण पच्चक्खाणपोसहोववास पडिवज्जणा पडिमा–ओ उवसग्गसंलिहणाओ भत्तपच्चक्खाणइया उ–वगमणं देवलोगगमणं सुकुलपच्चाया पुण बोहि–लाभो अंत किरीया आघविज्जंति ए पाठ छे इहां चेइयाइ शब्द देहरा तथा जिन प्रतिमा जाण ज्यो इहां चेइय एहनो अर्थ बीजो थाये नही जे वननो अर्थ करे तेतो उद्यान वनसं–डनो

पाठ जूदो छे. कोइ साधूनो अर्थ करे ते धम्मायरीया ए पाठ जूदो छे ज्ञाननो अर्थ करे ते सुय ए पाठ जूदो छे ते वास्ते चेइय शब्दे जिन प्रतिमानो अर्थ छे तथा तुम्हे पुच्छयो जे द्वारिका राजग्रहमें देहरा तथा प्रतिमानो पाठ किहां छे तेहनो उत्तर नंदीसूत्रे अणुतरोववाइ तथा अंतगडना नोंधनो पाठ जो ज्यो तथा तुम्हे कहेस्यो इतला बोल उपासक दशा प्रमुखे दीसता नथी तेहनो उत्तर जे नंदी तथा समवायांगमे जे पाठ तेहनो कोण उत्थापी शके ते जो ज्यो तथा तमे पुच्छ्युं जे किणे श्रावके प्रतिमा पूजी छे तेहनो उत्तर घणे श्रावके प्रतिमा पुजी छे ते पाठ श्रीभगवतीसूत्रे तुंगीया नगरीना श्रावको बरणव्या तिहां अभिगय जीवाजीवा इत्यादिक पाठ घणा छे तिहां एहवो पाठ छे असहिज्जदेवासुरनागसुवन्नजक्खरक्खसकिंन्नरकिंपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगादी–एहिं देवगणेहिं निगांथा ओपावयणाओ अणतिकम्मणिज्जा निग्गंथे पावयणेनिस्संकीया निक्कंखीया लद्धट्ठा गहीयट्ठा इत्यादि जे श्रावक कोई जातिना देवतानो साहज वाछंता नथी तो कोई बिजा देवतानी पूजा किम करे एहवा श्रावक जे देवने देव बुद्धि मानता हुवे तेहनेज पूजे ते श्रावक, थिवर आव्या तेवारे एकवार सर्व एकट्ठा मिल्यां एहवो विचार कर्यो जे एहवा निर्ग्रंथनो नाम सांभल्यानो पिण महा लाभ छे तो तेहनो वांदवा जातां सेवा करतां तो महानिर्जरा महा पर्यवसान कहेतां मोक्ष थाय इम विचारी पोते पोताने घरे गया पछी सूत्रे पाठ छे ण्हाया कयबलि कम्मा कयकोउयमंगलपा-यछित्ता शुद्धा पावेसाइ पवरपरिहीया अप्पामहग्घाभरणालंकीयशरीरा सयाओगिहाओ पडिनिक्खमति, तिहां नाह्या ते अंघोल्कीधा कयबलिकम्मा, ते देवपूजा कीधीः कयकोउयमंगल ते तिलकादिक कर्या पछी वस्त्र पेह-

रीने आभरण अलंकार पहेखा पछी घरथी निकल्या एरीते सिद्धार्थ राजा तथा रिखभदत्त सुदरशनशेठ इम सुभद्रपुत्र श्रावक संख पुष्कली श्रावक कार्तिक शेठ वांदवा गया छे तेवारे कयबलिकम्मा तथा पछी घरे आवी साहमीवछल करीने दीक्षा लेवा निकल्या तेवारे न्हाया कयबलीकम्मा ए पाठ छे इत्यादिक श्रावक अन्य देवनी पूजा न करे गोत्रज न पूजे अरिहंत देवनेज पूजे तथा कोइ कहस्ये कयबलिकम्मा पाठ कठीयारा प्रमुख अनेक थानके छे तेमां स्याना छे पोते जेहने देवबुद्धि माने ते तेहने पुजे तथा देवदत्त बालके कीमि पुजा करी हशे ते तो बालकने भावीत्रे पुजा करावी तो कां न करे आज पण बालक पूजा करता दीसे छे तो कयबलिकम्मा ए पाठनो बीजो अर्थ शाने करो छो तथा दीक्षा महोच्छव घणा दीसे छे पण तिहां देहरा प्रतिमानो पाठ नथी तेहनो उत्तर जे दीक्षाने उतावला थया तेवा साधुने वहोरावबा रह्या नथी तो देहरा करावबा तो घरे स्याने रहे अने पहेलां देहरां प्रतिमा छे ते तो नंदीसूत्रे आगमनो घनो पाठ जोस्यो तो सर्व समो पडसे तथा तुम्हे पुच्छुं जे तीर्थंकर ग्रहस्थपणे छतां साधु साध्वी श्रावक श्राविकाए वांद्या नथी तेनो उत्तर घणाए वांद्या छे ते पाठ ज्ञाता सूत्रमां छे तथा तुमे लख्यो जे प्रतिमा एकेन्द्रि दल छे तेहवा बचन संसारनो जेहने भय न हुवे ते बोले जे कारणे श्रीभगवते तो जिणपडिमा कही बोलावी छे देहराने सिद्धायतन कही बोलाव्यो तो तुमे कठोर बचन स्याने बोलो छो तथा तुमे दिशी बंदना करो छो ते दीसी तो अजीवछे तो किम वांदो छो तिहां तुम्हे कहेस्यो जे अम्हारा मनमें तो सिद्ध छे तो जिनपडिमा वांदतां पिण अमारा मनमा सिद्ध छे तथा सूत्रमध्ये गुरुना पाटनी आशातना टालवी कही छे ते पाठ अजीव छे ते पीण सर्व गुरुनो बहु-

मान छे प्रतिमानें बहुमाने सिद्धनो बहु-मान छे तथा सुधर्मा सभामांहिं जिननी दाढा छे ते वंदनीक पूजनीक छे ते तो अजीव स्कंध छे तथा तुमे लख्यो जे परदेशी राजाए प्रतिमा कां न करी ते परदेशी श्रावक थया पछी केटलोक जीव्या छे ते तथा सर्व श्रावक एकज करणी करे एसो नियम छे तथा परदेशीए तथा आणंद श्रावके कोइक साधुने पडिलाभ्या नथी ते माटे तुम्हे साधुने विहराव्यामे दोष मानस्यो ए विचारी ज्यो ज्यो तथा लख्युं छे जे सूरीआभे जे प्रतिमा पूजी ते राजधानीना मंगलीक माटे पूजाकरी ते तो खोटुं बोलो छो ए पाठ सूत्रमें नथी सूत्रमें तो एहवो पाठ छे हियाए सुहाए खेमाए निस्सेसाए आणुगामीयत्ताए भविस्सई निश्रेयस कहेता मोक्ष भणीए अर्थ छे तथा पच्छा शब्दे जे इह लोकनो अर्थ छे इम कहे छे ते मूढ छे दर्दुर देवताने अधिकारे पच्छा शब्दे आवता भवनो अर्थ छे तथा आचारांगसूत्रे जस्सपुविियनो तस्स पछायिनो इहां पूर्व शब्दे पूठलो भव पच्छा शब्दे आवतो भव लीधो छे तथा ए भवे समकितनो लाभतो घणो छे तथा तीर्थंकर वांद्यानो फलनो पाठ उववाई मध्ये तथा पंचमहा व्रत पाल्यानो पाठ आचारांग मध्ये तिहां पण हियाए इत्यादिक पाठ छे ते बे ठेकाणे लाभ मानो छो तो जिनप्रतिमा ठामे ना स्याने कहोछो अने किहां जिनप्रतिमा पूजानो पाप कह्यो नथी अने होयतो देखाडो तुमें लिख्युं जे भगवंते हिंसानी ना कही छे तेतो अमे किहां कहुछुं जे हिंसा करवी, पण भगवंते किसे सूत्रे प्रतिमा पूजानी ना कही नथी प्रतिमानी १७ प्रकारनी पूजा सूत्रे कही छे तथा तुमे प्रतिमानी पूजा हिंसामां गिणो छो ते इमनथी प्रतिमानी पूजातो विनय तथा वेयावच्च धर्ममां छे तथा पूजा हिंसामे गणी तो ठाणांगे नदीमें पडती साध्वीने साधु काढे तेमां हिंसा

गणी नहीं तथा आचारांगसूत्रे बीजा साधु अजाणे पण शर्करानी भूले लूण बीहरीने पछे जाणे जे लूण बीहराव्यो ते जाणी ते पोते खायेते पोते पीये तथा बीजा साधु संभोगीने आपे ते खाये पीए तथा विषम वाटे वेलने रूखने लताने गुच्छाने अवलंबी उतरे जे पाठ आचारांगसूत्रे छे तथा भगवती सूत्रमे साधुना हरस काढे तेहने क्रिया कर्म लागे नहीं तथा मल्लिनाथजी पूतलीमे कवल मूंक्या ते माटे धर्ममाटे हिंसाकरी तथा सुबुद्धि मंत्रीए पाणी पलटाव्यो ते धर्म माटे करी पिण मंदबुद्धि न कह्या छे भगवती सूत्रे २५ मे शतके साधु शासन माटे तेजो लेश्या मुके तेहने आराधक कह्यो तथा जंबूद्वीपपन्नत्तीए निर्वाणमहोच्छव कर्यो छे थूभकर्या ते जिणभत्तिए धम्मोत्ति एपाठ छे इंम केटला पाठ लीखीए अनेक पाठ छे तथा नंदी सूत्रे जे आगम कह्या ते उत्थापीनें ३२ मानोछो ते केनी आज्ञा छे तथा आवश्यकसूत्र पडिकमणा विना साधु पणो श्रावक पणो हूवेज नही ते तुम्हे आवश्यकसूत्र पडिकमणो मानता नथी तो श्रावकपणो ने साधुपणो केम धरावोछो श्रीभगवतीसूत्र साधु साध्वी श्रावक श्रावीका पंचमा आराना छेहडा पर्यंत कह्या छे ते तुमारी श्रद्धामें हिवणां साधु साध्वी कोणछे तथा सूत्रे आचरज उपाध्याय कुल गणनी निश्राये विचरे ते आराधक ते तमें कोनी निश्राये विचरोछो ते लिखज्यो तथा श्रीभगवतीसूत्रे गाथा छे पढमो गीयत्थ विहारो, बीयोगीयत्थनीसीओ भणिओ, इत्तो तइय विहारो, नाणुन्नाओ जिणवरेहिं २ एहनो अर्थ गीतार्थ होय ते पोते विहार करे अथवा गीतार्थनी निश्राये विहार करवो एहथी तीजा विहारनी अरिहंते आज्ञा दीधी नथी, ते माटे तुमे किस्या गीतार्थनी निश्राये विहार करोछो तथा योग उपाधान वहीने सिद्धांत भणे तेपण श्रावक आचा-

रांगाद्विकसूत्र भणे नही ते निशीथमां कह्यो छे जे भिक्खु अन्नउत्थीयं वा गारत्थियंवा वायणं वाएई वाइ-
जंतं साइज्जति तस्सचोमासीयं परिहार ठाणं जे गृहस्थांने सूत्र वंचावे अथवा वांचताने अनुमोदे तेहने चार मासनो
पाल्यो चरित्र जावे तथा प्रश्नव्याकरणसूत्रे अह केरीसीयं पुण सवत्तुभासियवं जत्थदव्वेहिं गुणेहिं पज्जवेहिं
कम्मेहिं बहुविहेहिं आगमेहिं नामाक्खायनिवाय उवसग्गतद्धिअसमास संधिपद जोगउणादि कीरीयावीहीणसरधाउस-
रविभत्ति वन्नजुतं भासियवं तथा अनुयोगद्वारे ७ नय, ४ निक्षेपा, ३ काल तीन लिंगातीन, जाण्याविना उपदेश
देवो ते मारग नथी इत्यादिक अनेक बोलछे ते गीतार्थनी सेवनाथी पामीये इतिभद्रं जेकेई श्रीजिनप्रतिमानी
पूजामध्ये फूल पूजानी शंका करे तेहने कहीये जे श्रीरायपसेणीसूत्रे १७ भेदी पूजानो पाठछे पुप्फारूहणं १ माला-
रूहणं २ तह वन्नारूहणं ३ तथा पुप्फगिह ४ पुप्फपगरं ५ एतली पूजा फूलनी छे तेमाटे पूजा फूलनी ते प्रमाण छे,
तथा श्रीभगवतीसूत्रे पण सूरीआभनी पेरे पूजानी भलामणना पाठ अनेक छे तथा ज्ञातासूत्रे द्रौपदीने अधिकारे
१७ प्रकारी पूजानो पाठ छे समवायांगसूत्रे चौतीस अतिशयने अधिकारे जलथलय भासुरदसद्धवन्नेणं जाणु-
स्सेहप्पमाणमित्तेणं पुप्फपुंजोवयारं करेई इत्यादि पाठ छे इहां समवायांगसूत्रमें देवता मनुष्यनो नाम कह्यो नथी तथा
श्रीउववाईसूत्रे कोणिकने अधिकारे श्रीवीर समोसर्या तेवारे अनेकजन चंपाथी निकल्या जे अप्पेगइया वंदण वत्तियाए
अप्पेगइया पूयणवत्तियाए अप्पेगइयाअसुयं सुयस्सामो अप्पेगइयाविउलाईअट्ठाओ हेओआइ य पसिणाई गहिस्सामो,
इत्यादि पाठ छे तिहां पूयणवत्तीयाए ए पाठनो अर्थटीका मध्ये पूजनं पुष्पमालादिना इम कह्यो छे इहा श्री तीर्थंकरने

पुष्पनी पूजादीसे छे एपाठ श्रीभगवतीसूत्रेपणछे तथा नंदीसूत्रे श्रुतज्ञानने पाठे जे इमं अरिहंतेहिं भगवंतेहिं उप्पन्न-नाणदंशण धरेहिं तिलुक्क निरक्खीय महीअ पूइएहिं पाठनो अर्थ टीकाकारे पिणमहीयशब्दे चंदनादि पूइएहिं पुष्फमा-लादिके करीने ए पाठ अनुयोगद्वारमध्ये पण छे इंम पुष्फपूजाना अनेक पाठ छे ते माटे शंका न करवी वली केइक इम कहे छे जे फूल वेचाता जडे ते चढाववा पण पोते चूंटी चढाववा नही तेपण अजाण्युं कहे छे जे श्रीजीवाभि-गमसूत्रे ततेणं से विजएदेवे पोत्थयरयणंगिह्णइ पो० रयणं गिह्णित्ता० पोत्थयरयणं मुयति पो० २ त्ता पोत्थयरयणं विहा-डेति पो० २ त्ता पोत्थय रयणं वाएइ पो० २ त्ता धांम्मयं ववसायंगेह्णतिध० २ त्तापोत्थयरयणं पडिनिक्खमति पो० २ त्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेत्ति सी० २ त्ता ववसायसभातो पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं पडिनिक्खमइपु० २ त्ता जेणेवनंदा पुक्ख-रणी तेणेव उवागच्छतिउ० २ त्ता णंदापुक्खरिणीं अणुप्पयाणिणं करेमाणे पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं अणुपविसतिअ० २ त्ता पुरत्थिमिल्लेणं तिसोपाणपडिरूवेणं पच्चोरुहतिप० २ त्ता हत्थपादं पक्खालेतिह० २ त्ता एगं महं सेतं रजतामयं विमलसलिलपुण्णं मत्तगयमहामुहागिइसमाणं भिंगारं पगिह्णतिप० २ त्ता जाइं तत्थ उप्पलाइ जावसत्तपत्ताइं सहस्सप-त्ताइं ताइं गेह्णंत्ति २ त्ताणंदातो पुक्खरिणिओ पुच्चुत्तरेइप० २ त्ताजेणेव सिद्धायतणे तेणेव पाहारेत्यगमणाइ तएणं तंविजयं देवं चत्तारी सामाणिय साहस्सीओ, जाव अण्णेबहवे वाणमंतरा देवा देवीओ अप्पेगतिया उप्पलहत्थ गता जाव सत सहस्स पत्तहत्थगया विजय देवं पिठिओ अणुगच्छइअ० त्ता इहां फूल चूंटी लीधां छे एआलावे विजयदेवे पोते वावडीमें उतरीने फूल चूंटी लीधां तथा सामानिक देवता तथा बीजे देवताये पिण फूल पोताना हाथथी

लीधां छे इहां कोई पूछस्ये जे तिहीं कोइ माली नथी ते माटे पोते लिधां तेहनो उत्तर जे माली नथी पिण देवता चाकर लोक घणाछे तेहनेज पासे कां न मंगावे, जो पुष्प आण्यानो विधि होवे तो पण पोताना हाथथी लीधानो विधि छे ते माटे पोते वावडी मध्ये उतरी लीधाछे तथा श्रीरायपसेनी सूत्रे सूरीयाभ अधिकारे ततेणं से सूरियाभेदेवे पोत्थयरयणं गिण्हइ२त्ता गिण्हित्ता पोत्थय रयणं मुयइ पोत्थय रयणं विहाडेइवि० त्ता पोत्थयरयणं वाएति वा० त्ता धम्मियं ववसायं गिह्ण इगि० त्ति पोत्थय रयणं पडिणिक्खमति० त्ता २ सिंहासणओ अब्भुट्ठेइ २ त्ता ववसाय सभाओ पुरत्थिमिलेणं दारेणं पडिनि क्खमइव० त्ता जेणेव नंदापोक्खरणी तेणेव उवागच्छइ उ० त्ता नंदापोक्खरणी पुरच्छिमिलेणं तोरणेणं तिसोपाणपडि रूवेणं –पच्चोरुहति० २ त्ताहत्थपायं पक्खालेइ २ त्ता आयंते चोक्खे परमसुइभूए एगं सेयमहं रययामयं विमल सलिलपुण्णं मत्तगयमुहागितिसमाणं भंगारं पगिह्णंति त्ता जाइं तत्थउप्पलाइं जावसयसहस्स पत्ताइं गिह्णंति णंदाओ पुक्खरिणीओ पच्चोरुहई० २ त्ता जेणेव सिद्धायतणे तेणेव पहारेत्थ गमणाए तएणं तं सूरियाभं देवं चत्तारि सामा- णिय साहस्सीओ जाव सोलस आयरक्ख देव साहस्सीओअण्णेय वहवे सूरियाभविमाणे जावदेवा देवीओ अत्थे- गईया उप्पलहत्थगया जाव सत्त सहस्स पत्तहत्थगया सूरियाभं देवं पिट्ठओ समणुगच्छंति ततेणं सूरियाभंदेवं बहवे आभिओगिय देवाय देवीओय अत्थेगइया कलसहत्थगयाओ जाव अत्थेगइया धूवकडुच्छहत्थगया हट्ठ तुट्ठा जाव सूरियाभं देवंपिट्ठओसमणुगच्छंति ततेणंसे सूरियाभेदेवे चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव अण्णेहिं- य ब–हुहिं सूरियाभविमाण वासीहिं देवेहिं देवीहिंयसद्धिं संपरिवुडे सव्वड्ढीए जावणाइयरवेणं जेणेव सिद्धाययणे तेणेव

उवागच्छइ सिद्धायणं पुरच्छिमिलेणं दारेणं अणुपविसंति० २ त्ता जेणेव जिणपडिमाउ तेणेव उवागच्छई जिणपडि-
माणं आलोए पमाणं करेतिक० त्ता २ लोमह-त्थगं गिह्णइगि० त्ता २ जिणपडिमाणं लोमहत्थएणं पमज्जइप० २
त्ता जिणपडिमाओ सुरभिणागंधोदएणंह्णाणेति ह्णाणित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाणं अणुलिप्पइ २ त्ता जिण
पडिमाणं अहयांइं देवदूसाइं जुयलाइं णियंसेइ० २ त्ता पुप्फारूहणं मल्लारूहणं चूण्णारूहणं गंधारूहणं वण्णारूहणं
चुण्णारूहणं वत्थारूहणं आभरणारूहणं करेइ करेत्ता आसत्ता सत्त विउलवग्घारियमल्लदामकलावं करेई० त्ता करग्गह
गहित्त करयलपब्भट्ठविप्पमुक्केणं दसद्धवण्णं कुसुमेणं मुक पुप्फ पुंजोवयारकलियं करेति करेत्ता जिणपडिमाणं पुरतो
अच्छेहिं सह्णेहिं सेएहिं रयणामएहिं अच्छरसतंदुलेहिं अट्ठट्ठ मंगले आलिहइ तंजहा सत्थिय जावदप्पणं तयाणंतरं च णं
चंदप्पह रयणवइरवेरुलियविमलदंडकंचणमणिरयणभत्तिचित्तं कालागुरु पवर कुंदरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंत गंधत्ता माणु
चिद्धंति धूववट्टि विणिमुयंतं वेरुलयमयं धूवकडुच्छगं पग्गहिय पयत्तेणं धूवं दावुणं जिणवराणं अट्ठसयविसुद्ध गंथ जुत्तेहिं
अपुणरुत्तेहिं महावित्तेहिं संथूणइ सत्तट्ठपयाहिं पच्चोरुहइ० त्ता वामं जाणुं अंचेइ दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निह ट्टु
तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसिणिव्वोडेति २ त्ता इसिं पच्चुण्णमइ इसिं पच्चुणमित्ता करयलपरिग्गहियं सि-रसावत्तं मत्थए-
अंजलिकट्टुएवं वयासी णमोत्थुणं अरि-हंताणं जावसंपत्ताणं वंदति णमंसई० २ त्ता एरायपसेणी सूत्रे पाठछे सूरियाभे
पोते हाथे फूल चूंटी लीधा छे सामानिक प्रमुख पसे मंगव्या नथी तथा जंबुद्वीपपन्नत्तीमे जन्माभिषेक जेणेव खीरोद
समुद्दे तेणेव आगच्छइ० त्ता खीरोदगं गिह्णंत्ति २ त्ता जाइं तत्थउप्पलाइं पउमाइ जावसहस्स पत्ताइं तावगिह्णंति० त्ता

इत्यादि सूत्रमे पाठ हाथना चूंट्या फूल लेवाना छे तथा कोइक कहसे जे एतो चूंट्या नथी सहेजे पड्या लीधां छे तेहने कहीये छे जेह हज्जार गमे सहेजे पड्यां वावडी मध्ये हवेज नही तथा नग्गइने अधिकारे नग्गइ राजाए आंबानी मांज-रीयो पोते चूंटी लीधी तेवारे कटक वधे चूंटी लीधी ते पाठ उववाई मध्ये जोजो अन्नयाणु जुत्तनिग्गओपेच्छइ कुसुमा-चूअ-राइणाएगा मंजरी गहीया एवंखंधावारेणं तेणं मंजरीपत्त पवाल लयाइ गहियाइ कट्ठाविसेसोकओ पडिनियत्तओ पुच्छइ कहे सोरुक्खो अमच्चेणा दंसीओ कहं एसअवत्थोभणइ तुम्हेहिं एगामंजरी गहीया पच्छा सव्वणं गहेतेणं एवं कओ इहां गहीय शब्दे चूंट्यानो अर्थ छे तथा कोइ कहेस्ये जे एतो देवताये कर्यो छे ते श्रावके कर्यानो किहां पाठ नथी तेहने कहीये जे जो देवतानी करणी ताहरे न करवीतो शक्रस्तव किमकरे छे तथा स्नात्र केम मानो छो स्नात्रनो कलस ढोलोछो ते देवतानी करणी छे तथा सूरियाभनी पूजानी भलामण द्रौपदीने पाठे छे देवतानी पूजा करणी तथा मनु-ष्यनो पाठ एकज छे ते माटे देवतानी पूजा करणी श्रावक करे ए श्रद्धा प्रमाण छे तथा जे फूल चूटवानी ना कहे ते वींटना जीवनि कीलामना माटे तेवारे फूलनी पूजा किम करी शके अने फूलनी पूजानो तो सूत्रे पाठ छे तथा जे पूजाने हिंसामे गणे तेहने कहिये जे श्रीप्रश्नव्याकरण सूत्रे प्रथम संवरद्वारे अहिंसा ना ६० नाम कह्या छे तिहां पूजा ते दया कही छे ते पाठ लिखीये छे अभउ सव्वस्सवि अनाघाओ चुक्खपवत्ती पूया विमलप्पभा निम्मल करती एव माइणि नियगुण निम्मीयाइ पज्जाय नामाणि हुंति अहिंसाए भगवइए इत्यादि पाठे पूजा ते अहिंसामें गणी छे तो तुम्हे हिंसामे किम गणोछो तथा भगवती सूत्रे शुभंयोगं पडुच्च अणारंभी ए पाठ शुभयोग प्रवृत्तिने आरंभनी ना कही

छे विनय तथा वेयावच्च ते तपना भेद छे तप ते मोक्ष मार्ग मध्ये श्रीउत्तराध्ययने २८ मे अध्ययने कह्यो ते तुमे हिंसामें केम कहोछो तथा विवहार सूत्रे सिद्ध वेयावच्चेणं महानिज्जरा महापज्जवसाणं भवति ते माटे सिद्ध वैयावच्च ते पूजा छे तथा कोइ पूछे जेश्रावके प्रतिमा किहां पुजी छे तेहने कहेवो जे श्रीभगवती सूत्रे तुंगीयानगरीने श्रावके पूजा करी छे शंख पुष्कली ये पूजा करी छे तथा समवायांग सूत्रे द्वादशांगीनी हुंडीने अधिकारे उपासक दशानी हुंडी-मध्ये दश श्रावकनां चैत्य एहवो पाठ छे चैत्य तो साधु थाय नही ज्ञान थाय नहीं ते सर्वना पाठ जुदा छे तथा नंदी सूत्रे पिण पाठ छे तथा नंदी मध्ये जे आगम कह्या ते सर्व माने तेज समकिति जाणवो श्रीअनुयोगद्वार सूत्रे निर्यु-क्तिनी हा कही छे ते निर्युक्तिमध्ये पूजाना अनेक अधिकार छे तथा तंदुलवेयालीयपयन्नानी टीकामध्ये समवसरणना फूल सचित्त ते ऊपर साधु साध्वी चाले प्रवचनसारोद्धारनी टीकाये पण ए संमत छे तथा कोइ कहस्ये जे फूलने प्रोइ परोववा नहीं तेहने कहीये जे हीर प्रश्नमध्ये पाठ छे तथा वन्नगंधोवमेंहेंचेति श्लोक व्याख्यायते श्राद्धदिन कृत्ये प्रोत पूजाक्षराणी वर्त्तते तथा आद्य पक्षेतु श्रीजिनवल्लभ सूरि कृत पूजा कुलकेऽपि प्रोत पुष्पाक्षराणि संति तथा हरिभद्र सूरि कृत पूजा पंचासके जहरेंहई तह कीरइ ए गाथाना आसयथी पिण प्रोया फूलनी हा जणाय छे तथा उमास्वाति वाचक कृत पूजा पटलमां पिण एमज जणाय छे.

॥ श्रीपरमगुरुभ्यो नमः ॥

अथ

श्रीदेवचंद्रजीकृत नयचक्रसार

बालावबोधसहित लिख्यते.

॥ मंगलाचरण ॥

प्रणम्य परमब्रह्म,–शुद्धानन्दरसास्पदम् । वीरं सिद्धार्थराजेन्द्र,–नन्दनं लोकनन्दनम् ॥ १ ॥
नत्वा सुधर्मस्वाम्यादि, सङ्घं सद्वाचकान्वयं । स्वगुरून् दीपचन्द्राख्यपाठकान् श्रुतपाठकान् ॥ २ ॥
नयचक्रस्य शब्दार्थं कथनं लोकभाषया । क्रियते बालबोधार्थं, सम्यग्मार्गविशुद्धये ॥ ३ ॥

प्रशस्ति

श्रीजिनागमने विषे १ द्रव्यानुयोग २ चरणकरणानुयोग ३ गणितानुयोग ४ धर्मकथानुयोग ए चार अनुयोग कह्या छे तेमां छ द्रव्य अने नव तत्व तेना गुण पर्याय स्वभाव परिणमनने जाणवुं ते द्रव्यानुयोग. एवं पंचास्तिकायनुं स्वरूपकथनरूप छे ते पंचास्तिकायमध्ये एक आत्मा नामे अस्तिकाय द्रव्य छे ते आत्मा अनंता छे तेना मूल बे भेद छे तेमां एक सिद्ध स्वस्वरूप निष्पन्न सर्वकर्मावरणदोषरहित संपूर्णकेवलज्ञान केवलदर्शनादिगुणप्रकटरूप, अखंड, अमल, अव्याबाधानंदमयी, लोकने अंते विराजमान, स्वरूपभोगी ते सिद्धजीव कहियें. ते सिद्धता सर्व आत्मानो मूल धर्म छे, ते सिद्धतानी ईहा करवाने सिद्धभगवंतनो यथार्थसिद्धपणो ओलखीने निष्पन्न सिद्धनो बहुमान करवो अने पोते पोतानी भूले अशुद्ध चेतनपणे परिणमतां बांध्यां जे ज्ञानावर्णादिकर्म ते टालीने पोतानी संपूर्ण सिद्धतानी रुचि करवी एहीज हितशिक्षा छे.

वली बीजो भेद संसारिजीवोनो छे ते जेणे आत्मप्रदेशें स्वकर्त्तापणे कर्मपुद्गलने ग्रह्या जेने कर्मपुद्गलनो लोलीभाव छे ते मिथ्यात्व गुणठाणाथी मांडीने अयोगी केवली गुणठाणाना चरमसमयपर्यंत सर्व संसारीजीव कहियें तेना वली बे भेद-छे, एक अयोगी, बीजा सयोगी. ते सयोगीना बे भेद, एक सयोगीकेवली बीजा सयोगी छद्मस्थ. छद्मस्थना बे भेद एक अमोही बीजा समोही. समोहीना बे भेद छे एक अनुदितमोही बीजा उदितमोही. उदितमोहीना बे भेद एक सूक्ष्ममोही बीजा बादरमोही. बादरमोहीना बे भेद एक श्रेणिवंत बीजा श्रेणिरहित. श्रेणिरहितना बे भेद एक संयमी विरति बीजा अविरति, अविरतिना वली बे भेद एक समकीति बीजा मिथ्यात्वी. मिथ्यात्वीना बे भेद एक ग्रंथिभेदी बीजा ग्रंथि-

अभेदि. ग्रंथिअभेदिना बे भेद एक भव्य बीजा अभव्य. तेमां अभव्यजीवोनुं तो दलज एवो होय जे श्रुतअभ्यास पण करे तथा द्रव्यथी पंच महाव्रत आदरे पण आत्मधर्मनी यथार्थ श्रद्धा विना पेहेलो गुणठाणो किवारे मूके नही माटे ए जीवो ते सिद्धपद पामवाने योग्य नही ते अभव्य चोथे अनंते छे.

बीजा भव्य ते जे सिद्धपणाने योग्य छे जेने कारणयोग मिले पलटण पामे ते भव्यजीवो अभव्यथी अनंतगुणा छे ते मध्ये केइक भव्य सामग्रीयोग पामी ग्रंथिभेद करीने समकित पामे अने केटलाएक भव्य तो सामग्रीने अभावें समकित पामेज नही. उक्तं च विशेषणवत्यां सामग्गी अभावाओ, ववहाररासि अप्पवेसाओ ॥ भव्वावि ते अणंता, जे सिद्धसुहं न पावंति ॥ १ ॥

पण ते भव्य जीवोमां योग्यताधर्म छतो छे ते माटे भव्य कहियें. जे जीव मिथ्यात्वतजीने शुद्ध यथार्थ आत्मपणे व्यापक रह्यो तेज मारो धर्म अने जेथी ते आत्मसत्तागत धर्म प्रगटे ते साधनधर्म बे भेदे छे एक वायणा–पुछणादि–वंदन, नमनादि पडिलेहण–प्रमार्जनादि जेटली योगप्रवृत्ति ते सर्वद्रव्यथी साधनधर्म कहियें ते भावधर्म प्रगट करवाने जे करे तेने कारणरूप छे द्रव्य ते जे भावनुं "कारण कारयासे दव्वं" इति आगमवचनात् ॥

अने जे उपयोगादि पोताना क्षयोपशमभावें प्रगट्या जे ज्ञानवीर्यादिगुण ते पुद्गलानुयायीपणाथी टालीने शुद्धगुणी जे श्रीअरिहंत–सिद्धादिक तेना शुद्धगुणने अनुयायी करवा अथवा आत्मस्वरूप अनंतगुणपर्यायरूप तेने अनुयायी करवा ते भावथी साधनधर्म जाणवो ए आत्मा नीपजाववानो उपाय छे.

जिहां लगे आत्मानुं शुद्धस्वरूप चिदानंदघन ते साध्यमां नथी अने पुद्गलसुखनी आशायें विष, गरल, अन्योन्य अनुष्ठान जे करवुं ते संसारहेतु छे माटे साध्यसापेक्षपणे स्याद्वादश्रद्धाये साधन करवुं एहिज मार्ग छे अने ए मार्गनी जे प्रतीतरुचि सम्यक्त्व कहियें. ते सम्यक्त्व ग्रंथिभेद कर्या पामियें ते ग्रंथिभेद तो त्रण करण करे तो जडे ते त्रण करण जीव करे तेवारें सम्यक्दर्शन पामे ते त्रण करणमां पेहेलुं यथाप्रवृत्तिकरण, बीजुं अपूर्वकरण, त्रीजुं अनिवृत्तिकरण ए करण सर्व संज्ञी पचेंन्द्रि करे तेमां प्रथम यथाप्रवृत्तिकरण ते भव्य तथा अभव्य पण करे कोईक जीव अनंतिवार करे ते यथाप्रवृत्तिकरणनुं स्वरूप लखियें छेये.

सर्वकर्मनी उत्कृष्टस्थितिना बांधनार जीवने संक्लेश घणो छे माटे यथाप्रवृत्तिकरण करे नही, उक्तंच विशेषावश्यके-उक्कोसठिई न लब्भइ, भयणा एएसु पुव्वलद्धाए ॥ सव्वजहन्नठिइसुवि, न लब्भइ जेण पुव्वपडिवन्नो ॥ १ ॥ माटे कर्मनी उत्कृष्टस्थितिनो बांधनार जीव ते चार सामायिकनो लाभ न पामे अने जे जीव सात कर्म्मनी जघन्यस्थिति बांधे ते जीव तो गुणवंतज छे ए रीत छे माटे जेवारें एक कोडाकोडी सागरोपम पल्योपमने असंख्यातमें भागे उणी स्थिति बांधतो होय ते यथाप्रवृत्तिकरण करे जे जीव कर्म्मक्षपणारूप शक्ति पाम्यो न हतो ते शक्ति पाम्यो तेने यथाप्रवृत्तिकरण कहिये उक्तं च भाष्ये येन अनादिसंसिद्धप्रकारेण प्रवृत्तं कर्मक्षपणं क्रियते अनेनेति करणं जीवपरिणाम एव उच्यते अनादिकालात् कर्मक्षपणप्रवृत्ताध्यवसायविशेषो यथाप्रवृत्तिकरणमित्यर्थः

क्षयोपशमी चेतनावीर्य जे संसारनी असारता जाणे संसार दुःखरूप करी जाणे तेथी परिग्रह शरीरथी खरे उद्वेगें

उदासीनता परिणामे करी सातकर्मनी स्थिति अनेक कोडाकोडीना थोकडा असंख्याता जे सत्तामां हता ते खपावे ने कांइक ऊणी एक कोडाकोडी राखे ए यथाप्रवृत्तिकरण आत्मा अनंतिवार करे पण ग्रंथिभेद करी शके नही ए करण ते गिरि नदीने विचें आव्युं पाषाण ते घंचना घोलनारूप चालवे करीने जेम सहेजे सुंहालो थाय अने कोइक आकार पकडे तेम जन्म मरणादि दुःखने उद्वेगें अनाभोगथीज भववैरागें जीव यथाप्रवृत्तिकरण करे एहिज जीव कोइक रीतें वैराग्यें विचारे जे भवभ्रमण ते दुःख छे. ए संयोगवियोगादि असार छे पण कांइक ज्ञानानंदादि ते सार छे एहवी गवेषणा करनारो जीव ते यथाप्रवृत्तिकरण करीने अपूर्वकरण करे. इहां कोइ पुछे जे भव्यने तो पलटण योग्यता छे पण अभव्य जीव केम करे तेनुं उत्तर जे तीर्थंकरभक्तिमां जे देवतानी महिमा तथा लोक सन्मानादिक देखीने पुण्यनी वांछायें देवत्व राज्यादिक लाभ इच्छायें इग्यार अंग तथा बाह्य पंच महाव्रतादि पामे पण तेने सम्यक्त्व न होय जे पुद्गलाभिलाषी छे तेने गुणस्पर्श न थाय उक्तं च महाभाष्ये । अर्हदादिविभूतिमतिशयवतीं दृष्ट्वा धर्मादेवंविधसत्कारो देवत्वराज्यादयः प्राप्यंते इत्येवं समुत्पन्नबुद्धेरभव्यस्यापि देवनरेंद्रादिपदेहया निर्वाणश्रद्धारहितकष्टानुष्ठानं किंचिदंगीकुर्वतो ज्ञानरूपस्य श्रुतसामायिकमात्रलाभेऽपि सम्यक्त्वादिलाभः श्रुतस्य न भवत्येवेति ॥ ए रीतें धारवुं.

तथा अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिकरणनो अधिकार जेम आगमसारमां लख्यो छे तेज प्रमाणे इहां पण जाणवो. इम त्रण करण करीने उपशम अथवा क्षयोपशम अथवा क्षायिक सम्यक्त्व जे पाम्यो अने आत्मप्रदेशें वर्त्तमाने सम्यक्दर्शनगुणनो रोधक एहवो मिथ्यात्व मोहप्रकृतिना विपाकोदयने टलवे करीने जे सम्यक्दर्शनगुणनी प्रवृत्ति थाय तेथी

यथार्थपणे निर्द्धार सहित जाणपणो प्रवर्त्ते ते जीवने द्रव्यानुयोगें तत्त्वज्ञान प्रगटे तेथी जे आत्मगुण प्रगटे तेथी जे आत्मगुण प्रगटे ते आत्मगुणरक्षणार्थेज प्रवर्त्ते एहवी स्वरूपानुयायी आत्मगुणनी प्रवृत्ति तेहने धर्म करी सद्दहे ते माटे स्याद्वादपरिणामी पंचास्तिकाय छे ते स्याद्वादरूप ज्ञान ते नयज्ञाने थाय माटे नयसहित ज्ञान करवुं ते नयज्ञान अति दुर्लभ छे. अने नयनी अनंतता छे उक्तं च जावइया वयणपहा तावइया चेव हुंति नयवाया ॥ ते जे पूर्वापर सापेक्ष नही ते कुनय कहियें. अने सर्वसापेक्षपणे वर्त्ते ते सुनय कहियें. ते मूल सात नय छे, तेनुं स्वरूप अल्पमात्र लखियें छैयें.

नय ते ज्ञानगुणनुं प्रवर्त्तन छे. जे कारणे एकद्रव्य मध्ये अनंता धर्म छे ते एकसमयें श्रुतोपयोगमां आवे नही, स्या माटे जे श्रुतज्ञाननो उपयोग असंख्यात समयें थाय. अने वस्तु मध्ये तो अनंता धर्म एकसमये परिणमता पामियें तेवारे श्रुतज्ञान सत्य थाय नही तेमाटे नयें करी जाणे तथा यद्यपि केवलीनो उपयोग एकसमयी छे तेमाटे जाणवामां नयनुं कार्य केवलीने पडे नही पण वचने कहेतां केवलीने पण नयें करी कहेवुं पडे, कारण के वचन तो क्रमे करीने बोलाय छे अने वस्तुधर्म अनंता एकसमयकालें छे तेमाटे नयें करी कहे वली जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणपूज्य कहे छेः—

जीवादि द्रव्यमां जे गुण छे ते अनंतस्वभावी छे, गुणनी छति तेनुं परिणमन तेनी प्रवृत्ति तेमां जे समये कारणता ते समयेज कार्यता इत्यादि अनेकपरिणतिसहित छे तेथी कोइक रीते सर्वनुं भिन्नाभिन्नपणे ज्ञान थाय ते नयथी थाय. माटे समकितरुचि जीवने नयसहित ज्ञान करवुं जे एटला धर्म सर्वद्रव्य मध्ये रह्या छे माटे प्रथमतो श्रीगुरुकृपाथी द्रव्यगुण पर्याय ओलखावे छे ए पीठिका कही. हवे मूलसूत्रना अर्थनुं व्याख्यान करे छे.

श्रीवर्द्धमानमानम्य, स्वपरानुग्रहाय च । क्रियते तत्त्वबोधार्थं, पदार्थानुगमो–मया ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीके॰ गुणनी शोभा अतिशय शोभायें विराजमान एहवा श्रीवर्द्धमान अरिहंत शासनना नायक ते प्रतें अत्यंतपणे नमीने नमस्कार करीने पोतानो मान मूकी त्रण योग समावी गुणीने अनुयायी चेतनानुं करवुं तेने नमवुं कहियें तेपण स्वके॰ पोताने अने पर जे शिष्य अथवा श्रोतादिकने अनुग्रहके॰ उपकारने सारु तत्त्वके॰ यथार्थ वस्तुधर्म तेने बोधके॰ जाणवाने अर्थें पदार्थके॰ धर्मास्तिकायादिक छ मूलद्रव्य तेनो अनुगमके॰ साचो प्ररुपवो ते क्रियते के॰ करियें छैयें.

जगत्मां मतांतरीओ द्रव्यने अनेकपणे कहे छे तिहां नैयायिक सोल पदार्थ कहे छे. वैशेषिक सात पदार्थ कहे छे. वेदांतिक, सांख्य एक पदार्थ कहे छे. मीमांसक पांच पदार्थ कहे छे. पण ते सर्व मिथ्या छे. तेणे पदार्थनुं स्वरूप जाण्युं नथी अने श्रीअरिहंत सर्वज्ञ प्रत्यक्षज्ञानी ते एक जीव अने पांच अजीव ए रीते छ पदार्थ कहे छे. इहां कोइ पुछे जे नवतत्त्व रूप नव पदार्थ कह्या छे ते केम? तेने उत्तर जे एक जीव, बीजो अजीव, ए बे पदार्थ तो मूल छे अने शेष सात तत्त्व तो जीव अजीवनो साधक बाधक शुद्ध अशुद्ध परिणतिनी अवस्था भिन्न ओलखाववाने कह्या छे.

श्लोक ॥ द्रव्याणां च गुणानां च, पर्यायाणां च लक्षणं । निक्षेपनयसंयुक्तं, तत्त्वभेदैरलङ्कृतम् ॥

तत्र तत्त्वभेदपर्यायैर्व्याख्यातस्य–जीवादेर्वस्तुनो भावः स्वरूपतत्त्वम्

अर्थ—द्रव्यना गुणना तथा पर्यायना लक्षण जे ओलखाण ते निक्षेपें करी तथा नयें करी युक्त तत्त्वना भेद सहित कहुं छुं तत्र के॰ तिहां जिनागमने विषे तत्त्व जे वस्तुस्वरूप, भेद तेना जूदा जूदा भेदपर्याय तेमां रह्या जे धर्म एटला प्रकारें व्याख्या के॰ अर्थनुं कहेवुं तेणे करीने यथार्थ व्याख्यान थाय तिहां तत्त्वनुं लक्षण कहे छे. व्याख्यान करवा योग्य जे जीवादिक वस्तु तेनो मूलधर्म ते वस्तुनुं स्वरूप तत्त्व कहियें जेम कंचननुं स्वरूप पीत गुरु स्निग्धतादि तथा–एनुं कार्य आभरणादिक अने एहनुं फल ते एहथी अनेक भोग्यवस्तु आवे एम जीवनुं स्वरूप ज्ञान दर्शन चारित्रादि अनंतगुण तथा जीवनुं कार्य सर्वभावनुं जाणवुं प्रमुख ए रीतें अभेदपणें रह्या जे धर्म ते सर्व वस्तुनुं तत्त्व कहियें.

येन सर्वत्राविरोधेन यथार्थतया व्याप्यव्यापकभावेन लक्ष्यते वस्तुस्वरूपं तल्लक्षणं तत्र द्रव्यभेदा यथा जीवा अनंताः कार्यभेदेन भावभेदा भवन्ति क्षेत्रकाल भावभेदानामेकसमुदायित्वं द्रव्यत्वम्

अर्थ—हवे लक्षण कहे छे. जे गुणे करी सर्वद्रव्य स्वजातिमां अविरोधिपणे यथार्थपणे १ अतिव्याप्ति २ अव्याप्ति असंभवादि दोषरहित वस्तु जे व्याप्य तेहने विषे व्यापकपणे लखियें जाणियें तेने वस्तुनुं लक्षण कहियें. ते लक्षण बे प्रकारनुं छे एक लिंग बाह्यआकाररूप अने बीजुं वस्तुमां रह्यो जे स्वरूप ते. ए बे भेद छे तेमां लिंगथी तो गायनुं लक्षण जे सास्नासहितपणो ते बाह्यआकाररूप लक्षण छे ए बाह्य लक्षणे जे ओलखाण करे ते बालचाल छे अने जे वस्तुने धर्में ओलखाय ते स्वरूपलक्षण कहियें, जेम चेतनालक्षण ते जीव, तथा चेतनारहित ते अजीव इत्यादिक लक्षणें

लक्षणस्वरूप जाणवो एम अनेक रीतें जाणी लेवो. भेदाश्च हवे भेदनुं स्वरूप कहे छे. वक्तव्यवस्त्वंशाः के० जे वस्तु कथन करता होय तेहना चार भेद छे तत्र द्रव्यभेदाके० तिहां द्रव्यना भेद मूललक्षणे सरिखा पण पिंडपणे जूदा छे ते द्रव्यथी भेद कहियें. यथाके० जेम सर्वजीव जीवत्वसामान्ये सरिखा छे पण जीव जीव प्रते पोताना गुणपर्यायनो पिंडपणो जूदो छे कोइनुं कोइमां भिलि जातो नथी ते माटे जीव अनंता द्रव्यभिन्नपणे तेमज अजीव अनंता द्रव्यभिन्न-पणे एम पुद्गलपरमाणु पण जडतारूपपणे सरिखा पण सर्व परमाणुओ जूदा द्रव्य छे जे कालें पूछियें ते काले एटलाने एटला छे कोइ कालें घटे नही तेम नवो वधे नही ए सर्व द्रव्यथी भेद जाणवो.

हवे क्षेत्रांशः क्षेत्रथी भेद ते जे विस्तरे तो जूदो क्षेत्र अवगाहीने रहे जेम जीवादि द्रव्यना प्रदेश अवगाहनाधर्मे जूदा छे पण द्रव्यथी जूदा पडे नही, संलग्नपणे रहे गुणपर्याय सर्व प्रदेशे अनंता छे ते गुणपर्याय एक प्रदेश मूकी बीजा प्रदेशमां जाय नही, पर्यायविभागएकनो अने प्रदेशनो अवगाह सरिखो छे पण ते पर्याय अनंता भिन्न छे अने जे अनंता पर्याय मलीने एक कार्य करे ते कार्यने गुण कहे छे. श्रीवीतराग सर्वज्ञ एम कहे छे ए क्षेत्रथी भेद छे.

एकवस्तुमां उत्पादव्ययरूप पर्याय पलटवानुं मान ते समय कहियें. जेटलो उत्पाद व्यय तथा, अगुरुलघुनी हानिवृ-द्धिने परिणमतानुं मान ते समय कहियें अने तेथी बीजी परिणमनता थइ ते बीजो समय एम जे अनंति अतीतप्रवृत्ति थइ ते वर्त्तमानप्रवृत्तिनी परंपरारूप जाणवी अने आगामिक थाशे ते कार्यरूपें योग्यतारूप जाणवी. अतीतकालनो तथा अनागत कालनो कोइ ढिगलो नथी अने पिंडरूप पंचास्तिकायनुं वर्तनारूप जे परिणमन तेनुं मान ते काल कहियें तेने

समयभेद ते त्रिजो कालरूप भेद कहियें ते जे पर्याय भिन्न भिन्न कार्य करे ते कार्यभेदें भिन्नपणो छे ते माटे चोथो भावथी भेद कहियें. हवे द्रव्यनुं लक्षण कहे छे ते क्षेत्रकाल अने भावना जे भेद ते सर्वनुं एकठा मिलिने पिंडपणे एकाधारपणे समुदायीपणे रहेवुं ते द्रव्यकहियें.

तत्रैकस्मिन् द्रव्ये प्रतिप्रदेशे स्वस्वएककार्यकरणसामर्थ्यरूपा अनन्ता अविभागरूपपर्यायास्तेषां समुदायो–गुणः । भिन्नकार्यकरणे सामर्थ्यरूपभिन्नगुणस्य पर्यायाः एवं गुणा अप्यनन्ताः प्रतिगुणं प्रतिदेशं पर्याया अविभागरूपाः अनन्तास्तुल्याः प्राय इति ते चास्तिरूपाः प्रतिवस्तुन्यनन्तास्ततोऽनन्तगुणाः सामर्थ्यपर्यायाः ॥

अर्थ—हवे गुणनुं लक्षण कहे छे तिहां गुणानामाश्रयोद्रव्यमिति वचनात् एकद्रव्यने विषे स्वस्वके० पोतापोतानो एक जाणवा प्रमुख कार्य करवानुं जेने सामर्थ्य छे एवा अनंता सूक्ष्म जेनो अविभागके० बीजो छेद न थाय एवा विभागनो जे समुदाय तेने गुण कहियें जेम एक दोरडो सो तांतणानो कह्यो ते सो तांतणा तो अविभागपणे छता पर्याय छे ते दोरडाथी अनेक कार्य थाय, अनेक वस्तु बंधाय, अने अनेकने आधार थाय अनेक वेटण थाय तेने सामर्थ्य पर्याय कहियें. छतिरूपजे पर्याय ते तो वस्तुरूप छे अने सामर्थ्यपर्याय तो प्रवर्त्तनरूप कार्यरूप छे ते छतिपर्यायनो समुदाय तेने गुण कहियें. छतिपर्यायना अविभाग ते योगस्थान समयस्थानमां कह्योज छे अने भिन्नके० जुदो कार्य करवानुं जेमां

सामर्थ्य होय एवा अविभागरूप आत्मा प्रदेशें वर्तता पर्याय ते भिन्नके० जुदा गुणना पर्याय जाणवा जेम जे अविभाग परिणामालंबनरूप कार्य सामर्थ्यरूप तेनो समुदाय ते वीर्यगुण एमज जाणवारूप सामर्थ्य छे जेमां एहवा छे अविभागपर्याय छे तेनो समुदाय ते ज्ञानगुण तेवा गुण एकद्रव्यने विषे अनंता छे. ते एकगुणना प्रदेशें प्रदेशे पर्याय अविभागरूप अनंता छे अने सर्व प्रदेशे सरिखा छे. तथा पंचास्तिकाय मध्ये एक अगुरुलघु पर्यायनो भेद तरतम छे. तथा पुद्गलपरमाणुमध्ये कालभेदें अथवा द्रव्यभेदें वर्णादिकना पर्यायनो तरतमयोग ते थोडा घणापणो छे ते पर्यायअस्तिरूप छे. सदा छता छे. कोइ पर्याय द्रव्यांतरमां जातो नथी. प्रदेशांतरमां पण जातो नथी. ते छतिपर्यायथी सामर्थ्यपर्याय अनंतगुणा जाणवा, ते कार्यरूप छे. यथा च महाभाष्ये यावन्तो ज्ञेयास्तावन्त एव ज्ञानपर्यायाः ते च अस्तिरूपाः प्रतिवस्तुनि अनन्तास्ततोप्यनन्तगुणाः सामर्थ्यपर्यायाः

तत्र द्रव्यलक्षणं–उत्पादव्ययध्रुवयुक्तं सल्लक्षणं द्रव्यं एतद् द्रव्यास्तिकपर्यायास्तिकोभयनयापेक्षया लक्षणं । गुणपर्यायवद् द्रव्यं एतत् पर्यायनयापेक्षया, अर्थक्रियाकारि द्रव्यं एतल्लक्षणं स्वस्वशक्तिधर्मापेक्षया । धर्मास्तिकाय–अधर्मास्तिकाय–आकाशास्तिकाय–पुद्गलास्तिकाय–जीवास्तिकाय–कालश्चेति ।

अर्थ–हवे वली द्रव्यनुं मुख्यलक्षण कहे छे उत्पाद के० नवा पर्यायनुं उपजवुं व्यय के० नवा पर्यायनुं विणसवुं अने

ध्रुव के० नित्यपणो ए तीन परिणमनपणें सर्वदा जे परिणमे तेने द्रव्य कहियें. एटले तेहिज गुण कारणकार्य बे धर्म सम-कालें परिणमे छे. कारण विना कार्य थायज नही अने कार्य करे नही ते कारण पण समजवुं नहीं, जे उपादानकारण तेहिज कार्य थाय छे ते कारणतानो व्यय अने कार्यतानुं उपजवुं समकालें थाय छे वली कारणपणो समये नवो नवो छे अने कार्यपणो पण समयें समयें नवो नवो छे ते माटे कारणपणानो पण उत्पाद व्यय छे अने कार्यपणानो पण उत्पाद व्यय छे अने गुणपिंडपणें द्रव्यधारणपणे ध्रुव छे एवी परिणतियें परिणमे ते सत् के० छतिवंत द्रव्य जाणवो एटले ए लक्षण ते द्रव्यास्तिकनय तथा पर्यायास्तिकनय ए बे मेला लइने कह्यो छे. जे ध्रुवपणो ते द्रव्यास्तिकधर्म ग्रह्यो छे अने उत्पाद व्यय ते पर्यायास्तिकधर्म ग्रह्यो छे ते माटे ए लक्षण संपूर्ण छे, ए तत्त्वार्थकारकनुं वाक्य छे.

तथा वली बीजुं लक्षण तत्त्वार्थमांज कह्युं छे. एक द्रव्यमां वद्धामां स्वकार्यगुणे वर्त्तमान ते गुण अने पर्याय ते गुणनुं कारणभूत द्रव्यनुं भिन्न भिन्न कार्यपणे परिणमे द्रव्यगुण ए बेहुने स्वाश्रयीपणे परिणमन ते बे छे जेमां ते द्रव्य कहियें एटले गुण तथा पर्यायवंत ते द्रव्य कहियें ते द्रव्य एकना बे खंड थायज नही ए मूल द्रव्यनुं लक्षण छे अने जे घणा परमाणुना खंधने द्रव्य मान्यो छे ते उपचारें जाणवो जेनी परिणति त्रण कालमध्ये ते रूपने त्यजे नही ते द्रव्य पोतानी मूल जात त्यजे नही जेने अगुरुलघुनुं षड्गुण हानिवृद्धिरूप लक्षण चक्र एकठो फिरे ते एक द्रव्य अने *जेने जूदो फिरे ते भिन्न द्रव्य कहियें एटले धर्म, अधर्म, आकाश ए एक एक द्रव्य छे अने जीव असंख्यातप्रदेशरूप* एक अखंड द्रव्य छे. एवा जीव सर्वलोकमध्ये अनंता छे ते जीव सिद्धमां वधे छे अने संसारीपणामां ओछा थाय छे

पण सर्वसंख्यामां घटता वधता नथी. तथा पुद्गल परमाणु एक आकाशप्रदेश प्रमाण एक द्रव्य छे तेवा परमाणु सर्व जीवथी तथा सर्वजीवना प्रदेशथी पण अनंतगुणा द्रव्य छे. स्कंधपणे अथवा छुटा परमाणुपणे वधे तथा घटी जाय पण परमाणुपुद्गलपणे जे संख्या छे तेमां वधता घटता नथी ए निश्चयनयथी लक्षण कह्युं.

हवे व्यवहार नयथी लक्षण कहे छे अर्थ जे द्रव्य तेनी जे क्रियाके० प्रवृत्ति तेने करे ते द्रव्य कहियें. तेमां जीवनी शुद्ध क्रिया ते ज्ञानादिक गुणनी प्रवृत्ति जेम सकल ज्ञेय जाणवा माटे ज्ञानविभागनी प्रवृत्ति एम सर्व गुणनुं जे कार्य जेम ज्ञानगुणनुं कार्य विशेष धर्मनुं जाणवुं. तथा दर्शनगुणनुं कार्य सकलसामान्यस्वभावनो बोध अने चारित्रगुणनुं कार्य ते स्वरूपनुं रमवुं इत्यादि अने धर्मास्तिकायनुं कार्य गतिगुणे परिणम्या जे जीव तथा पुद्गल तेने चालवाने सहकारी थाय एम सर्व द्रव्यनी समजण जोइ लेवी. ए लक्षण सर्व द्रव्यना जे गुण छे ते सर्वना स्वकार्यानुयायी प्रवृत्ति तेने अर्थक्रिया कहेवी. हवे ते छ द्रव्य कहे छे १ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ४ पुद्गलास्तिकाय, ५ जीवास्तिकाय, ६ काल. ए छ द्रव्य जाणवा. एथी वधारे पदार्थ कोइ नथी. जे नैयायिकादिक सोल पदार्थ कहे छे ते मृषा छे, कारणके ते प्रमाणने भिन्नपदार्थ कहे छे ते तो ज्ञान छे ते आत्माना प्रमेयनो गुण छे ते गुणी जे आत्मा ते मध्ये रह्यो छे तेने भिन्न पदार्थ केम कहियें? बीजा प्रयोजन सिद्धान्तादिक ते सर्व जीव द्रव्यनी प्रवृत्ति छे ते माटे भिन्न पदार्थ कहेवाय नही.

तथा वैशेषिक १ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष, ६ समवाय, ७ अभाव. ए सात पदार्थ कहे छे पण

तेने कहियें जे गुण तेतो द्रव्यमांज रह्या छे तो तेने भिन्नपदार्थ करी कहेवुं ते केम घटे? अने कर्म ते द्रव्यनुं कार्य छे तथा सामान्य अने विशेष ए बेतो द्रव्य मध्ये परिणमन छे वली समवाय ते कारणतारूप द्रव्यनुं प्रवर्त्तन छे अने अभाव तो अछताने कहेवाय ते अछताने पदार्थ कहेवुं घटतुं नथी ते माटे वैशेषिकमत पण मृषा छे ते मध्ये द्रव्य नव कहेछे. १ पृथ्वी, २ अप्, ३ तेज, ४ वायु, ५ आकाश, ६ काल ७ दिक्, ८ आत्मा, ९ मन. ए नव पदार्थ कहे छे तेने उत्तर जे पृथ्वी अप् तेज वायु ए तो आत्मा छे पण कर्म योगें शरीर भेदें नाम पड्या छे अने दिशि तो आकाशमांज मिली गयी छे तथा मन ते आत्माने संसारीपणाना उपयोग प्रवर्तनानो द्वार छे तेने भिन्न द्रव्य केम कहियें?

वली वेदांतिकसांख्य ते एक आत्मा अद्वैतपणे एकज द्रव्य माने छे तेनी पण भूल छे केमके जे शरीर छे ते तो रूपी छे अने पुद्गल द्रव्यनां खंध छे ते केम एक थाय तथा आत्मा अने शरीरनो आधार ते आकाश छे ते सर्व प्रसिद्ध छे ते जूदो मान्या विना केम चाले ते माटे अद्वैतपणो रह्यो नही.

अने बौद्धदर्शन ते समयसमय नवानवापणे १ आकाश, २ काल, ३ जीव, ४ पुद्गल. ए चार द्रव्य माने छे तेने पुछीयें जे जीव पुद्गल एकज क्षेत्रें केम रेहेता नथी ते तो चलादि भाव पामे छे माटे तेना अपेक्षाकारणरूप १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्य पण मानवा जोइयें. तथा केटलाक संसारस्थितिनो कर्त्ता एक परमेश्वरने माने छे, ते पण मृषा छे. जे निर्मल रागद्वेषरहित एवो परमेश्वर ते परना सुखदुःखनो कर्त्ता केम थाय. वली कोइक इच्छा वलगाडे छे, ते इच्छा तो अधूराने छे, पूराने केम होय? तथा केटलाक परमेश्वरनी लीला कहे छे ते लीला तो अजाण अधूरो

तथा जेने पोतानो आनंद पोता पासे न होय ते करे, पण जे संपूर्ण चिदानंदघन तेने लीला होयज नही. धर्माधर्मौ विना मार्गं, विनांगेन सुखं कुतः ॥ मुखं विना न वक्तृत्वं तच्छास्तारः परे कथं १ अने मीमांसादिक पांच भूत कहे छे. तेमां पण चार भूत तो जीवपुद्गलना संबंधे उपना छे, अने आकाश ते लोकालोक भिन्न द्रव्य छे.

तत्र पञ्चानां प्रदेशपिंडत्वात् अस्तिकायत्वं । कालस्य प्रदेशाभावात् अस्तिकायता नास्ति, तत्र काल उपचारत एव द्रव्यं न वस्तुवृत्त्या ॥

ए रीते असत्यपणानुं निराकरण करी आगमनी साखे कार्यादिकने अनुमाने द्रव्य छ ठहरे छे, माटे तेहिज मानवा तेमां पांच द्रव्य सप्रदेशी छे, ते प्रदेशना पिंडपणा माटे अस्तिकायपणो पांच द्रव्यने छे. अने छठो कालद्रव्य तेने प्रदेश नथी ते माटे अस्तिकायता नथी तिहां काल ते मुख्यवृत्तियें द्रव्य नथी, उपचारथी द्रव्य कहेवाय छे. जेम वस्तुगते धर्मास्तिकायादिक द्रव्य छे तेम काल द्रव्य नथी. जो ए कालने पिंडरूप द्रव्य मानियें तो एनो मान किहां छे ? जो मनुष्यक्षेत्रमां काल द्रव्य मानियें तो बाहिरना क्षेत्रमां नवपुराणादिक तथा उत्पाद व्यय कोण करे छे ? अने जो चौद-राजलोकमां व्यापी मानीयें, तो असंख्यात प्रदेश मानवा जोइयें; अने प्रदेश मानवे करी अस्तिकाय थाय, अने जो रेणुक असंख्याता मानियें, तो लोकप्रदेश प्रमाण रेणुक थाय ते वारें असंख्याता काल द्रव्य थाय. ते तो अनंत द्रव्य मान्यो छे माटे ए कालने पंचास्तिकायना वर्त्तनारूप पर्यायने आरोपे द्रव्य मानियें. केमके अस्तिकायता नथी. अने

सर्वमां वर्त्तना करे ए पक्ष सत्य छे जे आगमने विषे ठाणांगसूत्रना आलावामां छे. किं भंते अद्धासमयेतिवुच्चति? गोयमा जीवा चेव अजीवा चेव एटले काल ते जीव तथा अजीवनो वर्त्तमानपर्याय छे तेना उत्पाद व्ययरूप वर्त्तनाने काल कह्यो छे ते कालने अजीव द्रव्यमां गण्यो तेनो आशय ए छे जे जीव वर्त्तनाथी अजीववर्त्तना अनंतगुणी छे ते बहुलता माटे कालने अजीव गवेष्यो छे केमके कालनी वर्त्तना अजीव ऊपर अनंति छे अने जीव ऊपर तेथी थोडी छे माटे.

तथा विशेषावश्यकभाष्यमध्ये न पश्यति क्षेत्रकालावसौ तयोरमूर्त्तत्वात्, अवधेश्च मूर्त्तिविषयकत्वात्; वर्त्तनारूपं तु कालं पश्यति द्रव्यपर्यायत्वात्तस्येति तथा बावीसहजारीमध्ये तथा कालस्य वर्त्तनादिरूपत्वात् पर्यायत्वात्, द्रव्योपक्रमः उपचारात् तथा भगवत्यंगे १३ तेरमा शतक मध्ये इहां पुद्गलवर्त्तनानी अपेक्षायें कालने रूपी गवेष्यो छे.

तत्र गतिपरिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टंभहेतुर्धर्मास्तिकायः,स चासंख्येयप्रदेशलोकप्रदेशपरिमाणः।

अर्थ—हवे पंचास्तिकायनुं भिन्न भिन्न लक्षण कहे छे, जे गति परिणामीपणे परिणम्या जीव तथा पुद्गल तेने गतिना ओठंभानो हेतु ते धर्मास्तिकाय द्रव्य कहियें. ते धर्मास्तिकाय असंख्याता प्रदेश परिमाण छे. लोकमां व्यापी छे, लोकमान छे, लोकना एक एक प्रदेशे धर्मास्तिकायनो एक एक प्रदेश ते अनंत संबंधीपणे छे ए धर्मादि त्रण द्रव्य अचल अवस्थित अक्रिय छे.

स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः अधर्मास्तिकायः, स चासंख्येयप्रदेशलोकपरिमाणः।

अर्थ—स्थितिपणे परिणम्या जे जीव तथा पुद्गल तेने स्थितिना ओठंभानो हेतु ते अधर्मास्तिकाय द्रव्य कहियें ते पण लोक परिमाण असंख्य प्रदेशी छे.

सर्वद्रव्याणां आधारभूतः अवगाहकस्वभावानां जीवपुद्गलानां अवगाहोपष्टंभकः आकाशास्तिकायः, स चानन्तप्रदेशः लोकालोकपरिमाणः। यत्र जीवादयो वर्त्तन्ते स लोकः असंख्यप्रदेशप्रमाणः, ततः परमलोकः केवलाकाशप्रदेशव्यूहरूपः स चानन्तप्रदेशप्रमाणः।

अर्थ—सर्व द्रव्यने आधारभूत अवगाह स्वभावी जे जीव तथा पुद्गलने अवगाहनानो ओठंभानो हेतु ते आकाशास्तिकाय द्रव्य कहियें. तेना प्रदेश अनंता छे. लोक तथा अलोक रूप छे तेमां जे क्षेत्रे जीव तथा पुद्गल तथा धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय छे ते क्षेत्रने लोक कहियें अने केवल एक लोक मात्र आकाशज जिहां छे तेने अलोक कहियें एटले जे लोक ते जीवादि द्रव्य सहित अने जीवादिक द्रव्य जिहां नथी तेने अलोक कहियें ते, अलोकना प्रदेश अनंता छे, अवगाहक धर्मे सर्व द्रव्य एमां समाय छे.

कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः॥ एकरसवर्णगन्धो द्विस्पर्शः कार्यलिंगी च॥

पूरणगलनस्वभावः पुद्गलास्तिकायः स च परमाणुरूपः। ते च लोके अनन्ताः एकरूपाः परमा-

णवः अनन्ताः ह्यणुका अप्यनन्ताः त्र्यणुका अप्यनन्ताः एवं संख्याताणुका स्कंधा अप्यनन्ताः असंख्याताणुकस्कंधा अप्यनन्ताः एकैकस्मिन् आकाशप्रदेशे एवं सर्वलोकेऽपि ज्ञेयं एवं चत्वारोऽस्तिकायाः अचेतनाः ।

अर्थ---हवे पुद्गल द्रव्यनुं स्वरूप कहियें छैयें. जे पूरण के० पूरायें वर्णादिगुणे वधे, गली जाय, खरि जाय, वर्णादि गुण घटि जाय एवो जेमां स्वभाव छे ते पुद्गलास्तिकाय कहियें ते मूल द्रव्य परमाणुरूप छे ते परमाणुनुं लक्षण कहे छे. ह्यणुकादिक जेटला स्कंध छे ते सर्वनुं अंत्यं के० मूल कारण परमाणु छे एटले सर्व स्कंधनुं परमाणु कारण छे पण परमाणुनुं कारण कोइ नथी, कोइनुं नीपजाव्यो थयो नथी अने कोइने मिलवे पण थयो नथी. सूक्ष्म छे. एक आकाशप्रदेशनी अवगाहना तुल्य एक परमाणु छे तो पण ते एक आकाश प्रदेशमां अनंत परमाणु समाय छे पण परमाणु मध्ये बीजुं द्रव्य कोइ समाय नही माटे परमाणु द्रव्य सूक्ष्म छे अने नित्य छे जेटलुं परमाणु द्रव्य छे ते खंधादिक अनेकपणे परिणमे पण परमाणु द्रव्य कोइ विणसी जाय नही एवुं परमाणु द्रव्य छे. ते एक परमाणुमां एक रस होय, एक वर्ण होय, एक गंध होय अने लुखो, चिकणो, टाढो, उन्हो, ए चार स्पर्श मांहेला गमे ते बे फरस होय एवुं एक परमाणु द्रव्य छे. इहां कोइ पुछे जे ते परमाणु देखातो नथी तो केवी रीते मनाय तेने उत्तर जे घटपट शरीरादिक कार्य देखाय छे, ग्रहवाय छे, ते रूपी छे तो एहना संबंधनुं कारण परमाणु सूक्ष्म छे माटे इंद्रियज्ञाने ग्रहेवातो नथी, परंतु रूपी छे

केमके अरूपीथी रूपी कार्य थाय नहीं ते माटेज परमाणु रूपी छे. तथा ए स्कंध पण रूपी थया छे अने आकाश प्रदेश अरूपी छे तो तेनो अनंत प्रदेशी स्कंध पण अरूपी छे एम धारवुं ते परमाणुना द्व्यणुकादिक स्कंध अनंता छे, तथा छुटा परमाणु ते पण अनंता छे ते वली खंधमां मिले छे तो बीजा खंधमांहेथी छुटा थाय छे एम खंध विखरी जाय ने परमाणु थाय तेनी वर्गणा अठ्यावीस प्रकारनी छे. ते अठ्यावीस भेद कम्मपयडीथी जाणवा. एम एकला परमाणु ते पण अनंता तथा बे मिलीने खंध पाम्या तेवा खंध पण अनंता एमज संख्याताणुकना खंध पण अनंता तेमज असंख्यात परमाणु मिलि खंध थाय ते पण अनंता तथा अनंत परमाणु मल्या खंध थाय तेवा खंध पण अनंता ते ए जातिना खंध ते एक आकाश प्रदेश अवगाहे. आकाशांश अवगाहे एम असंख्याता प्रदेश अवगाहे छे पण एक वर्गणानी अवगाहना अंगुलने असंख्यातमें भागे अवगाहे वधति अवगाहे नही अने अनंति वर्गणा मिले अंगुल हाथ गाउ योजनादिकने माने अवगाहना थाय एम ए १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ पुद्गलस्तिकाय ए चारे द्रव्य अचेतन छे अजीव छे जाणपणा रहित छे.

चेतनालक्षणो जीवः, चेतना च ज्ञानदर्शनोपयोगी अनन्तपर्यायपरिणामिककर्तृत्वभोक्तृत्वादिलक्षणो जीवास्तिकायः ।

अर्थ—हवे जीव द्रव्यनुं स्वरूप कहे छे चेतना जे बोधशक्ति छे लक्षण जेनुं ते जीव कहियें. जे पोताना परिणमन

तथा परनी परिणमन सर्वने जाणे ते जीव तथा सर्व द्रव्य ते अनंता सामान्यस्वभाव अने अनंता विशेषस्वभाववंत छे तेमां सर्व द्रव्यना अनंता विशेषधर्मनुं अवबोधक ते ज्ञानगुण कहियें, तथा सामान्य विशेष स्वभाववंतवस्तुने विषें जे सामान्यस्वभावनुं अवबोधक ते दर्शन गुण कहियें. ते ज्ञानदर्शनोपयोगी जे अनंतधर्मात्म तेनो परिणामी कर्त्ता भोक्तादिक अनंति शक्तिनुं पात्र ते जीव जाणवो. उक्तं च "नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥ वीरियं उवओगो अ, एवं जीवस्स लक्खणं ॥ १ ॥

चेतना लक्षण ज्ञानदर्शन चारित्र सुखवीर्यादिक अनंत गुणनुं पात्र स्वस्वरूपभोगी तथा अनवच्छिन्न जे स्वावस्था प्रगटी तेनो भोक्ता अनंता स्वगुणनी जे स्वस्वकार्यशक्ति तेनो कर्त्ता, भोक्ता, परभावनो अकर्त्ता, अभोक्ता, स्वक्षेत्रव्यापी अनंति आत्मसत्तानो ग्राहक, व्यापक, रमण करनारो, तेने जीव जाणवो.

पञ्चास्तिकायानां परत्वापरत्वे नवपुराणादिलिङ्गव्यक्तवृत्तिवर्त्तनारूपपर्यायः कालः, अस्य चाप्रदेशिकत्वेन अस्तिकायत्वाभावः । पञ्चास्तिकायान्तर्भूतपर्यायरूपतैवास्य एते पञ्चास्तिकायाः । तत्र धर्माधर्मौ लोकप्रमाणासंख्येयप्रदेशिकौ, लोकप्रमाणप्रदेश एव एकजीवः । एते जीवा अप्यनन्ताः, आकाशो हि अनन्तप्रदेशप्रमाणः, पुद्गलपरमाणुः स्वयं एकोऽप्यनेकप्रदेशबंधहेतुभूतद्रव्ययुक्तत्वात् अस्तिकायः, कालस्य उपचारेण भिन्नद्रव्यता उक्ता सा च व्यवहारनयापेक्षया

आदित्यगतिपरिच्छेदपरिमाणः कालः समयक्षेत्रे एव एष व्यवहारकालः समयावलिकादिरूप इति ॥

अर्थ—हवे काल द्रव्यनुं लक्षण कहे छे जे पंचास्तिकायने परत्वे ए लिंगे तथा पुद्गल संधने नव पुराणपणे व्यक्त के० प्रगट छे वृत्ति के० प्रवृत्ति तेने वर्तना कहियें ते वर्त्तनारूप पर्याय तेने काल कहिये एने प्रदेश नथी ते माटे अस्तिकायपणो नथी ए काल ते पंचास्तिकायने विषे अंतर्भूतपर्याय परिणमन छे, जाते धर्मास्तिकायादिकनो पर्याय छे एम तत्त्वार्थवृत्तिने विषे कह्यो छे. तिहां धर्मास्तिकाय एक द्रव्य छे असंख्यात प्रदेशी छे. लोकाकाशना प्रदेश प्रमाण छे. एम अधर्मास्तिकाय पण एक द्रव्य छे. लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेशी छे. अनेक जीव द्रव्य ते पण लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेशी छे पण स्व अवगाहना प्रमाण व्यापक छे ते जीव द्रव्य अनंता छे. अकृत सदा छता अखंड द्रव्य छे. सत्चिदानंदमयी छे पण परपरिणामी थवे पुद्गलग्राहक पुद्गलभोगी थवे प्रतिसमये नवा कर्म बांधवे संसारी थया छे. तेहिज जेवारें स्वरूप ग्राहक स्वरूप भोगी थाय तेवारें सर्व कर्म रहित थयी परम ज्ञानमयी, परम दर्शनमयी, परमानंदमयी, सिद्ध, बुद्ध, अनाहारी, अशरीरी, अयोगी, अलेशी, अनाकारी, एकांतिक, आत्यंतिक, निःप्र यासी, अविनाशी, स्वरूप सुखनो भोगी, शुद्ध सिद्ध थाय ते माटे अहो चेतन !!! ए पर भाव अभोग्य सर्व जगत्ना जीवनी एंठ तेनो भोगववापणो तजी स्वभाव भोगीपणानो रसीयो थयी स्वस्वरूप निर्धार स्वरूप भासन, स्वरूप रमणी, थयी पोताना आनंदने प्रगट करीनें निर्मल थाउं.

तथा आकाश द्रव्य ते लोकालोक मिलि एक द्रव्य छे, अनंत प्रदेशी छे। अने पुद्गल द्रव्य ते परमाणु रूप छे केम

के परमाणु अनंता छे माटे अनंता द्रव्य छे इहां कोइ पूछे जे प्रदेशना संबंध विना परमाणु द्रव्यने अस्तिकाय किम कह्यो छे? तेने उत्तर जे परमाणु तो एक अप्रदेशी छे पण अनंता परमाणुथी मिलवाना जे कारण ते आ द्रव्य तेणे युक्त छे ते योग्यता माटे अस्तिकाय कह्यो छे तथा काल द्रव्यने उपचारें भिन्न द्रव्यपणो कह्यो छे ते व्यवहारनयनी अपेक्षायें जे मनुष्य क्षेत्रने विषे सूर्यनी गतिने परिज्ञाने एटले समयावलिकादिरूपपरिमाणे जे मान तेने व्यवहारथी काल कहियें इति ए काल मुख्य वृत्तियें तो समय क्षेत्र मध्ये छे अने मनुष्य क्षेत्रथी बाहेर जे जीवो छे तेना आयुष्य पण एज क्षेत्र प्रमाणे सर्वज्ञ देवें कह्या छे तथा सूर्यनोचारते पण जीव पुद्गलनुं प्रवर्तन छे कारण के सूर्य ते पण जीव तथा पुद्गल छे एटले ए काल द्रव्य ते कालपणे भिन्न पिंडपणे ठेरुयो नही उपचारेंज ठेरुयो एम मानवो.

इहां कोइ कहे जे एक एक द्रव्यने विषे अनेक अनेक पर्याय छे ते कोइ पर्यायने द्रव्यपणो न कह्यो अने एक वर्त्तना पर्यायने विषे द्रव्यनो आरोप शा माटे कर्यो ? तेने उत्तर ए वर्त्तना परिणति ते सर्व पर्यायने सहकारी छे अने सर्व द्रव्यने छे तेथी मुख्य पर्याय छे माटे एने द्रव्यनो आरोप छे ते पण अनादि चाल छे.

एते पञ्चास्तिकायाः सामान्यविशेषधर्ममया एव, तत्र सामान्यतः स्वभावलक्षणं द्रव्यव्याप्य-गुणपर्यायव्यापकत्वेन परिणामिलक्षणं स्वभावः, तत्र एकं नित्यं निरवयवं अक्रियं सर्वगतं च सामान्यं । नित्यानित्यनिरवयवसावयवः सक्रियताहेतुः देशगतः सर्वगतं च विशेषपदार्थगुण-

प्रवृत्तिकारणं विशेषः । न सामान्यं विशेषरहितं न विशेषः सामान्यरहितः ॥

अर्थ—हवे ए पंचास्तिकाय ते सामान्य विशेष धर्ममयी छे ते सामान्यनुं लक्षण विशेषावश्यकें कह्युं छे तिहां प्रथमथी स्वभावनुं लक्षण कहे छे. जे द्रव्यने विषे व्यापतो होय तथा गुण पर्यायमां पण व्यापकपणे सदा परिणमतो थको पामियें तेने सामान्य स्वभाव कहियें ते समान्य स्वभावजे होय ते एक होय तथा नित्य अविनाशी होय तथा निरवयव के० जेहने अविभाग रूप अवयव न होय अने सर्व गत के० सर्वमां व्यापकपणे होय ते सामान्य स्वभाव कहियें. जीवादि द्रव्यने विषे एकपणो ते पिंडपणे छे ते सर्व द्रव्यने विषे छे सर्व गुण पर्याय पोतानें रूपें अनेक छे पण ते समुदाय पिंडपणुं मूकीने जूदा थायज नही ते माटे ए रीतें जे परिणमन होय ते सामान्य स्वभाव कहियें सामान्यना बे भेद छे अस्तितादिक जे सर्वपदार्थने विषे छे ते महा सामान्य कहियें. एनी श्रुतज्ञानेकरी प्रतीत थाय पण प्रत्यक्ष तो अवधि-दर्शन केवलदर्शनेज जणाय. परोक्षें न ग्रहवाय. तथा वृक्ष अंबनिंब जंबु प्रमुख व्यक्ति अनेक छे पण वृक्षत्व सर्वमां छे ए अवांतर सामान्य ते चक्षुदर्शने तथा अचक्षुदर्शने ग्रहवाय अने अस्तित्व वस्तुत्वादि सामान्य ते अवधिदर्शने तथा केवलदर्शने ग्रहवाय अने विशेष धर्म ते ज्ञान गुणेज ग्रहवाय हवे विशेषनुं लक्षण कहियें छीए. कोइक धर्में नित्य कोइक धर्में अनित्य कोइक रीतें अवयव सहित, कोइक रीतें अवयव रहित, अविभाग पर्यायें सावयव, सामर्थ्य पर्यायें निरवयव, पण सक्रियता हेतु देशगत जे गुण ते गुणांतरमां व्यापता नथी ते माटे देशगत जे गुण होय ते आखा द्रव्यमां व्यापकज होय तेने सर्वगत कहियें तो एवा जे धर्म ते सर्व विशेष जाणवा पदार्थना गुणनी प्रवृत्ति तेना जे कारण ते

विशेष स्वभाव जे कार्य करे ते गुणने पण विशेष धर्मज गणवो. जे सामान्य ते विशेष रहित नथी अने जे विशेष ते सामान्य रहित नथी.

ते मूलसामान्यस्वभावाः षट् । ते चामी १ अस्तित्वं २ वस्तुत्वं ३ द्रव्यत्वं ४ प्रमेयत्वं ५ सत्त्वं ६ अगुरुलघुत्वं । तत्र १ नित्यत्वादीनां उत्तरसामान्यानां परिणामिकत्वादीनां निःशेष-स्वभावानामाधारभूतधर्मत्वं अस्तित्वं २ गुणपर्यायाधारत्वं वस्तुत्वं ३ अर्थक्रियाकारित्वं द्रव्यत्वं, अथवा उत्पादव्यययोर्मध्ये उत्पादपर्यायाणां जनकत्वप्रसवस्याविर्भाव लक्षणव्ययीभूतपर्या-याणां तिरोभाव्यभावरूपायाः शक्तेराधारत्वं द्रव्यत्वं ४ स्वपरव्यवसायिज्ञानं प्रमाणं, प्रमीयते अनेनेति प्रमाणं तेन प्रमाणेन प्रमातुं योग्यं प्रमेयं ज्ञानेन ज्ञायते तद्योग्यतात्वं प्रमेयत्वं ५ उत्पादव्ययध्रुवयुक्तं सत्वं ६ षड्गुणहानिवृद्धिस्वभावा अगुरुलघुपर्यायास्तदाधारत्वं अगुरुलघुत्वं एते षट्स्वभावाः सर्वद्रव्येषु परिणमंति तेन सामान्यस्वभावाः ॥

अर्थ—ते मूल सामान्यना छ भेद छे ते सर्व द्रव्यमां व्यापकपणे छे. १ अस्तित्व, २ वस्तुत्व, ३ द्रव्यत्व, ४ प्रमेयत्व ५ सत्त्व, ६ अगुरुलघुत्व. ए छ मूल स्वभाव छे ते सर्व द्रव्य मध्ये पारिणामिकपणे परिणमे छे ए धर्मने कोइनो सहाय

एक गुण ते अन्यगुणपणे न परिणमे, ज्ञानगुणने विषे दर्शनादिक गुणनी नास्तिता छे अने ज्ञानना धर्मनी अस्तिता छे, तथा एकगुणना पर्याय अनंता छे ते सर्व पर्यायधर्मे सरिखा छे पण एकपर्यायना धर्म बीजा पर्यायमां नही अने बीजा पर्यायना धर्म पहेला पर्यायमां नही माटे सर्व पोताने धर्मेंज अस्ति छे. ए रीतें अस्ति नास्तिनुं ज्ञान सर्वत्र करवुं, ए द्रव्यने विषे प्रथम अस्ति स्वभाव कह्यो.

अन्यजातीयद्रव्यादीनां स्वीयद्रव्यादिचतुष्टयतया व्यवस्थितानां विवक्षिते परद्रव्यादिके सर्वदैवाभावाविच्छिन्नानां अन्यधर्माणां व्यावृत्तिरूपो भावः नास्तिस्वभावः यथा जीवे स्वीयाः ज्ञानदर्शनादयो भावाः अस्तित्वे परद्रव्यस्थिताः अचेतनादयो भावा नास्तित्वे सा च नास्तिता द्रव्ये अस्तित्वेन वर्तते घटे घटधर्माणां अस्तित्वं पटादिसर्वपरद्रव्याणां नास्तित्वं एवं सर्वत्र ॥

अर्थ—हवे बीजा नास्ति स्वभावनुं स्वरूप लखियेंछैयें अन्य के० बीजा जे द्रव्यादिक जे द्रव्यगुणपर्याय तेना पोताना जे द्रव्य क्षेत्र काल भाव ते तेहिज द्रव्यमां सदा अवष्टंभपणे परिणमे छे, एटले विवक्षित द्रव्यादिकथी पर जे बीजा द्रव्यादिकना जे धर्म ते तेमां सदा अभावपणे निरंतर अविच्छेद छे, ते माटे परद्रव्यादिकना धर्मनी व्यावृत्तितापणानो जे परधर्म ते विवक्षित द्रव्यमां नथी एवा द्रव्यमां जे भाव छे ते नास्तिस्वभाव जाणवो. जेम जीवनेविषे ज्ञानदर्शनादिक

पोताना जे भाव तेतो अस्तिपणे छे, अने परद्रव्यमां रह्या जे अचेतनादिक भाव तेनी नास्तिता छे एटले ते धर्म जीव द्रव्यमां नथी माटे परधर्मनी नास्तिता छे, पण ते नास्तिता ते द्रव्यमध्ये अस्तिपणे रही छे जेम घटना धर्म घटमां छे तेथी घटमां घट धर्मनो अस्तित्वपणो छे पण पटादि सर्व परद्रव्योनो नास्तित्वपणो ते घटने विषे रह्यो छे तथा जीवमध्ये जीव ज्ञानादिक गुण ते अस्तित्वपणें छे, पण पुद्गलना वर्णादिक जीवमध्ये नथी. माटे वर्णादिकनी नास्ति ते जीवमध्ये रहि छे. श्रीभगवतीसूत्रे कह्युं छे, हे गौतम अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमति नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति तथा ठाणांगसूत्रे १ सियअत्थि, २ सियनत्थि, ३ सियअत्थिनत्थी, ४ सियअवत्तव्वं. ए चोभंगी कही छे, अने श्रीविशेषावश्यक मध्ये कह्युं छे के, जे वस्तुनो अस्ति नास्तिपणो जाणे ते सम्यग्ज्ञानी अने जे न जाणे अथवा अयथार्थपणे जाणे ते मिथ्यात्वी. उक्तं च सदसद विशेषणाओ, भवहेउजहथ्थिओवलंभाओ ॥ नाणफलाभावाओ मिच्छादिठिस्स अन्नाणं ॥१॥ ए गाथानी टीकामध्ये स्याद्वादोपलक्षितवस्तु स्याद्वादश्च सप्तभङ्गीपरिणामः एकैकस्मिन् द्रव्ये गुणे पर्याये च सप्तसप्तभङ्गा भवन्त्येव अतः अनन्तपर्यायपरिणते वस्तुनि अनन्ताः सप्तभंग्यो भवन्ति इति रत्नाकरावतारिकायां ते द्रव्यने विषे गुणने विषे पर्यायने विषे स्वरूपें सात भंगा होय जे ए सात भंगानो परिणाम ते स्याद्वादपणो कहियें.

तथाहि स्वपर्यायैः परपर्यायैरुभयपर्यायैः सद्भावेनासद्भावेनोभयेन वार्पितो विशेषतः कुंभः अकुंभः कुंभाकुंभो वा अवक्तव्योभयरूपादिभेदो भवति सप्तभंगी प्रतिपाद्यते इत्यर्थः ओष्ठग्रीवाक-

पोलकुक्षिबुध्नादिभिः स्वपर्यायैः सद्भावेनार्पितः विशेषतः कुंभः कुंभो भण्यते सन् घट इति प्रथमभंगो भवति एवं जीवः स्वपर्यायैः ज्ञानादिभिः अर्पितः सन् जीवः ॥

अर्थ—ए सप्तभंगी परनी अपेक्षायें नथी ते द्रव्यादिक मध्येज छे यथा स्वधर्मे परिणमवुं ते अस्तिधर्म छे अने पर द्रव्यना धर्मे न परिणमवुं ए नास्तिनुं फल छे, ते माटे ए सप्तभंगी ते वस्तुधर्मे छे, ते विशेषावश्यकथी सप्तभंगी लखियें छैयें. एक विवक्षित वस्तु स्व के० पोताने पर्यायें सद्भाव के० छतापणे छे अने परपर्यायें जे अन्यद्रव्यने परिणमे तेनो असद्भाव के० अछतापणो परिणमे छे तथा जे छता अथवा अछता पर्याय तेनो छतापणो छे. कोइकपणे अछतापणो छे माटे छता अछतापणो पण तेज कालें छे. केमके वस्तुमध्ये अनेकधर्म छे ते सर्व केवलीने एकसमयें समकालें भासे छे ते पण वचने भंगांतरेज कही शके अने छद्मस्थने श्रद्धामां तो सर्वधर्म समकाले सद्दहे छे पण छद्मस्थनो उपयोग असंख्यात समयी छे, अनुक्रमे छे. पूर्वापरसापेक्ष छे तेथी सप्तभंगे भासन छे जे वस्तुमां समकालें छे, समकीतिनी श्रद्धामां समकाले छे अने केवलीना भासनमां समकाले छे ते श्रुतज्ञानीना भासनमां क्रमपूर्वक छे. केमके भाषा सर्व क्रमे कहेवाय छे तेथी असत्य थाय तेने जो स्यात्पदेंप्ररूपियें जाणियें तो सत्य थाय माटे स्यात्पूर्वक सप्तभंगी कहियें. द्रव्य गुणपर्याय स्वभाव सर्व मध्ये छे तेरीतें सद्दहवी ते दृष्टांते करी कहे छे ओष्ठ के० होठ, गाबड कांठो, कपाल, तलो, कुक्षिपेटो, बुध्न पोहोलो इत्यादि स्वपर्यायें करी घट छतो छे, ते घटने स्वपर्यायें छतापणे अर्पित करियें तेवारें ते कुंभ कुंभ धर्मे सन् के०

छतो छे पण अछतादिक धर्मनी छति सापेक्ष राखवाने स्यात्पूर्वक कहेवो एटले स्यात्अस्तिघटः ए प्रथम भंगो जाणवो तथा जीवादिद्रव्यने विषे जीवना ज्ञानादिगुण तेने पर्यायें जीवद्रव्यने नित्यादिस्वभावें करीने स्यात्अस्तिजीवः एम सर्व द्रव्यने कहेवो. यद्यपि जीव तथा अजीवनो नित्यपणो सरिखो भासे पण ते एनो तेमां नही अने तेनो एमां नही जो पण जीव सर्व एकजातीय द्रव्य छे पण एकजीवमां जे ज्ञानादिगुण छे ते बीजा जीवमां नथी माटे सर्व द्रव्य स्वधर्मेंज अस्ति छे. अने परधर्मनास्ति छे एम स्यात् अस्तिजीव ए प्रथम भंग जाणवो.

तथा पटादिगतैस्त्वक्त्राणादिभिः परपर्यायैरसद्भावेनार्पितः अविशेषितः अकुंभो भवति सर्वस्यापि घटस्य परपर्यायैरसत्वविवक्षायामसन् घटः एवं जीवोऽपि मूर्त्तत्वादिपर्यायैः असत् जीव इति द्वितीयो भङ्गः ॥

अर्थ—पटने विषे रह्या त्वक् जे शरीरनी चामडीने ढांके, लांबो पथराय इत्यादि पर्याय ते घटना पर्याय नथी, पर पर्याय छे पटने विषे रह्या छे, घटनेविषे ए पर्यायनी नास्ति छे तेथी ए पर्यायनो असद्भाव छे ते माटे ए घटना पर्याय नथी. एम सर्व पर्यायें घट नथी तेवारें पर पर्यायना अछतापणानी विवक्षायें अछतो घट छे, एम जीव पण मूर्त्तिपणादिक अचेतनादि पर्यायनो जीवमध्ये असत्—अछतापणो तेथी जीव पर पर्याये नास्ति छे. माटे स्यात् नास्ति ए बीजो भांगो जाणवो. केमके परपर्यायनी नास्तितानुं परिणमन द्रव्यने विषे छे.

नथी तत्त के० तिहां १ सर्व द्रव्यने विषे उत्तरसामान्यस्वभाव नित्यत्व अनित्यत्वादिक तथा विशेषस्वभाव ते पारेणा-मिकत्वादिक तेनो आधारभूतधर्म ते धर्मने तीर्थंकरदेव सामान्यस्वभाव अस्तित्वरूप कहे छे २ तथा, गुणपर्यायनो अधारवंत पदार्थ तेने वस्तुत्व कहियें अने, ३ अर्थ जे द्रव्य तेनी जे क्रिया, जेम धर्मास्तिकायनी चलनसहाय क्रिया, अधर्मास्तिकायनी थिरसहाय क्रिया, आकाशद्रव्यनी अवगाहरूप क्रिया, जीवनी उपयोगलक्षण क्रिया तथा पुद्गलनी मिलवा विखरवारूप क्रियानो करवापणो एटले जे पर्यायनी प्रवृत्ति ते अर्थक्रिया अने अर्थ क्रियानो आधारी धर्म तेने श्री सर्वज्ञदेवें द्रव्यत्वपणो कह्यो छे.

वली द्रव्यपणानुं लक्षणांतर कहे छे. उत्पादपर्यायनी जे प्रसवशक्ति एटले आविर्भाव लक्षण जे शक्ति तेना व्ययीभूत पर्यायनो तिरोभाव थयो अथवा अभावथवारूप शक्तिनो जे आधारभूत धर्म तेने द्रव्यत्व कहियें.

४ स्व के० पोते आत्मा अने पर के० पुद्गलादिक धर्मास्तिकायादिक अन्य द्रव्य तेने यथार्थपणे जाणे ते ज्ञान कहियें. ते ज्ञान पांच भेदें छे. ते ज्ञानना उपयोगमां आवे एवी जे शक्ति तेने प्रमेयत्वपणो कहियें ते प्रमेयपणो सर्व द्रव्यनुं मूल धर्म छे. प्रमाणमां वसाव्यो जे वस्तु तेने प्रमेयपणो कहियें. ते सर्व गुण पर्याय प्रमेय छे अने आत्मानो ज्ञानगुण तेमां प्रमाणपणो तथा प्रमेयपणो ए बे धर्म छे, पोतानो प्रमाणपणो ते पोतेज करे छे, दर्शनगुणनो प्रमाण ज्ञानगुण करे छे, केमके ज्ञानगुण ते विशेष छे. जे सावयव होय ते विशेषज होय अने जे विशेष होय ते ज्ञानथीज जणाय. दर्शणगुण ते सामान्य धर्मनो ग्राहक छे ते पण प्रमाण कहेवाय पण प्रमाणना भेद कह्या छे. तिहां ज्ञानज ग्रह्युं छे तेनुं कारण जे

दर्शनोपयोग ते व्यक्त पडतो नथी ते माटे प्रमाण मध्ये गवेष्यो नथी. ते प्रमाणना मूल बे भेद छे एक प्रत्यक्ष अने बीजो परोक्ष. स्पष्टं प्रत्यक्षं परोक्षमन्यत् इति स्याद्वादरत्नाकरवाक्यात्.

५ उत्पाद के० उपजवो व्यय के० विणसवो ध्रुव के० नित्यपणो वस्तुना एक गुणमां एक समये ए त्रणे परिणमनें सदा परिणमे छे एवो जे परिणाम ते सत्पणो कहियें अने ते सत्पणानो भाव ते सत्वपणो कहियें.

६ तथा छठ्ठो १ अनंतभाग हानि, २ असंख्यात भाग हानि, ३ संख्यात भाग हानि, ४ संख्यात गुण हानि, ५ असंख्यात गुण हानि, ६ अनंत गुण हानि, ए छ प्रकारनी हानि, तथा १ अनंत भाग वृद्धि, २ असंख्यात भाग वृद्धि, ३ संख्यात भाग वृद्धि, ४ संख्यात गुण वृद्धि, ५ असंख्यात गुण वृद्धि, ६ अनंत गुण वृद्धि. ए छ वृद्धि. एम छ प्रकारनी हानि तथा छ प्रकारनी वृद्धि ते अगुरुलघु पर्यायनी सर्व द्रव्यने सर्व प्रदेशे परिणमे छे ते कोइक प्रदेशें कोइ समये अनंतभाग हानिपणे परिणमे छे अने कोइक समये कोइक प्रदेशें अनंतभाग वृद्धिपणे परिणमे छे. एवं बार प्रकारें परिणमे छे ते अगुरुलघु पर्यायनी परिणमन शक्ति ते अगुरुलघुत्वं. अगुरुलघुनो भाव जाणवो. तत्त्वार्थ टीकाने विषे पांचमा अध्यायें अलोकाकाशने अधिकारें कह्यो छे. एम ए छ स्वभाव सर्व द्रव्यने विषे परिणमे छे. ए छए द्रव्यनो मूल स्वभाव छे. द्रव्यनो भिन्नपणो प्रदेशनो भिन्नपणो ते अगुरुलघुने भेदपणे थाय छे ते माटे ए छ मूल सामान्य स्वभाव छे. ए द्रव्यास्तिक धर्म छे अने एनुं परिणमन ते पर्यायास्तिक धर्म छे. केटलाक वादी एम कहे छे जे पर्यायनो पिंड ते द्रव्य

छे पण द्रव्यपणो भिन्न नथी जेम धूरी पइडा कागमो १ डागली जूंहरी प्रमुख समुदायने गाडो कहियें पण सर्व अवयवथी भिन्न गाडापणो कोइ देखातो नथी तेमज ज्ञानादिक गुणथी भिन्नपणे कोइ आत्मा देखातो नथी तेने कहियें जे ज्ञानादिक गुणने विषे छति एक पिंड समुदायता सदा अवस्थितपणो अने द्रव्यथी मिली न जाय तथा स्वक्रियावंतपणो इत्यादिक सामान्य धर्म छे. छति अस्तित्व अर्थ क्रियावंत ते द्रव्यपणो एकपिंडपणो ते वस्तुत्व इत्यादिक ते सर्व द्रव्यपणो छे एटले द्रव्यास्तिक पर्यायास्तिक ए बेहु मलीने द्रव्यपणो छे उक्तं च संमतौ दव्वा पज्जवरहिआ न पज्जवा दव्वओवि उत्पत्ति ए मूल सामान्य स्वभावना छ भेद कह्या.

तत्र अस्तित्वं उत्तरसामान्यस्वभावगम्यं ते चोत्तरसामान्यस्वभावा अनन्ता अपि वक्तव्येन त्रयोदश १ अस्तिस्वभावः २ नास्तिस्वभावः ३ नित्यस्वभावः ४ अनित्यस्वभावः ५ एकस्वभावः ६ अनेकस्वभावः ७ भेदस्वभावः ८ अभेदस्वभावः ९ भव्यस्वभावः १० अभव्यस्वभावः ११ वक्तव्यस्वभावः १२ अवक्तव्यस्वभावः १३ परमस्वभावः इत्येवंरूपवस्तुसामान्यानंतमयम् ॥

अर्थ—तथा वली अस्तित्व उत्तरसामान्य स्वभाव कहे छे ते उत्तरसामान्य स्वभाव वस्तु मध्ये अनंता छे पण तेर सामान्यस्वभाव अनेकांतजयपताकादि ग्रंथे वखाण्या छे, तेमांथी लेशमात्र लखिये छैयें तेनां नाम ऊपरना मूल पाठमां सुलभ छे माटे लिख्यां नथी. तथा एना व्याख्यानथी पण जणाशे. ए तेर सामान्यस्वभावें परिणमति वस्तु होय.

स्वद्रव्यादिचतुष्टयेन व्याप्यव्यापकादिसम्बन्धिस्थितानां स्वपरिणामात् परिणामान्तरागमनहेतुः वस्तुनः सद्रूपतापरिणतिः अस्तिस्वभावः ॥

अर्थ ॥ तेमां १ प्रथम अस्तिस्वभावनुं लक्षण कहे छे. स्व के० पोताना द्रव्यादिक चारधर्म तेनो जेमां व्यापकपणो छे, १ द्रव्य ते गुणपर्यायना समुदायनो आधारपणो, २ क्षेत्र ते प्रदेशरूप सर्वगुणपर्यायनी अवस्थाने राखवापणो जे जेने राखे ते तेनुं क्षेत्र जाणवुं, ३ काल ते उत्पादव्यय ध्रुवपणेवर्त्तना, ४ भाव ते सर्वगुणपर्यायनो कार्यधर्म तिहां जीव द्रव्यनुं १ स्वद्रव्यप्रदेशगुणनो समुदाय द्रव्य छे, ते गुणपर्यायनो जनकपणो ते स्वद्रव्य अने, २ जीवना असंख्याता प्रदेश ते स्वपर्यायनो स्वक्षेत्रपर्याय ते जाणवा एटले देखवादिक जे गुणनो पर्याय तेनुं जे क्षेत्र ते स्वक्षेत्र, ३ पर्यायमध्ये कारण कार्यादिकनो जे उत्पादव्यय ते स्वकाल तथा, ४ अतीतअनागत वर्त्तमाननुं परिणमन ते स्वभाव ते कार्यादिक धर्म जेम ज्ञानगुणनो पर्याय जाणंगपणो, वेत्तापणो, परिच्छेदकपणो, विवेचनपणो, इत्यादिक स्वभाव एम स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभाव जे परिणामिकपणे परिणमता तेनी अस्तिता कहेवी ए सर्वनी छति छे ते अस्ति स्वभाव छे. ए अस्ति स्वभावें द्रव्य छे, ते पोतानो मूल धर्म मूकी अन्य धर्मपणे परिणमतो नथी, परिणामांतरें आगमन छे ए अस्ति स्वभाव ते सर्व द्रव्यमां पोताना गुणपर्यायनो जाणवो. जे अस्ति ते सद्रूपता छता रूपपणानी परिणति लेवी, सर्व द्रव्यमां पोतानें धर्मेंज परिणमे पण जे जीवद्रव्य ते अजीवद्रव्यपणे न परिणमे. तथा एकजीव ते अन्यजीवपणे न परिणमे. वली

तथा सर्वो घटः स्वपरोभयपर्यायैः सद्भावासद्भावाभ्यां सत्वासत्वाभ्यामर्पितो युगपद्वक्तुमिष्टोऽवक्तव्यो भवति स्वपरपर्यायसत्वासत्वाभ्यां एकैकेनाप्यसांकेतिकेन शब्देन सर्वस्यापि तस्य वक्तुमशक्यत्वादिति, एवं जीवस्यापि सत्वासत्वाभ्यामेकसमयेन वक्तुमशक्यत्वात् स्यादवक्तव्यो जीव इति तृतीयो भङ्गः । एते त्रयः सकलादेशाः सकलं जीवादिकं वस्तुग्रहणपरत्वात् ॥

अर्थ—सर्वघटादिवस्तु छे ते स्वपर्याय जे पोताना सद्भावपर्याय तेणे करी छतापणे कहेवाय तथा परने पर्यायें अछता पण कहेवाय, तेवारें स्वपर्यायनो छतापणो परपर्यायनो अछतापणो ए बे धर्म समकालें छे पण एकसमयें कहेवाय नही ते माटे ए घटादि द्रव्य ते स्वद्रव्यमां स्वपर्यायनो सत्वपणो, परपर्यायनो असत्वपणो, ते कोइ पण एक सांकेतिक शब्दें करी कहेवाने समर्थ नही माटे सत्व अस्तिपणो असत्व नास्तिपणो ते एक समयें कहेवामां असमर्थ छे तेथी वस्तुस्वभावना बे धर्म ते एक समयें छता छे तेनो ज्ञानकरवा माटे स्यात् अवक्तव्य ए वचन बोल्या. केमके कोइकने एवो बोध थाय जे सर्वथी वचने अगोचरज छे ते माटे स्यात्पद दीधो स्यात् के० कथंचित्पणे कोइक रीतें एकसमये न कहेवाय माटे स्यात् अवक्तव्य ए जीव छे. एम सर्वद्रव्य जाणवा. ए त्रीजो भांगो थयो. ए त्रण भंगा सकलादेशी छे. सर्व वस्तुने संपूर्णपणे ग्रहेवारूप छे. जीवादिक जे वस्तु तेने संपूर्ण ग्रहेवावंत छे.

अथ चत्वारो विकलादेशाः तत्र एकस्मिन् देशे स्वपर्यायसत्त्वेन अन्यत्र तु परपर्यायअसत्त्वेन संश्च असंश्च भवति घटोऽघटश्च एवं जीवोऽपि स्वपर्यायैः सन् परपर्यायैः असन् इति चतुर्थो भङ्गः ॥

अर्थ—हवे चार भांगा विकलादेशी कहे छे जे वस्तुनुं स्वरूप कहेवो तेना एक देशनेज महे ए स्वरूप छे तिहां एक देशने विषे स्वपर्यायनो सत्वपणो अस्तिपणो गवेषे ने एक देशने विषे परपर्यायवनो असत्वपणो गवेषे छे तेवारें वस्तु सद् असत्पणे छे एटले ए घट छे अने ए घट नथी एम जीवपण स्वपर्यायें सत् परपर्यायें असत् ते माटे एक समयें अस्ति नास्ति रूप छे, पण कहेवामां असंख्यात समयें छे ते माटे स्यात् पूर्वक छे एम स्यात् अस्तिनास्ति ए चोथो भंगो जाणवो.

तथा एकस्मिन् देशे स्वपर्यायैः सद्भावेन विवक्षितः अन्यत्र तु देशे स्वपरोभयपर्यायैः सत्त्वासत्त्वाभ्यां युगपद्संकेतिकेन शब्देन वक्तुं विवक्षितः सन् अवक्तव्यरूपः पञ्चमो भङ्गो भवति. एवं जीवोपि चेतनत्वादिपर्यायैः सन् शेषैरवक्तव्य इति ॥

अर्थ—तथा एक देशें पोताने पर्यायें स्वद्रव्यादिकें छतापणे गवेषीयें अने अन्य के० बीजा देशोने विषे स्वपर ए बे पर्यायें सत्व छतापणें तथा असत्व–अछतापणें समकालें असंकेतपणे नामने अणकहे गवेषीयें तेवारें सत् के० अस्तिअवक्तव्यरूप भांगो उपजे अने ए भांगा छसां बीजा छ भांगा छे तेनी गवेषणा माटे स्यात् पद जोडीयें एटले स्यात् अस्ति

अवक्तव्य ए पांचमो भांगो जाणवो. जेम जीवने विषे चेतनपणो सुखवीर्यगुणें अस्ति छे अने नास्तिपणे अस्तिनास्ति सम-
कालपणे वचनगोचर न आवे ते स्यात् अस्ति अवक्तव्य.

तथा एकदेशे परपर्यायैरसद्भावेनार्पितो विशेषतः अन्यैस्तु स्वपरपर्यायैः सद्भावासद्भावाभ्यां सत्वासत्वाभ्यां युगपदसंकेतिकेन शब्देन वक्तुं विवक्षितकुंभोऽसन् अवक्तव्यश्च भवति । अकुम्भोऽवक्तव्यश्च भवतीत्यर्थः देशे तस्याकुम्भत्वात् देशे अवक्तव्यत्वादिति षष्ठो भङ्गः ॥

अर्थ—तथा एकदेशें परपर्याय जे नास्ति पर्याय तेने असद्भाव के० अछतापणे अर्पित करीने मुख्यपणे गवेषीयें तेवार पछी अन्य के० बीजा स्वपर्यायें अस्तिपणो तथा परपर्याय जे नास्ति पर्याय ए बे सत्व के० छतापणे असत्व के० अछ-तापणे युगपत् समकाले कहियें, इहां संकेतिक शब्दने अभावें कहेवामां न आवे, अने ते कह्या विना श्रोताने ज्ञान केम थाय? ते माटे स्यात् पद ते अन्य भांगानी सापेक्षता माटे तथा सर्व धर्मनी समकालता जणाववा माटे स्यात्नास्तिअव-क्तव्य ए छठ्ठो भांगो जाणवो. एटले जीव पोताने स्वगुणे तो छतापणो सर्वपर्याय समकालनो अवक्तव्यपणो ए स्यात् नास्ति अवक्तव्य छठो भांगो थयो.

तथा एकदेशे स्वपर्यायैः सद्भावेनार्पितः एकस्मिन् देशे परपर्यायैरसद्भावेनार्पितः अन्यस्मिंस्तु देशे

स्वपरोभयपर्यायैः सद्भावासद्भाभ्यां युगपदेकेन शब्देन वक्तुं विवक्षितः सन् असन् अवक्तव्यश्च भवति इति सप्तमोभङ्गः । एतेन एकस्मिन् वस्तुन्यर्पितानर्पितेन सप्तभङ्गी उक्ता ॥

अर्थ—तथा एकदेशे स्वपर्यायने छतापणे अर्पित करियें अने एकदेशे परपर्यायने अछतापणे गवेषियें अने ते सर्व पर्याय समकालें भेला रह्या छे पण वचने कहेवाय नही एटले अस्तिपणो पण छे अने नास्तिपणो पण छे, ए सर्व धर्म समकालें छे, पण वचने गोचर थाय नही, ए अपेक्षाये स्यात्अस्ति स्यात् नास्ति स्यात् अवक्तव्य ए रीतें वस्तुनो परिणमन छे. ए सातमो भांगो जाणवो. ए सप्तभंगी अर्पित अनर्पितपणे कही. ते अर्पित एक धर्मज होय एक एक धर्मने विषे सप्तभंगी कही.

तत्र जीवः स्वधर्मैः ज्ञानादिभिः अस्तित्वेन वर्त्तमानः तेन स्यात् अस्तिरूपः प्रथमभङ्गः अत्र स्वधर्मा अस्तिपदगृहीताः शेषा नास्तित्वादयो धर्माः अवक्तव्यधर्माश्च स्यात्पदेन संगृहीताः ॥

अर्थ—हवे स्वरूपपणे सप्तभंगी कहे छे, जे एकद्रव्यने विषे अथवा एकगुणने विषे, एकपर्यायने विषे, एकस्वभावने विषे सातसात भांगा सदा परिणमे छे, ते रीतें सप्तभंगी कहे छे. स्याद्वादरत्नाकरावतारिका मध्ये कह्यो छे "एकस्मिन् जीवादौ अनंतधर्मापेक्षासप्तभंगीनामानंत्यं" ए वचनथी जाणी लेजो. अत्थिजीवे इत्यादि गाथाथी जाणजो, ए सुयगडांग सूत्रें छे. हवे पहेलो भांगो लखियें छैयें, तिहां जीवद्रव्य पोताने स्वद्रव्य पिंडगुणपर्याय समुदाय आधारपणो, स्वक्षेत्र असंख्यप्रदेश ज्ञानादि गुणनुं अवस्थान, अगुरुलघुता हानि वृद्धिनो मान अने स्वकाल ते गुणनी वर्त्तना उत्पा-

द्र व्यनी परिणमननो भिन्न स्वभाव तथा अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र, अनंत दान, अनंत लाभ, अनंत भोग, अनंत उपभोग, अनंत वीर्य, अनंत अव्याबाध, अरूपी, अशरीरी, परमक्षमा, परममार्दव, परम आर्जव, स्वरूपभोगी प्रमुख स्वस्वभाव ए अनंतज्ञेय ज्ञायकपणे जीवद्रव्य छतो छे. एम जीवनो ज्ञानगुण सधर्म सकलज्ञेयज्ञायकपणो स्वशक्तिधर्में अनंत अविभागें एकएक पर्याय अविभागमां सर्व अभिलाप्य अनभिलाप्य स्वभावनो जाणगपणो छे. इहां विस्तारें लखियें छैयें, तिहां मतिज्ञानना पर्याय जूदा छे. श्रुतज्ञानना अविभाग जूदा छे. अवधिज्ञानना अविभाग जूदा छे. मनःपर्यायज्ञानना अविभाग जूदा छे. केवलज्ञानना पर्याय जूदा छे. श्रीविशेषावश्यकें गणधरवादने छेडे कह्यो छे. जो आवरवा योग्य वस्तु भिन्न छे तो आवरण जूदा छे. तिहां क्षयोपशमने भेदें जाणे छे ते परोक्ष अथवा देशथी जाणे छे, सर्वथा आवरण गयेथके प्रत्यक्ष जाणे पण केवलज्ञान सर्वभावनो संपूर्ण प्रत्यक्षज्ञायक ते संपूर्ण प्रगट्यो तेवारें बीजा ज्ञाननी प्रवृत्ति छे पण भिन्न पडति नथी, माटे ते केवलज्ञाननो जाणपणोज कहेवाय छे, तथा कोइक ज्ञानगुणना अविभाग सर्व एक जातिना कहे छे, ते अविभागमध्ये वर्णादिक जाणवानी शक्ति अनेक प्रकारनी छे, तेमां जे आवरण एटले जे शक्ति प्रगटे ते शक्तिनुं मतिज्ञानादि भिन्न नाम छे, अने सर्व आवरण गयाथी एक केवलज्ञान कह्युं छे. छद्मस्थ ज्ञाननो भास छे. ए पण व्याख्यान छे. एवो ज्ञानगुण पोताना स्वपर्याय ज्ञायक परिच्छेदक वेतृत्त्वादिकें अस्ति छे. एम सर्व गुणमां स्वधर्मनी अस्तिता कहेवी. तेमज जे अविभागरूप पर्याय छे जेना समूहनी एक प्रवृत्तिने गुण कहियें छैयें तेपण स्वकार्य कारणधर्मे अस्ति छे. एम छ द्रव्यनुं स्वरूप स्वस्वरूपें अस्ति छे अने अन्य छे भांगा पण छे एवो सापेक्षता माटे स्यात्पद देइने

बोलवो ते स्यात् अस्ति ए प्रथम भांगापणो (कथ्यो) एटले गवेष्यो. जे अस्तिधर्म ते पण नास्तिपणा सहित छे एटले अस्ति कहेतांथका नास्तिप्रमुख छ भांगानी छति छे, तिहां स्यात् शब्दसहित उपयोग थयो तेथी सत्यपणो थयो.

तथा स्वजात्यन्यद्रव्याणां तद्धर्माणां च विजातिपरद्रव्याणां तद्धर्माणां च जीवे सर्वथैव अभावात् नास्तित्वं तेन स्यात् नास्तिरूपो द्वितीयो भङ्गः अत्र परधर्माणां नास्तित्वं नास्तिपदेन गृहीतं शेषा अस्तित्वादयः स्यात्पदे गृहीता इति ॥

अर्थ—हवे बीजो भांगो कहे छे जे एक जीवनुं स्वरूप उपयोगमां आण्यो छे ते जीवने विषे, अन्य जे सिद्ध संसारी जीव छे ते सर्वना गुपर्याय अस्तित्वादि प्रमुख सर्व धर्मनी नास्ति छे, अने अजीव द्रव्य तथा तेना जडतादिक सर्व धर्मनी नास्ति छे. जेम अग्निमां दाहकपणो छे तेनी पासे बीजो अग्निनो कणियो पड्यो छे, ते पण दाहक छे पण ते दाहकपणो भिन्न छे एटले ते कणीयांनो दाहकपणो ते अग्निमां नथी अने ते अग्निनो दाहकपणो ते कणीयांमां नथी. तेमज एक जीवमां ज्ञानादिक गुण छे ते बीजामां नथी अने बीजा जीवमां जे ज्ञानादिक गुण छे ते तेमां नथी. बाकी सरिखा छे ते माटे जाणवादिक कार्य सरिखा करे तो पण सर्वमां पोतपोताना गुण छे पण कोइ द्रव्यना गुण कोइ द्रव्यमां आवता नथी. ते माटे स्वजाति अन्य द्रव्यपणो, अन्य गुणपणो तथा अन्य धर्मपणो ते सर्वनी नास्ति छे, एमज गुणमां पण सर्व अन्य द्रव्यादिकनी नास्ति छे, तथा पर्यायना अविभागमां पण स्वजाति अविभागकार्यता कारणतानी नास्ति छे. ते माटे

परद्रव्यपणो, परक्षेत्रपणो, परकालपणो, परभावपणो, एनी नास्ति छे. एवो नास्तिपणो पण तेमांज रह्यो छे ते माटे स्यात् नास्तिपणो ए भांगो पण तेमांज छे. एम एकज मात्रनास्तिपणोकह्ये थके अस्तिपणो तथा एक कालपणो पण छे तथा जीवमां जडतां गुणनी नास्ति छे, एटले जडतानी नास्ति ते जीवमांज रही छे. इत्यादिक अनंता धर्मनी सापेक्षता माटे स्यात्पदें बोलतां सर्व धर्मनो भासन थयो एटले सत्यता थाय ते माटे स्यात्नास्ति ए बीजो भांगो कह्यो.

केषाश्चिद्धर्माणां वचनागोचरत्वेन तेन स्यात्अवक्तव्य इति तृतयो भङ्गः । अवक्तव्यधर्मसापेक्षार्थं स्यात्पदग्रहणम् ॥

अर्थ—हवे त्रीजो भांगो कहे छे. जे वस्तु होय तेमां केटलाक धर्म एवा छे जे वचने करी कहेवाता नथी ते अवक्तव्य छे. ते केवलीने ज्ञानमां जणाय पण वचने करी ते पण कही शके नही ते माटे तेवा धर्मनी अपेक्षायें वस्तु अवक्तव्य छे एटले कहेतां थकां वक्तव्यनी ना थयी पण केटलाक धर्म वस्तु मध्ये वक्तव्य छे ते जणाववा माटे स्यात्पद ग्रहण करीने स्यात् अवक्तव्य ए त्रीजो भांगो कह्यो.

अत्र अस्तिकथने असंख्येयाः नास्तिकथनेप्यसंख्येयाः समया वस्तुनि, एकसमये अस्तिनास्तिस्वभावौ समकवर्त्तमानौ तेन स्यात्अस्तिनास्तिरूपश्चतुर्थो भङ्गः ॥

अर्थ—हवे चोथो भांगो कहे छे जे अस्ति एवो शब्द उच्चार करतां पण असंख्यात समय थाय तथा नास्ति ए शब्द

उच्चार करतां पण असंख्यात समय थाय अने वस्तुमां तो अस्तिधर्म नास्तिधर्म ए बेहु एक समयमां छे, ते बेहु समकालें जणाववा माटे अने जे अस्ति ते नास्ति न थाय तथा जे नास्ति ते अस्ति न थाय ते सापेक्षता माटे स्यात् अस्तिनास्ति ए चोथो भांगो जाणवो.

तत्र अस्तिनास्तिभावाः सर्वे वक्तव्या एव न अवक्तव्या इति शङ्कानिवारणाय स्यात्अस्ति अवक्तव्य इति पञ्चमो भङ्गः स्यान्नास्ति अवक्तव्य इति षष्ठः ॥

अर्थ—हवे पांचमो तथा छठो भांगो कहे छे तिहां स्यात् अवक्तव्य एम कहेवाथी द्रव्यनेमूलधर्मे एकलो अवक्तव्यथयो ते संदेह निवारवाने कह्यो जे स्यात् अस्ति अवक्तव्य वस्तुमां अनंताअस्तिधर्म छे पण वचने अगोचर छे अने अनंताधर्म वचनगोचर पण छे तेनी सापेक्षता माटे स्यात् पदयुक्त करीने एटलेस्यात् अस्ति अवक्तव्यः ए पांचमो भांगो-जाणवो एमज पांचमानी रीते स्यात् नास्ति अवक्तव्यः ए छठो भांगो जाणवो.

अत्र वक्तव्या भावाः स्यात्पदे गृहीताः अत्र अस्तिभावा वक्तव्यास्तथा अवक्तव्यास्तथा नास्तिभावा वक्तव्या अवक्तव्या एकस्मिन् वस्तुनि, गुणे, पर्याये, एकसमये, परिणममाना इति ज्ञापनार्थं स्यात्अस्तिनास्ति अवक्तव्य इति सप्तमो भङ्गः ॥ अत्र वक्तव्या भावास्ते स्यात्-

पदे संगृहीता इति अस्तित्वेन अस्तिधर्मा नास्तित्वेन नास्तिधर्मा युगपदुभयस्वभावत्वेन वक्तुमशक्यत्वात् अवक्तव्यः स्यात्पदे च अस्त्यादीनामेव नित्यानित्याद्यनेकान्तसंग्राहकम् ॥

अर्थ—हवे सातमो भांगो कहे छे, इहां अस्तिभावपणो वक्तव्य छे तेमज नास्तिभावपण वक्तव्य छे, अने अवक्तव्य पण छे. ए सर्व धर्म एक समयमां एक वस्तुमध्यें तथा एक गुणमध्ये तथा एक पर्यायमध्ये समकालें परिणमे छे ते जणाववा माटे अस्तिनास्ति अवक्तव्यः ए सातमो भांगो. इहां अस्ति ते नास्ति न थाय अने नास्ति ने अस्ति न थाय तथा वक्तव्य ते अवक्तव्य न थाय अने अवक्तव्य ते वक्तव्य न थाय ते जणाववाने अर्थे स्यात्पद ग्रह्यो छे. इहां अस्तिपणे जे भाव छे ते अस्तिधर्म अने नास्तिपणे जे भाव छे ते नास्तिपणे ग्रह्या छे, वेहु समकाले छे ते माटे एक समय वक्तव्यके० कहेवामां अशक्य छे, असमर्थ छे, तेथी अवक्तव्यके० अगोचरपणे छे अने जे स्यात्पद छे ते अस्तिधर्म नास्तिधर्म अवक्तव्यधर्मनो नित्यपणो, अनित्यपणो प्रमुख अनेकांतनो संग्रह करे छे जे अस्तिधर्म छे ते नित्यपणो पण छे तथा अनित्यपणे पण छे एकपणे छे, अनेकपणे छे, भेदपणे छे, अभेदपणे छे, इत्यादिक ते अस्तिधर्ममां अनेकांतता छे तेने ग्रहे छे. केमके वस्तुनो एकगुण तेमां अस्तिपणो छे नास्तिपणो छे, नित्यपणो छे, अनित्यपणो छे, भेदपणो छे, अभेदपणो छे, वक्तव्यपणो छे, अवक्तव्यपणो छे, भव्यपणो छे, अभव्यपणो छे, ए अनेकांतपणो एहज स्याद्वाद छे तेनुं संकेतिक वाक्य ते स्यात्पद छे ए रीते जाणवो.

आत्मद्रव्यने विषे स्वधर्मनी अस्तिता छे, परधर्मनी नास्तिता छे, स्वगुणनो परिणमवो अनित्य छे अने तेज गुणपणे नित्य छे, तथा द्रव्य पिंडपणे एक छे अने गुण पर्यायपणे अनेक छे, तथा आत्मा कारणपणे कार्यपणें समय समयमां नवानवापणो जे पामे छे ते भवनधर्म छे तो पण आत्मानो मूलधर्म जे पलटतो नथी ते अभवनधर्म छे. इत्यादिक अनेक धर्म परिणति युक्त छे ए रीते षट् द्रव्यने जाणी निर्धारीने हेयोपादेयपणे श्रद्धान भासन थाय ते सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन छे ए जीवनी अशुद्धता ते परकर्त्ता, परभोक्ता, परग्राहकता, टालवाना उपायनुं साधन ते साधन करवे आत्मा आत्मापणें मूलधर्मे रहे ते सिद्धपणो तेनी रुचि उद्यमपणो करवो एहिज श्रेय छे.

स्यात्अस्ति, स्यान्नास्ति, स्यात्अवक्तव्यरूपास्त्रयः सकलादेशाः संपूर्णवस्तुधर्मग्राहकत्वात्, मूलतः अस्तिभावा अस्तित्वेन सन्ति, तथा नास्तिभावा नास्तित्वेन सन्ति एवं सप्तभङ्गाः एवं नित्यत्वसप्तभङ्गी अनित्यत्व सप्तभङ्गी एवं सामान्यधर्माणां, विशेषधर्माणां, गुणानां, पर्यायाणां, प्रत्येकं सप्तभङ्गी तद्यथा ॥

अर्थ—स्यात्अस्ति स्यात्नास्ति स्यात्अवक्तव्य ए त्रण भांगा वस्तुना संपूर्णरूपने ग्रहे माटे सकलादेशी छे अने शेष रह्या जे चारभांगा ते विकलादेशी छे ते वस्तुना एकदेशने ग्रहे माटे तथा वली अस्तिपणाने विषे जे अस्तिपणो ते नास्तिपणे नथी अने नास्तिपणो नास्तिपणे छे तेमां अस्तिपणो नथी. इहां कोइ पुछे के वस्तुमां जे नास्तिपणो ते अस्ति-

पणे कहोछो तो नास्तिपणामां अस्तिपणानी ना किम कहोछो? तेने उत्तर जे नास्तिपणो ते अस्ति छे—छतापणे छे अने अस्तिधर्म कांइ नास्तिपणामां नथी माटे ना कही छे. छतिनी ना कही नथी. तथा एमज नित्यपणानि सप्तभंगी तथा अनित्यपणानि सप्तभंगी तेमज सामान्य धर्म सर्वनी भिन्न भिन्न सप्तभंगी, तथा सर्व विशेष धर्मनी सप्तभंगी, तेमज गुण पर्याय सर्वनी जूदी जूदी सप्तभंगी कहेवी, तद्यथा के० ते कही देखाडे छे.

ज्ञानं ज्ञानत्वेन अस्ति दर्शनादिभिः स्वजातिधर्मैः अचेतनादिभिः विजातिधर्मैः नास्ति, एवं पञ्चास्तिकाये प्रत्यस्तिकायमनन्ता सप्तभंग्यो भवन्ति. अस्तित्वाभावे गुणाभावात्पदार्थे शून्यतापत्तिः नास्तित्वाभावे कदाचित् परभावत्वेन परिणमनात् सर्वसङ्करतापत्तिः व्यंजकयोगे सत्ता स्फुरति तथा असत्ताया अपि स्फुरणात् पदार्थानामनियता प्रतिपत्तिः तत्त्वार्थे तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥

अर्थ—हवे गुणनी सप्तभंगी कही देखाडे छे. जेम ज्ञान गुण ज्ञायकादिक गुणे अस्ति छे अने दर्शनादिक स्वजाति एकद्रव्यव्यापि गुण तथा स्वजाति भिन्न जीवव्यापि ज्ञानादिक सर्वगुण अने अचेतनादिक परद्रव्यव्यापि सर्वधर्मनी नास्ति छे. एम पंचास्तिकायने विषे अस्तिकायें अनंति सप्तभंगीओ पामे. ए सप्तभंगी स्याद्वादपरिणामें छे ते सर्व द्रव्यादिकमां छे.

हवे वस्तुमध्ये अस्तिपणो न मानियें तो शो दोष उपजे ते कहे छे. जो वस्तुमां अस्तिपणो न मानियें तो गुण पर्यायनो अभाव थाय अने गुणना अभावें पदार्थ शून्यतापणो पामे.

तथा जो वस्तुमध्ये नास्तिपणो न मानियें तो ते वस्तु कदाकालें पर वस्तुपणें अथवा परगुणपणें परिणमि जाय तेथी कोइवारें जीव ते अजीवपणो पामे अने अजीव ते जीवपणो पामे तो सर्व संकरतादोष उपजे तथा व्यंजन के० प्रकटतानो हेतु तेने योगें छतो धर्म ते फुरे पण जे धर्मनी सत्ता छति न होय ते फुरे नही. जो नास्तिपणो न मानियें तो असत्तापणे फुरे अने जेवारें असत्ता स्फुरे तेवारें द्रव्यनो अनियामक के० अनिश्चयपणो थइ जाय, ते माटे सर्व भाव अस्ति नास्तिमयी छे. व्यंजकतानां दृष्टांत कहे छे. जेम कोरा कुंभमां सुगंधतानी सत्ता छे तोज पाणीने योगें वासना प्रगटे छे. जो वस्त्रादिकमां ते धर्म नथी तो तेमां प्रगटतो पण नथी एम सर्वत्र जाणवो. हवे त्रीजो नित्य स्वभाव कहे छे ते जे वस्तुना भाव तेनो अव्यय के० नही टलवो एटले तेमनो तेमज रहेवो ते नित्यपणो कहियें तेना वे भेद छे ते कहे छे.

एका अप्रच्युतिनित्यता द्वितीया पारंपर्यनित्यता ॥ तथा द्रव्याणां ऊर्ध्वप्रचयतिर्यग्प्रचयत्वेन तदेव द्रव्यमिति ध्रुवत्वेन नित्यस्वभावः नवनवपर्यायपरिणमनादिभिः उत्पत्तिव्ययरूपोऽनित्यस्वभावः उत्पत्तिव्ययस्वरूपमनित्यम् ॥ १ ॥

अर्थ—एक अप्रच्युतिनित्यता बीजी पारंपर्यनित्यता तिहां अप्रच्युतिनित्यता तेने कहियें जे द्रव्य ते उर्ध्व प्रचय तिर्यक् प्रचयने परिणमवे ए द्रव्य तेहिज ए ध्रुवतारूप ज्ञान थाय छे एटले सदा सर्वदा त्रणे काले तेहिज एवुं जे ज्ञान थाय छे

जे मूल स्वभाव पलटे नही ते अप्रच्युति नित्यता कहियें अने ए नित्यतामां जे ऊर्ध्व प्रचय कह्यो ते ओलखावे छे जे पहेले समयें द्रव्यनी परिणति हती ते बीजे समयें नवापर्यायने उपजवे अने पूर्वपर्यायने व्ययें सर्व पर्यायनी परावृति थइ तो पण ए द्रव्य तेनुं तेज एवुं जे ज्ञान थाय ते द्रव्यमां उर्ध्वप्रचय कहियें उपरले समये ते माटे उर्ध्व प्रचय कहियें.

तथा अनंताजीव सरिखा छे सर्वभिन्नभिन्न छे पण सर्वजीव जाणताए पण जीव एवो जीवत्वसत्तायेंतुल्य भिन्न जीव सत्तारूप ज्ञान थाय ते तिर्यक्प्रचय कहिये.

ऊर्ध्वप्रचय ते समयांतरे अनेक उत्पादव्ययने पलटवे पण ए जीव ते तेज छे एवुं ज्ञान थाय ए नित्यस्वभावनो धर्म जाणवो. ए कारणथी कार्यउपनो तेनुं ज्ञान थाय ते नित्यस्वभावनो धर्म जाणवो. तथा ए कारणथी जे कार्यउपनो वली ज्ञान थयुं ते कारणथी बीजे कारणे बीजुं कार्य थाय एम नवे नवे कार्यउपने पण जीव तेज छे एवुं जे ज्ञान थाय, परंपरारूप संतति चाली जाय ते पारंपर्य नित्यता कहियें जेम प्रथम शरीरने कारणे राग हतो तेहिज वस्त्र धनने कारण प्रते राग थयो ते कारण नवा रागनो नवापणो पण राग रहित आत्मा केवारे नही, ए पारंपर्य एटले परंपरा नित्यता कहियें. बीजुं नाम संतति नित्यता जाणवी, ते कारण योगे निमित्तें नीपजे, नवा नवा पर्यायने परिणमवे एटले पूर्व पर्यायने व्ययथवे तथा अभिनव पर्यायने उपजवे अनित्य स्वभाव जाणवो. एटले उत्पत्ति के० उपजवो व्यय के० विणसवो एवो जे स्वभाव ते अनित्य स्वभाव जाणवो.

तत्र नित्यत्वं द्विविधं कूटस्थं प्रदेशादिनां, परिणामित्वं ज्ञानादिगुणानां, तत्रोत्पादव्ययावने-

कप्रकारौ तथापि किञ्चिल्लिख्यते विस्त्रसाप्रयोगजभेदाद् द्विभेदो सर्वद्रव्याणां चलनसहकारादिपदार्थक्रियाकारणं भवत्येव ॥

अर्थ—तिहांवली ग्रंथांतरे नित्यपणो बे प्रकारे कह्यो छे एक कूटस्थनित्यता, बीजी परिणामिनित्यता छे. जीवना असंख्यात प्रदेशे ते संख्यायें तथा क्षेत्रावगाह पलटतो नथी ते तथा गुणनो अविभाग ते सर्व कूटस्थनित्यता छे.

ज्ञानादिक गुण ए सर्व परिणामिक नित्यतायें छे. केमके गुणनो धर्मज ए छे. जे समयें समयें स्वभाव कार्यपणे परिणमे अने जे कार्य होय ते परिणामिकपणेज होय ए नीतिज छे अने जो ज्ञानगुण कूटस्थनित्यतापणे मानियें तो पेहेले समयें जे ज्ञाने करी जाण्यो तेहिज जाणपणो सदासर्वदा रहे पण तेम तो नथी. ज्ञेय तो नवनवी रीतें परिणमता देखाय छे तो ते ज्ञेयनी नवनवी अवस्था ज्ञान जाणे नही एटले पहेले समय जे रीते ज्ञान परिणमे छे ते रीतें परिणमन जोवुं जोईयें अने ए रीते ज्ञान यथार्थ थयुं एम घटे नहीं ते माटे ज्ञेय जे घटपटादिक ते जेम पलटे छे. तेम ज्ञान पण जाणे तोहिज ज्ञान यथार्थ थाय ते माटे ज्ञानगुण ते नवा नवा ज्ञेय जाणवा माटे परिणामी जाणवो अनित्य, ज्ञायकता शक्ति माटे नित्य ए रीतें नित्यानित्य स्वभावी गुण छे. सर्व द्रव्यने विषे पोतानी क्रियानुं कारण थायज छे.

तत्र चलनसहकारित्वं कार्यं धर्मास्तिकायं द्रव्यस्य प्रतिप्रदेशस्थचलनसहकारिगुणा विभागाः उपादानकारणं कारणस्यैव कार्यपरिणमनात् तेन कारणत्वपर्यायव्ययः कार्यत्वपरिणामस्यो-

स्याद्: गुणत्वेन ध्रुवत्वं प्रतिसमयं कारणस्यापि उत्पादव्ययौ कार्यस्याप्युत्पादव्ययावित्यनेकान्तजयपताकाग्रन्थे. एवं सर्वद्रव्येषु सर्वेषां गुणानां स्वस्वकार्यकारणता ज्ञेया इति प्रथमव्याख्यानम् ॥

अर्थ—तिहां जेम धर्मास्तिकायद्रव्यनो चलन सहकारीपणो ते मुख्यकार्य छे अने अधर्मास्तिकायद्रव्यनो स्थिर सहायीत्व ते मुख्य कार्य छे. वली आकाशद्रव्यनुं अवगाहना दान ते मुख्य कार्य छे. जीवनो जाणवा देखवारूप उपयोग ते मुख्य कार्य छे. पुद्गलनो वर्णगंधरसस्पर्शपणो ते मुख्य कार्य छे. इत्यादि स्वकार्यनो थावुं छे ते जिहां थावुं तिहां भवनधर्म थयो अने जिहां भवनधर्म ते उत्पाद थयो अने उत्पाद होय ते व्यय सहितज होय ते भवनधर्म तत्त्वार्थ ग्रंथ मध्ये कह्यो छे. हवे ते उत्पादव्यय बे प्रकारना छे. एक प्रयोगथी थाय अने बीजो विश्रसा के० सहजे परिणामी धर्म थाय. हवे इहां सहजनो उत्पादव्यय कहे छे. तिहां धर्मास्तिकायादि छ द्रव्यने पोतापोताना चलनसहकारादि गुणनी प्रवृत्तिरूप अर्थक्रियानो करवो थायज अने चलन सहकारपणो ते कार्य धर्मास्तिकायद्रव्यने प्रतिप्रदेशें रह्यो जे चलन सहकारी गुणा विभाग ते उपादानकारण छे, तेहिज कार्यपणे परिणमे छे एटले कारणपणानो व्यय अने कार्यपणानो उत्पाद तथा चलन सहकारीपणे ध्रुव छे. एमज अधर्मास्तिकायने विषे थिरसहायगुणनुं प्रवर्त्तन छे तथा आकाशास्तिकायने विषे पण अवगाहनागुणनुं प्रवर्त्तन एमज छे. वली पुद्गलमां पूरणगलनादिक गुणनुं प्रवर्त्तन छे. तेमज जीवद्रव्यमां ज्ञानादिक गुणनुं

प्रवर्त्तन छे अथवा वली अनेकांतजयपताका ग्रंथने विषे एम पण कह्युं छे जे प्रतिसमयें गुणने विषे कारणपणो नवो नवो उपजे छे एटले कारणपणानो पण उत्पाद व्यय छे तेमज प्रतिसमयें कार्यपणो पण नवो नवो उपजे छे, एटले कार्यपणानो पण उत्पाद व्यय छे एम सर्वद्रव्यने विषे सर्वगुणनो कार्यपणो कारणपणो उपजे विणसे छे, एम उत्पाद व्ययनो एक स्वरूप प्रथम भेद कह्यो.

तथाच सर्वेषां द्रव्याणां पारिणामिकत्वं पूर्वपर्यायव्ययः नवपर्यायोत्पादः एवमप्युत्पादव्ययौ द्रव्यत्वेन ध्रुवत्वं इति द्वितीयः ॥

अर्थ—सर्व धर्म छे ते परिणामिक भावे छे. तिहां पूर्व पर्यायनो व्यय अने नवा पर्यायनो उत्पाद आप्रकारे उत्पाद व्यय समय समयें छे अने द्रव्यपणो ध्रुव छे ए बीजो भेद.

प्रतिद्रव्यं स्वकार्यकारणपरिणमनपरावृत्तिगुणप्रवृत्तिरूपा परिणतिः अनन्ता अतीता एका वर्त्तमाना अन्या अनागता योग्यतारूपास्ता वर्त्तमाना अतीता भवन्ति अनागता वर्त्तमाना भवन्ति शेषा अनागता कार्ययोग्यतासन्नतां लभन्ते इत्येवंरूपावुत्पादव्ययौ गुणत्वेन ध्रुवत्वं इति तृतीयः । अत्र केचित् कालापेक्षया परप्रत्ययत्वं वदन्ति तदसत् कालस्य पञ्चास्तिकाय-

पर्यायत्वेनैवाऽऽगमे उक्तत्वादियं परिणतिः स्वकालत्वेन वर्तनात् स प्रत्यक्षं एवं तथा कालस्य भि-न्नद्रव्यत्वेऽपि कालस्य कारणता अतीतानागतवर्तमानभवनं तु जीवादिद्रव्यस्यैव परिणतिरिति ॥

अर्थ—सर्व द्रव्यने विषे स्वके० पोतानुं कारण परिणमन परावृत्ति के० पलटणपणे गुणनी प्रवृत्तिरूप परिणमन छे ते परिणति अनंति अनंत जातिनी अतीतकालें थइ छे अने अनंतिजातिनी एक वर्त्तमान कालें छे अने वीजी अनागत योग्यतारूपपणे अनंतिछे ते वर्त्तमान परिणति ते अतीत थाय छे एटले ते परिणतिमध्ये वर्त्तमानपणानो व्यय अने अतीतपणानो उत्पाद तथा परिणतिपणे ध्रुव छे अने अनागतपरिणति ते वर्त्तमान थाय छे तिहां अनागतपणानो व्यय, वर्त्तमानपणानो उत्पाद अने छतिपणे ध्रुव अने अनागत कार्य योग्यता ते दूर हता ते आसन्न के० नजीकपणो पामे एटले दूरतानो व्यय अने नजीकतानो उत्पाद तथा अतीतमध्ये दूरतानो उत्पाद अने नजीकतानो व्यय ए रीतें सर्व द्रव्यने-विषे अतीत वर्त्तमान तथा अनागतपणे परिणति छे, ते परिणमेज छे. ए द्रव्यने विषे स्वकालरूप परिणमन छे, ए उत्पाद व्ययनो त्रीजो भेद जाणवो.

इहां केटलाक कालनी अपेक्षा लेइने परप्रत्ययपणो कहे छे ते खोटो छे, कारण के कालद्रव्य जे छे, ते पंचास्तिकायनो पर्याय छे अने परिणतितो द्रव्यनो स्वधर्म छे, माटे काल ते स्वकालरूप वस्तुनो परिणाम तेनो भेद छे, अथवा कालने भिन्न द्रव्य मानियें तोपण काल ते कारणपणे छे, अने अतीत, अनागत वर्त्तमानरूप परिणति तेतो जीवादिक द्रव्यनो धर्म छे ते माटे ए उत्पाद व्यय पण स्वरूपज छे ए त्रीजो भेद थयो.

तथाच सिद्धात्मनि केवलज्ञानस्य यथार्थज्ञेयज्ञायकत्वात् यथा ज्ञेया धर्मादिपदार्थाः तथा घट-पटादिरूपा वा परिणमन्ति तथैव ज्ञाने भासनाद् यस्मिन् समये घटस्य प्रतिभासः समयांतरे घटध्वंसे कपालादिप्रतिभासः तदा ज्ञाने घटप्रतिभासध्वंसः कपालप्रतिभासस्योत्पादः ज्ञान-रूपत्वेन ध्रुवत्वमिति. तथा धर्मास्तिकाये यस्मिन् समये संख्येयपरमाणूनां चलनसहकारिता अन्यसमये असंख्येयाऽनंतानां एवं संख्येयत्वसहकारिताव्ययः असंख्येयानन्तसहकारिता-उत्पादः चलनसहकारित्वेन ध्रुवत्वं. एवमधर्मादिष्वपि ज्ञेयं, एवं सर्वगुणप्रवृत्तिषु इति चतुर्थः ॥

अर्थ—तथा के० तेमज वली सिद्धात्माने विषे केवलज्ञानगुणनी संपूर्ण प्रगटता छे ते यथार्थ जे कालें जे ज्ञेय जेम परिणमे ते कालें तेमज जाणे एहवो ज्ञेयनो ज्ञायक ते केवलज्ञान छे, जेम धर्मादि द्रव्य तथा घटपटादि ज्ञेय पदार्थ जे रीते परिणमे ते रीतेज केवलज्ञान जाणे ते जे समये घटज्ञान हतुं ते समयांतरे घटध्वंस थये कपालनुं ज्ञान थाय तेवारें घटप्रतिभासनो ध्वंस कपालप्रतिभासनो उत्पाद अने ज्ञाननो ध्रुवपणो एम दर्शनादि सर्वगुणनो प्रवर्त्तन जाणवो.

तथा धर्मास्तिकायने विषे जे समये संख्यातपरमाणुनो चलन सहकारिपणो हतो, फरी समयांतरे असंख्यातपरमा-णुने चलनसह्कारीपणो करे तेवारें संख्यातापरमाणु चलनसहकारतानो व्यय अने असंख्येयपरमाणुने चलनसहकार-

तानो उत्पाद अने चलनसहकारीपणे ध्रुव छे. एमज अधर्मास्तिकायादिकने विषे पण सर्वगुणनी प्रवृत्ति थाय छे. ए रीते द्रव्यनेविषे अनंता गुणनी प्रवृत्ति छे. इहां कोइ पुछशे जे धर्मास्तिकायमध्ये अनंताजीव तथा अनंतापरमाणु ते चलणसहकारी थाय एटलो चलनसहकारो छे, तो थोडाजीव अने थोडापरमाणुनें चलणसहकार करतां बीजो गुण कयो अणप्रवर्त्यो रह्यो ? एम कहे तेने उत्तर के निरावरण जे द्रव्य छे तेनो गुण अप्रवर्त्यो रहेज नही अने जीव पुद्गल जे आवी पहोता तेने सहकारें सर्व चलनसहकारी गुणना पर्याय ते प्रवर्त्तेज छे. केमके अलोकाकाशमध्ये जो अवगाहक जीव पुद्गल नथी तोपण अवगाहक दान गुणतो प्रवर्त्तेज छे. तेम धर्मास्तिकायादिकमां जीव पुद्गल थोडाने पोचवे-पण गुणतो वधो प्रवर्त्तेज छे, एम धारवो. ए रीतें गुण पर्यायनो उत्पाद व्यय ध्रुवरूप धर्म कहेवो. ए चोथुं रूप कह्युं.

तथा सर्वे पदार्थाः अस्तिनास्तित्वेन परिणामिनः तत्रास्तिभावानां स्वधर्माणां परिणामिकत्वेन उत्पादव्ययौ स्तः नास्तिभावानां परद्रव्यादीनां परावृत्तौ नास्तिभावानां परावृत्तित्वेनाप्युत्पादव्ययौ ध्रुवत्वं च अस्तिनास्तिद्वयो इति पञ्चमः ॥

अर्थ—तथा सर्व द्रव्यमां अस्ति तथा नास्ति ए बे स्वभाव परिणमि रह्या छे. तिहां जे अस्तिस्वभाव छे ते स्वद्रव्यादिकनो छे. ते जेवारें ज्ञानगुण घट जाणतो हतो तेवारें घटज्ञाननी अस्तिता हती अने तेज घटध्वंस थये कपाल ज्ञान थयुं ते वारें घटज्ञाननी अस्तितानो व्यय थयो अने कपालज्ञाननी अस्तितानो उत्पाद थयो, ए रीतें अस्तितानो

उत्पाद व्यय छे तेज रीतें नास्तितानो पण उत्पाद व्यय जाणवो. जे पहेली घटनास्तिता हती ते पछे घटध्वंसें कपाल नास्तिता थयी. एम परद्रव्यने पलटवे नास्तिता पलटे छे ते स्वगुणने परिणामिक कार्यने पलटवे करीने अस्तिता पलटे छे अने जिहां पलटवापणो तिहां उत्पाद व्यय थायज. एम द्रव्यमां सामान्य स्वभाव सर्व धर्म छे तेमां जेम संभवे तेम श्री प्रभुनी आज्ञायें उपयोग देइने उत्पाद व्ययपणो करवो अने अस्तिनास्तिपण ध्रुव छे ए पांचमो अधिकार कह्यो.

तथा पुनः अगुरुलघुपर्यायाणां षड्गुणहानिवृद्धिरूपाणां प्रतिद्रव्यं परिणमनात् नानाहानिव्यये-वृद्ध्युत्पादः वृद्धिव्यये हान्युत्पादः ध्रुवत्वं चागुरुलघुपर्यायाणां एवं सर्वद्रव्येषु ज्ञेयं "तत्त्वार्थ-वृत्तौ" आकाशाधिकारे यत्राप्यवगाहकजीवपुद्गलादिर्नास्ति तत्राप्यगुरुलघुपर्यायवर्त्तनयावश्यत्वे चानित्यताभ्युपेया ते च अन्ये अन्ये च भवन्ति अन्यथा तत्र नवोत्पादव्ययौ नापेक्षिकाविति न्यूनं एवं सल्लक्षणं स्यात् इति षष्ठः ॥

अर्थ—तथा के० तेमज वली सर्वद्रव्य तथा पर्याय ते अगुरुलघु धर्में संयुक्त होय द्रव्यने प्रदेशें अगुरुलघु अनंतो छे. ते अगुरुलघु समयें समयें प्रदेशें तथा पर्यायें कोइक वारें वृद्धि पामे कोइक वारें घटी जाय ते वधुघटु थवो छ छ प्रकारें छे. १ अनंत भाग हानि, २ असंख्यात भाग हानि, ३ संख्यात भाग हानि, ४ संख्यात गुण हानि, ५ असंख्यात गुण हानि, ६ अनंत गुण हानि, ए छ प्रकारें हानि तथा १ अनंत भाग वृद्धि, २ असंख्यात भाग वृद्धि, ३ संख्यात

भाग वृद्धि ४ संख्यात गुण वृद्धि, असंख्यात गुण वृद्धि, ६ अनंत गुण वृद्धि. ए छ प्रकारनी वृद्धि ते सर्वद्रव्यना सर्वप्रदेशें सर्वपर्यायमां थाय. एकप्रदेशमां कोइक समयें वधे छे कोइक समयें घटे छे जेम परमाणुमां वर्णादिक वधे घटे छे तेम अगुरुलघुपणो पण वधेघटे छे. हानिनो व्यय छे तो वृद्धिनो उत्पाद छे. अथवा वृद्धिनो व्यय छे तो हानिनो उत्पाद छे पण अगुरुलघु ध्रुवनो ध्रुव छे. एम सर्वद्रव्यने विषे जाणवो. तिहां तत्त्वार्थटीकामां आकाशद्रव्यना अधिकारे कह्युं छे ते लखियें छैयें. जिहां अलोकाकाशमध्ये अवगाहक जीव पुद्गलादिक द्रव्य नथी तिहां पण अगुरुलघुपर्यायवंतपणो अवश्य छे. ते अगुरुलघुनी अनित्यता अवश्य अंगीकारे छे अने ते अगुरुलघु ते पर्यायें तथा प्रदेशें अन्य अन्य के० बीजो बीजो थाय छे एटले पूर्व समयें अगुरुलघुनो व्यय अने बीजे समयें नवा अगुरुलघुनो उत्पाद छे. जो ए रीते नवो उत्पाद व्यय गवेषिये नही तो अलोकाकाशनें विषे सलक्षण न्यून के० ओछो पडे जे उत्पाद व्यय ध्रुवता संयुक्त ते सत् कहियें अने जे द्रव्य होय ते सत्पणा संयुक्तज होय. माटे अगुरुलघुनुं परिणमन, सर्वद्रव्यमां सर्वपर्यायमां सर्वप्रदेशमां छे ए अगुरुलघुनो उत्पाद व्यय कह्यो ए छठो अधिकार थयो.

तथा भगवतीटीकायां तथा च अस्तिपर्यायतः सामर्थ्यरूपा विशेषपर्यायास्ते चानन्तगुणास्ते प्रतिसमयं निमित्तभेदेन परावृत्तिरूपाः तत्र पूर्वविशेषपर्यायाणां नाशः अभिनवविशेषपर्यायाणामुत्पादः पर्यायवत्वे ध्रुवत्वं इत्यादि सर्वत्र ज्ञेयं इति सप्तमः ॥

अर्थ—तेमज वली अस्तिपर्यायथी विशेषपर्याय जे सामर्थ्यरूप ते अनंत गुणा छे ए भगवती सूत्रनी टीका मध्ये कह्यो छे. जे अस्तिपर्याय ते ज्ञानादिकगुणना अविभागरूप पर्याय छे. जे पर्याय पर्यायमां सर्वज्ञेय जाणवानुं सामर्थ्य छे ते विशेष पर्याय छे. तथा महाभाष्ये यावंतो ज्ञेयास्तावंतो ज्ञानपर्यायाः ए सामर्थ्यपर्यायगवेष्या छे, ए सामर्थ्यपर्याय ते ज्ञेयनें निमित्ते छे, ते ज्ञेय तो अनेक उपजे छे ने अनेक विणशे छे तेवारें विशेषपर्याय पण पलटे छे ते प्रतिसमयें निमित्त भेदनी परावृति पलटवेथी पूर्व विशेष पर्याय नाश थाय तथा अभिनव विशेषपर्यायनो उपजवो छे अने पर्यायनी अस्तिता ध्रुव छे. एम गुणपर्यायनो उत्पाद व्यय ध्रुवपणो ते सातमो छे ए अस्तिनास्ति स्वभाव वखाण्यो.

नित्यताऽभावे निरन्वयता कार्यस्य भवति कारणाभावता च भवति अनित्यताया अभावे ज्ञायकतादिशक्तेरभावः अर्थक्रियासंभवः तथा समस्तस्वभावपर्यायाधारभूतभव्यदेशानां स्वस्वक्षेत्रभेदरूपाणामेकत्वपिण्डीरूपापरत्यागः एकस्वभावः ॥ क्षेत्रकालभावानां भिन्नकार्यपरिणामानां भिन्नप्रभावरूपोऽनेकस्वभावः एकत्वाभावे सामान्याभावः ॥ अनेकत्वाभावे विशेषधर्माभावः स्वस्वामित्वव्याप्यव्यापकताप्यभावः ॥

अर्थ—एमज सर्व द्रव्यमां नित्यता तथा अनित्यता छे. ए नित्य अनित्यपणा विना द्रव्य कोइ नथी द्रव्यमां नित्यता न होय तो कार्यनो अन्वय कोने होय? एटले अमुककार्य ते अमुकद्रव्यें कर्यो एम कह्यो जाय नही माटे

द्रव्यमां नित्यता मानवाथीज अमुक द्रव्ये अमुक कार्य कर्यो एम कहेवाय छे माटे जो द्रव्यने नित्यपणेज मानियें तो गुणनुं कार्य ते द्रव्यनो कहेवाय अने गुण ते द्रव्य न कहेवाय अने जो द्रव्य नित्य होय तो कारणपणानो अभाव थाय माटे द्रव्यमां नित्यता मानवी अने जो द्रव्यमां अनित्यपणो न मानियें तो जाणंगआदेदेइनें सर्वद्रव्यना गुणरूप कार्यनो अभाव थइ जाय, अर्थक्रिया संभवे नहीं, एटले कोइक अनित्यपणो होय तो अर्थक्रियाने करे केमके करवा-पणो कोइक बीजापणो एटले नवापणो निपजाववो ते पूर्व पर्यायनो ध्वंस थयेथी थाय अने ते एकनो ध्वंस अने कोइक बीजा नवानो नीपजवो ते द्रव्यमां अनित्यपणो छे एटले नित्य स्वभाव तथा अनित्य स्वभाव ओलखाव्या. हवे एक स्वभाव तथा अनेक स्वभाव ओलखावे छे.

तथा के० तेमज समस्त के० सर्व जे स्वभाव अस्तित्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघु आदिक समस्तपर्याय गुणाविभागादिक ते सर्वनुं आधारभूत क्षेत्र ते प्रदेश छे ते स्व के० पोताना जे क्षेत्र ते सर्व भेदरूप जुदा जुदा छे एटले संख्याता प्रदेश भिन्न छे पण ते एक पिंडपणो क्विारें तजता नथी, सर्व प्रदेशमां अंतराल क्षेत्रपणो कोईवारें पामतो नथी जे अनंता स्वभाव, अनंत पर्याय, ते असंख्यात प्रदेश रूप तेनुं प्रमाण फिरतुं नथी एवो जे द्रव्यने विषे समुदाय पिंडपणो रहे छे ते एक स्वभाव कहियें. ते पंचास्तिकायमध्ये १ धर्म, २ अधर्म, ३ आकाश, ए त्रणद्रव्य एकेक छे अने जीवद्रव्य अनंता छे तेथी पुद्गलपरमाणु अनंत गुणा छे. ते एकजीव अनेकरूप नव नवा करे पण अंतर पडे नही ते माटे द्रव्यमध्ये एक स्वभाव छे.

क्षेत्र असंख्यातप्रदेश, काल उत्पादव्ययरूप, भाव पर्यायगुणनाअविभाग ते पोताना भिन्नकार्य परिणामी छे ते

सर्वनो भिन्न प्रवाह छे एटले सर्वनो कार्यपणो भिन्न छे ते माटे द्रव्यने सर्वस्वभाव पर्याय भेदें विचारतां द्रव्यमां अनेक स्वभाव पण छे. जो वस्तुमां एकपणानो अभाव मानियें तो सामान्यपणो रहे नही अने गुणनो पर्यायनो स्वामी आधार ते कोण थाय ? अने आधार विना गुणादि आधेय ते क्यां रहे ? ते माटे द्रव्यनो एकपणो छे. जो वस्तुमां अनेकपणो न मानियें तो द्रव्य ते विशेष रहित थई जाय तेथी गुणनो अनेकपणो शीरीते द्रव्यनेविषे पामियें ? माटे द्रव्यमां गुणकार्यनो अनेकपणो पण छे तथा स्वस्वामित्व व्याप्यव्यापकभाव केम ठेरे ? जे गुण पर्याय ते स्व के० धन अने द्रव्य ते तेनो स्वामी छे अथवा द्रव्य ते व्याप्य अने गुणपर्याय ते व्यापक छे ए रीते द्रव्यमां एकस्वभाव तथा अनेक स्वभाव जाणवा.

स्वस्वकार्यभेदेन स्वभावभेदेन अगुरुलघुपर्यायभेदेन भेदस्वभावः अवस्थानाधारताद्यभेदेन अभेदस्वभावः भेदाभावे सर्वगुणपर्यायाणां सङ्करदोषः गुणगुणीलक्ष्यलक्षणः कार्यकारणतानाशः अभेदाभावे स्थानध्वंसः कस्यैते गुणाः को वा गुणी इत्याद्यभावः ॥

अर्थ—स्वस्व के० पोतपोताना कार्यने भेदें करी एटले जीवद्रव्यमां ज्ञानगुण ते जाणवानुं कार्य करे अने दर्शनगुण देखवानो कार्य करे तथा चारित्रगुण थिरतारमणतारूप कार्य करे तथा पुद्गलद्रव्य ते रूपपणो भिन्न कार्य करे, तथा वर्णपणो, गंधपणो रसपणो अने स्पर्शपणो, सर्वकार्य भिन्न छे. तथा स्वभावभेद ते अस्तिस्वभाव छति रूप छे. नित्यस्वभाव

अविनाशीपणो छे. अनित्यपणो ते पलटण रूप छे. एकपणो ते पिंडरूप छे. अनेकपणो ते प्रदेशादिक छे. इत्यादि स्वभावभेद तथा अगुरुलघुपर्याय प्रदेशेगुणाविभागें जूदो जूदो छे. कोई कोईनो तुल्य नथी, हानिवृद्धिरूप परिणमन छे. इत्यादि प्रकारे द्रव्यमां भेदस्वभाव छे.

तथा सर्वधर्मनो अवस्थान के० रेहेवो तेने आधारपणो कार्यनी तुलना के० सरिखापणो केवारें भिन्न पडतो नथी, तेमाटे द्रव्यमां अभेद स्वभाव छे.

जो द्रव्य गुणपर्यायमां भेदस्वभाव न होय तो सर्व संकर एकपणो थाय तेवारें कार्यनो भेद केम पडे ? ते माटे सर्व द्रव्य गुणपर्यायमां भेद सर्वभाव छे. जीव ते चेतना लक्षणवंत अजीव ते चेतना रहित ए भेद छे. ए जीवमध्ये जे धर्मास्तिकाय द्रव्य ते चलनसहकारनें करे छे, पण बीजा अजीवद्रव्य ते ए कार्य करता नथी. एम अधर्मास्तिकाय थिर-सहायगुणनें करे छे. आकाशअवगाह दाननें करे छे. पुद्गलरूपी आवरण स्कंधादि परिणमन करे छे. एम सर्वद्रव्यनें भेद छे, तोज भिन्न भिन्न द्रव्य कहेवाय छे. इहां कोइ कहेशेके जीवअनंता तेतो सरिखा छे तो सर्व जीवनें एकद्रव्य शा वास्ते न कह्यो ? तेने उत्तर जे रूपैया सोनारूपापणे अथवा धवलापणे तोलपणे सरिखा छे, पण वस्तुना पिंडपणे भिन्न छे, तेमाटे सोनेपण भिन्न भिन्न कहियें छैयें. तेम जीवने पण भिन्न भिन्न कहियें. वली उत्पाद व्ययनो फिरवो सर्वमां तेज रीतनो छे, पण पलटण ते एकरीतनो नथी, तथा अगुरुलघुनी हानिवृद्धिनो फिरवो पण सर्वद्रव्यमां पोत-पोताने छे, तेथी सर्वजीव तथा सर्व परमाणु भिन्न छे, ए भेदस्वभाव जाणवो.

"तन्मयतावस्थानाधारताद्यभेदेन अभेद स्वभावः" तथा तन्मयता अवस्थानतानो अभेद छे अने आधारतानो पण अभेदपणो छे ते अभेद स्वभाव छे.

तथा भेदनो जो अभावपणो मानियें एटले वस्तुमां भेदपणो न मानियें तो सर्वगुण तथा पर्यायनो संकर के० एकमेकपणो ए दोष लागे, तो गुणी कोण? तथा गुण कोण? द्रव्यकोण? एम गुणपर्यायने केइ द्रव्यनो कयो पर्याय एम वेहेंचण थाय नही. गुण तथा गुणी तथा जे ओलखवा योग्य लक्षण तेनुं चिह्न तथा कारणधर्म तथा कार्यधर्मता ए बे जुदा पडे नही. कार्यधर्म तथा कारणधर्मनो नाशथाय माटे वस्तुमां भेद स्वभाव मानवो.

तथा जो वस्तुमां अभेदपणो न मानियें तो स्थानध्वंस थाय छे जे स्थान कोण? अने ते स्थानकमां रहे ते कोण छे? इत्यादिकनो अभाव थाय छे. एम विचारतां सर्वथा एकपणो मानतां कोण गुणी? अने कोण गुण? एम ओलखाण न थाय. ए रीतें भेदाभेद स्वभाव वस्तुमां मानवा.

परिणामिकत्वे उत्तरोत्तरपर्यायपरिणमनरूपो भव्यस्वभावः तथा तत्त्वार्थवृत्तौ इह तु भावे द्रव्यं भव्यं भवनमिति गुणपर्यायाश्च भवनसमवस्थानमात्रका एव उत्थितासीनोत्कुटकजाग्रतशयितपुरुषवत्तद्वच्च वृत्त्यंतरव्यक्तिरूपेणोपदिश्यते, जायते, अस्ति विपरिणमते, वर्द्धते, अपक्षीयते, विनश्यतीति पिण्डातिरिक्त वृत्त्यंतरावस्थाप्रकाशतायां तु जायते इत्युच्यते सव्यापारैश्च

भवनवृत्तिः अस्ति इत्यनेन निर्व्यापारात्मसत्ताऽऽख्यायते भवनवृत्तिरुदासीना अस्तिशब्दस्य निपातत्वात् विपरिणमते इत्यनेन तिरोभूतात्मरूपस्यानुच्छिन्नतथावृत्तिकस्य रूपान्तरेण भवनं यथा क्षीरं दधिभावेन परिणमते. विकारान्तरवृत्त्या भवनवत्तिष्ठते वृत्त्यन्तरव्यक्तिहेतुभाववृत्तिर्वा विपरिणामः वर्द्धत इत्यनेन तूपचयरूपः प्रवर्तते यथाङ्कुरो वर्द्धते उपचयवत् परिणामरूपेण भवनवृत्तिर्व्यज्यते अपक्षीयते इत्यनेन तु तस्यैव परिणामस्यापचयवृत्तिराख्यायते दुर्बलीभवत् पुरुषवत् पुरुषवदपचयरूप भवनवृत्त्यन्तरव्यक्तिरुच्यते विनश्यति इत्यनेनाविर्भूतभवनवृत्तिस्तिरोभवनमुच्यते यथा विनष्टो घटः प्रतिविशिष्टसमवस्थानात्मिकाभवनवृत्तिस्तिरोभूता नत्वभावस्यैव जाता कपालाद्युत्तरभवनवृत्त्यन्तरक्रमाविच्छिन्नरूपत्वादित्येवमादिभिराकारैर्द्रव्याण्येव भवनलक्षणान्युपदिश्यन्ते, त्रिकालमूलावस्थाया अपरित्यागरूपोऽभव्यस्वभावः, भव्यत्वाभावविशेषगुणानामप्रवृत्तिः अभव्यत्वाभावे द्रव्यान्तरापत्तिः ॥

अर्थ—हवे भव्यस्वभाव तथा अभव्यस्वभाव कहे छे. जीवाजीवादिक द्रव्य छे ते परिणामि छे. समयें समयें नवा

नवा परिणामें परिणमे छे. तिहां पूर्वपर्यायने विनाशे अने उत्तरोत्तर नवा नवा पर्यायने प्रगटवे एवी जे द्रव्यनी परिणति तेनुं मूलकारण ते भवस्थामात्र कहियें. तिहां तत्त्वार्थटीका मध्ये कह्यो छे. इहां द्रव्यानुयोगने विषे भाव धर्मने विषे एटले गुण पर्यायने विषे द्रव्य ते भव्य के० भवन थयो एटले नवो नीपजवो ते भवन, इति के० एम वस्तुना गुणपर्याय जे छे ते भवन के० नवो थवारूप समवस्थान मात्र छे एटले नवा नवा थावारूप छे. तिहां दृष्टांत कहे छे, जे पुरुष उत्थित के० ऊठ्यो आसीन के० फरी तेहिज बेठो, बेसवुं ते पद्मासन कहियें, अथवा उकडवुं ते आसनसहित सूवुं जेम इत्यादिक पर्यायें ते पुरुष थाय छे तेम तेहज वृत्त्यंतर के० पूर्व पर्यायनो विनाश अने उत्तर पर्यायनो उपजवो ते वृत्त्यंतर कहियें, वृत्त्यंतर व्यक्तिरूपपणे उपदेशे छे ते भवनधर्मनी प्रवृत्ति कहे छे, जायते के० नवो उपजे अस्ति के० छतिपणे रहे. विपरिणमते के० बीजापणे परिणमे वली सामर्थ्य धर्म वधे अने अपक्षीयते के० घटे विनश्यति के० विनाश पामे पिंड के० समुदायपणो तेथी अतिरिक्त के० बीजी वृत्ति जे गुणनी प्रवृत्त्यंतरनी अवस्थाने प्रकाश थवे करीने जे भवनपणो थाय एटले ठेरी जे भवनवृत्ति ते सव्यापार छे पण निर्व्यापार नथी.

अस्ति ए वचने निर्व्यापार आत्मशक्ति छे ते कहियें छैयें. ते पण भवनवृत्तिथी उदासीन छे एटले भवनवृत्तिने ग्रहण करती नथी. अस्ति शब्दने निपातपणो छे, विपरिणमते ए वचने तिरोभूत के० अणप्रगटी जे वस्तु तेमां तद्रूपपणे अनुच्छिन्न के० विच्छेद गई. तथा वृत्तिकस्य के० ते रीतें वर्तति आत्मशक्ति तेनो रूपांतरें थवो ते भवन कहियें. तिहां दृष्टांत जेम क्षीर ते दूध दधिभावें परिणमे, विकारांतरे थवो ते रीतें रहे ए भवनधर्म कहियें. जे ज्ञानादिपर्यायमां अनं-

तज्ञेय जाणवानी शक्ति छे पण जे ज्ञेय जे रीतें परिणमे ते रीतें ज्ञानगुण प्रवर्ते ए ज्ञानगुणनुं प्रवर्तन ते प्रतिसमयें विपरिणामपणं परिणमन छे. ए पण भवन धर्म छे. वली वृत्यंतरवर्तने अन्यपणे व्यक्तिने हेतु करणे जे भवांतरे वर्तवो ते विपरिणाम कहियें. तथा वली वर्द्धते के० वधे ए वचने उपचयरूपपणे प्रवर्ते जेम अंकुर वधे छे तेम वर्णादिक पुद्गलना गुण उपचयपणे वधे ए ऊपचयरूप भवनता वृत्ति व्यज्यते के० प्रगट करियें छैयें.

एम गुणने कार्यांतरपणे परिणमनें द्रव्यमां भवन धर्म छे "अपक्षीयते" ए वचने करीने तु के० वली तेहिज परिणामनो ऊणो थवो अथवा टलवो कहियें, दुर्बल थता पुरुषनी परें, जेम पुरुष दुर्बल थाय तेम पर्यायने घटवे द्रव्य प्रमाणादिक तथा ते समयें अगुरुलघु पर्याय घटवे ते दुर्बल थवुं ते रूप जे भवनवृत्तिने अंतरे व्यक्ति के० प्रगटता कहि छे 'तथा विनश्यति' एम कहेवाथी आविर्भूत के० प्रगट थयो जे भवनधर्मनो वर्तवो तेनो तिरोभाव थयो कहियें. जेम विणस्यो घट जे मृत्पिंडने विषे ते चक्रादि कारणे प्रगट थयो, जे घट तेने प्रध्वंसें विनाश कहियें. एम द्रव्यने विषे कार्य करवारूप जे पर्याय तेने तिरोभावें अन्यपणे कार्यकरण रीते समवस्थान जे रहेवुं ते समयें ते भवनवृत्ति कहियें. तथा तिरोभावपणाने अभावें थावुं जे कपालादिक उत्तर भवन तेपणे वर्त्तवुं ए पण भवन धर्म छे. एम अनुक्रमे अविच्छिन्न निरंतर रूपें इत्यादिक अनेक आकारें द्रव्य तेज भवन लक्षण कहियें. ए भव्य स्वभाव जाणवो द्रव्यनेविषे जे अस्तित्व, वस्तुत्व, प्रमयेत्व, अगुरुलघुत्वादिक धर्म, ते त्रणे कालमां मूल अवस्थाने अपरित्यागे के० तजता नथी.

तेहिज रूपपणे रहे. एहवा जेटला धर्म ते अभव्यस्वभाव जाणवो, जे अनेक उत्पाद व्ययने परिणमने फिरवे फिरे पण जीवनो जीवपणो पलटाय नही तेमज अजीवनो अजीवपणो पलटाय नही ए सर्व अभव्य स्वभाव जाणवो.

हवे ए बे स्वभाव जो द्रव्यमां न मानियें तो शो दोष थाय ? ते कहे छे. जो द्रव्यने विषे भव्यपणो न मानियें तो द्रव्यना जे विशेष गुण गतिसहकार, स्थितिसहकार, अवगाह दान, ज्ञायकता, वर्णादि जे पंचास्तिकायना विशेष गुण तेनी प्रवृत्ति न थाय, अने प्रवृत्ति विना कार्यनो करवो न थाय अने कार्यने अणकरवे द्रव्यनो अगर्थपणो थाय, ते माटे भव्य स्वभाव छे.

जो द्रव्यने विषे अभवनरूप अभव्य स्वभाव न होय अने एकलो भवन स्वभावज होय तो नवा नवापणे थवे ते द्रव्य पलटीने अन्य द्रव्य थयी जाय ते माटे द्रव्यत्व सत्व प्रमयेत्वादि धर्म अभव्यपणो छे तेथीज द्रव्य पलटतो नथी तेमनो तेमज रहे छे ए अभव्यस्वभाव छे.

वचनगोचरा ये धर्मास्ते वक्तव्या, इतरे अवक्तव्याः । तत्राक्षराः संख्येयाः तत्सन्निपाता असंख्येयाः तद्गोचरा भावाः भावश्रुतगम्याः अनन्तगुणाः वक्तव्याभावे श्रुताग्रहणत्वापत्तिः अवक्तव्याभावे अतीतानागतपर्यायाणां कारणतायोग्यतारूपाणामभावः सर्वकार्याणां निराधारताऽऽपत्तिश्च सर्वेषां पदार्थानां ये विशेषगुणाश्चलनस्थित्यवगाहसहकारपूरणगलनचेतनादयस्ते पर-

मगुणाः ॥ शेषाः साधारणाः, साधारणासाधारणगुणास्तेषां तदनुयायिप्रवृत्तिहेतुः परमस्वभावः इत्यादयः सामान्यस्वभावाः ॥

अर्थ—आत्मानो वीर्यनामा गुण तेना अविभाग जे वीर्यांतराय कर्म्मे आवर्या छे तेज वीर्यांतरायने क्षयोपशमें तथा क्षय थवाथी प्रगट्यो जे वीर्यधर्म तेणे भाषापर्याप्ति नामकर्मने उदयें लिवराया जे भाषावर्गणानां पुद्गल ते शब्दपणे परिणमे ते शब्द पुद्गल खंध छे, पण श्रोताजनने ज्ञानना हेतु छे एटले जेमां जे गुण न होय ते गुणनुं कारण पण थाय नही एम जे कहे छे ते मृषा छे, केमके जे निमित्तकारण होय तेमां गुण होय किंवा न पण होय, अने उपादान कारणमां ते गुणना कारणतापणे तथा योग्यतापणे नियामक छे ते वचनयोगेंज ग्रहवाय एवा जे वस्तुमां धर्म छे तेने वक्तव्य धर्म कहियें अने तेथी इतर के० जुदा जे धर्मास्तिकाय द्रव्यमां अनेकधर्म छे ते वचनमां ग्रहवाता नथी, तेवा सर्वधर्म अवक्तव्य कहियें. ते वक्तव्यधर्मथी अवक्तव्यधर्म अनंतगुणा छे. वचनतो संख्याता छे पण ते वचनोमां एवो सामर्थ्य छे जे अवक्तव्यधर्म सर्वनो ज्ञानपणो थाय. उक्तं च अभिलप्पा जे भावा, अणंतभागो य अणभिलप्पाणं, अभिलप्पस्साणंतो, भागो सुए निबद्धो अ ॥ १ ॥ तत्र के० तिहां अक्षर संख्याता छे ते अक्षरना सन्निपात संयोगीभाव असंख्याता छे ते अक्षर संनिपातने ग्रहवाय एवा जे पदार्थादिकना भाव ते अनंतगुणा छे, तेथी अवक्तव्य भाव अनंतगुणा छे, जे मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अभिलाप्यभावनो परोक्षप्रमाणे ग्राहक छे. अवधिज्ञान ते पुद्गलनो प्रत्यक्षप्रमाणे जाणग छे, पण एक परमाणुना सर्वपर्यायने जाणे नही. केटलाक पर्यायने जाणे ते पण असंख्यात समयें जाणे अने केवलज्ञान ए

छ द्रव्यना सर्वपर्यायने एकसमयमां प्रत्यक्ष जाणे. माटे जो द्रव्यमां वक्तव्यपणो न होयतो श्रुतज्ञाने ग्रहणथाय नही अने जे ग्रंथाभ्यास, उपदेशादिक, सर्वकाम थाय छे तेतो एम नथी माटे द्रव्यमां व्यक्तव्यपणो छे.

अवक्तव्याभावे के० अवक्तव्यपणाने न मानियें तो अतीतपर्याय ते वस्तुमां कारणतानी परंपरामां रह्या छे, तथा अनागतपर्याय सर्व योग्यतामां रह्या छे ते सर्वनो अभाव थाय, तेवारें वस्तुमां वर्तमानपर्यायनी छति पामियें तेथी अतीत अनागतनो ज्ञान थाय नही, माटे अवक्तव्यस्वभाव अवश्य मानवो अने वर्त्तमान सर्वकार्य ते निराधार थइ जाय अने द्रव्यमां एकसमयमां अनंता कारण छे ते अनंता कारणना अनंता कार्य धर्म छे अने अनंता कार्यना अनंता कारणपरंपरानुं ज्ञान ते केवलीने छे अने वर्तमानकालें कारणधर्म तथा कार्यधर्मथी अनंतगुणा कारण कार्यनी योग्यतारूप सत्ता छे ते कोइना अविभाग नथी पण अविभागी जे ज्ञानादिक गुण तेमां अनंता कारणधर्म अनंता कार्यधर्म उपजवानी योग्यतारूप सत्ता छे ते सर्व अवक्तव्यरूप छे.

हवे परम स्वभावनुं स्वरूप कहे छे. सर्व जे धर्मास्तिकायादिक पदार्थ तेना विशेष गुण जे धर्मास्तिकायनो चलन सहकारीपणो तथा अधर्मास्तिकायनो स्थितिसहाय आकाशास्तिकायनो अवगाहक तथा पुद्गलद्रव्यनो पूरणगलन, जीव द्रव्यनो चेतनालक्षण, ए सर्व द्रव्यना विशेषगुण कह्या. एम लक्षणरूप तथा द्रव्यांतरथी भिन्न पाडवानुं मूल कारण ते परम प्रकृष्ट गुण कहियें. ए प्रधान गुणने अनुयायी बीजा जे साधारण गुण ते गुण पंचास्तिकायमां पामियें. तेना नाम अविनाशीपणो, अखंडपणो, नित्यत्वादिक धर्म ए पंचास्तिकायने सरिखा छे ते माटे साधारण गुण तथा पंचा-

स्तिकायमां कोइक अस्तिकायमां पामियें. कोइकमां न पामियें ते गुणने साधारण असाधारण कहियें, ते सर्व गुणने विषे विशेषगुणने अनुयायि प्रवर्ते छे ते प्रवर्त्तनना कारण द्रव्यमां एक परमस्वभाव पणो छे, ते परमस्वभावने परिणमने द्रव्यना सर्वगुण मुख्य गुणने अनुगमेज प्रवर्त्ते. ते परमस्वभाव सर्वद्रव्यने विषे छे एटले तेर सामान्य स्वभाव कह्या. वली अनेकांतजयपताकामां कह्या छे.

तथास्तित्व, नास्तित्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्व, असर्वगतत्व, प्रदेशवत्त्वादिभावाः पुनः तत्त्वार्थटीकायां पुनरप्यादिग्रहणं कुर्वन् ज्ञापयत्यत्रानन्तधर्मत्वं तत्राशक्तः प्रख्यापयितुं सर्वे धर्माः प्रतिपदं प्रवचनत्वेन पुंसा यथासंभवमायोजनीयाः क्रियावत्त्वं पर्यायोपयोगिता प्रदेशाष्टकनिश्चलता एवंप्रकाराः संति भूयांसः अनादिपरिणामिका भवन्ति जीवस्वभावा धर्मादिभिस्तु समाना इति विशेषः ।

अर्थ—तेमज अस्तिपणो, नास्तिपणो, कर्त्तापणो, भोक्तापणो, गुणवंतपणो, असर्वव्यापिपणो, प्रदेशवंतपणो, इत्यादि. अनंतस्वभाववंत द्रव्य छे. तेमज तत्त्वार्थ टीकामध्ये परिणामिक भावना भेद वखाणतां कह्यो छे. पुनरपि आदि शब्दना ग्रहण करतां एम जणावे छे जे वस्तु अनंतधर्मवंत छे ते सर्व विस्तारी शके नही तो पण द्रव्य द्रव्यने विषे प्रवचनना जाण पुरुषें जेम संभवे तेम धर्म जोडवा. तथा क्रियावंतपणो जे ज्ञानादिक गुण ते लोकालोक जाणवाने प्रति समयें प्रवर्त्ते छे. श्री भाष्यकारें ज्ञानादि गुण ते करण अने तेज गुणनी प्रवृत्ति ते क्रिया जाणवी तथा देखवो ते कार्य

एम धर्मास्तिकायादिकना सर्वे गुण ते त्रण परिणतियें परिणामी छे, ते माटे पंचास्तिकाय ते अर्थक्रिया करे छे, ते क्रियावंतपणो जाणवो. सर्वपर्यायनो उपयोगीपणो ए पण जीवस्वभाव छे तथा प्रदेशाष्टकनी निश्चलता ए पण जीवनो स्वभाव छे. तिहां धर्माधर्म अने आकाश ए त्रण अस्तिकायना प्रदेश अनादि अनंतकाल अवस्थितपणे छे. पुद्गलने चलणपणो सदा सर्वदा छे. पुद्गलपरमाणु तथा पुद्गलस्कंध ते संख्यातो काल अथवा असंख्यातो काल एकक्षेत्रे रहे पण पछे अवश्य चल थाय. तथा जीवद्रव्यने सकर्मा संसारीपणे क्षेत्रथी क्षेत्रांतर गमन भवथी भवांतर गमनरूप चलता छे, ते जीवने सम्यक्दर्शन सम्यक्ज्ञान अने सम्यक्चारित्रने प्रगटवे सर्व परभावभोगीपणो निवारवे आत्मस्वरूप निरधारण स्वरूप भासन स्वरूप परिणमने करवे, स्वरूप एकत्वें, स्वधर्मकर्त्ता स्वधर्मभोक्तापणे, सकलपरभाव तजवे, निरावरण, निःसंग, निरामय, निर्द्वंद्व, निष्कलंक, निर्मल, स्वीय अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतचारित्र, अरूपी, अव्याबाध, परमानंदमयी, सिद्धात्मा, सिद्धक्षेत्रे रह्या ते सादिअनंतकाल स्थिर छे. सकलप्रदेश स्थिर छे, अने संसारी जीव तेना आठ प्रदेश सदा सर्वदा स्थिर छे. ते आठप्रदेश निरावरणे तथा आचारांगनी टीका शैलंगाचार्यकृत तेना लोकविजयाध्ययनने प्रथमोद्देशके तदनेन पंचदशविधेनापि योगेनात्मा अष्टौ प्रदेशान् विहाय तप्तभाजनोदकवदुद्वर्त्तमानैः सर्वैरेवात्मप्रदेशैरात्मप्रदेशावष्टब्धाकाशस्थं कार्मणशरीरयोग्यं कर्मदलिकं यद् बध्नाति तत् प्रयोगकर्मेत्युच्यते.

एटले आठ प्रदेशे कर्म लागता नथी. इहां कोइ पुछे जे आठ प्रदेश निरावरण छे तो लोकालोक केम जाणता नथी ? तिहां उत्तर जे आत्म द्रव्यनी जे गुणप्रवृत्ति ते सर्वप्रदेशमिले प्रवर्त्ते तो तेमां ए आठ प्रदेश अल्प छे तेथी आठ प्रदेशमां

सर्वगुण निरावरण छे पण कार्य करी शकता नथी. जेम अग्निनुं अत्यंत सूक्ष्म कणीयुं होय तेमां दाहक पाचक प्रकाशक गुण छे पण अल्पता माटे दाहकादिकार्य करी शकतुं नथी.

वली कोइ पुछे जे ए आ अष्ट प्रदेश ते निरावरण केम रही शक्या ? तेनुं उत्तर जे चलप्रदेश होय तेने कर्म लागे पण अचलप्रदेशने कर्म लागे नही. एम भगवतीसूत्रे कह्युं छे. जे एअइ, वेअइ, चलइ, फंदइ, घट्टइ, से बंधइ, ए पाठ छे ते माटे जे चल होय ते बंधाय अने आठ प्रदेश तो अचल छे. तेथी ए आठ प्रदेशने बंध नथी, तथा कार्याभ्यासें प्रदेश भेला थाय तेथी प्रदेशना गुण पण तिहां ते कार्य करवाने प्रवर्त्ते छे तथा जे द्रव्यनो जे गुण जे प्रदेशें होय ते गुण ते प्रदेश मूकी अन्य क्षेत्रें जाय नही तथा जीवना आठ प्रदेश सर्वथा निरावरण छे. बीजा प्रदेशे अक्षरनो अनंतमो भाग चेतना सर्वदा उघाडी छे. ए रीतें संति के० छे. घणा अनादि परिणामिकभाव ते भवंति के० होय. अनादि परिणामिकभाव छे ते जीवना भाव छे अने सप्रदेशादिक धर्मास्तिकाय प्रमुखने विषे समान छे एम जाणवो. इत्यादिक विशेष स्वभाव छे.

भिन्नभिन्नपर्यायप्रवर्त्तनस्वकार्यकरणसहकारभूताः पर्यायानुगतपरिणामविशेषस्वभावाः ते च के, १ परिणामिकता, २ कर्त्तृता, ३ ज्ञायकता, ४ ग्राहकता, ५ भोक्तृता, ६ रक्षणता, ७ व्याप्यव्यापकता, ८ आधाराधेयता, ९ जन्यजनकता, १० अगुरुलघुता; ११ विभूतकारणता, १२ का-

रकता, १३ प्रभुता, १४ भावुकता, १५ अभावुकता, १६ स्वकार्यता, १७ सप्रदेशता, १८ गतिस्वभावता, १९ स्थितिस्वभावता, २० अवगाहकस्वभावता, २१ अखण्डता, २२ अचलता, २३ असङ्गता, २४ अक्रियता, २५ सक्रियता इत्यादि स्वीयोपकरणप्रवृत्तिनैमित्तिकाः "उक्तं च सम्मतौ" आरोपोपचारेण यद्यदपेक्षते तत्र वस्तुधर्मः उपाधिताभवनात् न चोपाधिर्वस्तुसत्ता इति ॥

अर्थ—हवे विशेष स्वभाव कहे छे. भिन्नभिन्न जे पर्याय छे तेनुं कार्य कारणपणे जे प्रवर्त्तन तेना सहकारभूत जे पर्यायानुगत परिणामि एवा जे स्वभाव ते विशेष स्वभाव कहियें. तेना अनेक भेद छे. ते श्रीहरिभद्रसूरिकृत शास्त्रवार्तासमुच्चय ग्रंथमां कह्या छे ते कहे छे.

१ सर्व द्रव्यने पोताना गुण समय समयमां कार्य करवे प्रवर्त्ते ते भिन्नभिन्न परिणामे परिणमे ते सर्व पोताना गुण तेने कारणिक छे ते परिणामिकपणो कहियें, २ तत्र कर्तृत्वं जीवस्य नान्येषां तिहां आत्मा कर्त्ता छे एटले कर्त्तापणो जीव द्रव्यने विषे छे. "अप्पा कत्ता विकत्ता य" इति उत्तराध्ययनवचनात्, ३ ज्ञायकता जाणपणानी शक्ति जीवने विषे छे. ज्ञानलक्षण जीव छे. ते माटे गिन्हई कायिएणं इति आवश्यकनिर्युक्तिवचनात्, ४ ग्राहकशक्ति पण जीवने छे. गृह्णातीति क्रियानो कर्त्ता जीव छे, ५ भोक्ताशक्ति पण जीवमां छे. "जो कुणइ सो भुंजइ यः कर्त्ता स एव भोक्ता" इति वचनात्. १ रक्षणता, २ व्यापकता, ३ आधाराधेयता, ४ जन्यजनकता तत्त्वार्थवृत्ति मध्ये छे तथा अगुरुलघुता, विभुता, कर-

णता, कार्यता, कारकता, ए शक्तिनी व्याख्या श्रीविशेषावश्यकें छे, भावुकता तथा अभावुकता शक्ति ते श्रीहरिभद्रसूरिकृत भावुक नामे प्रकरण मध्ये कहि छे.

एम केटलीक शक्ति जैनना तर्कग्रंथो जे अनेकांतजयपताका सम्मति प्रमुखमां छे तथा ऊर्ध्वप्रचयशक्ति अने तिर्यक्प्रचयशक्ति, ओघशक्ति, समुचितशक्ति, ए सर्व संमतिग्रंथने विषे छे. तथा जे द्विगुणी आत्मा माने ते सर्वधर्म शक्तिरूप ज माने छे तेणे दानादिकलब्धि अव्याबाधसुख प्रमुख शक्ति मानी छे. इहां व्याख्यांतरे जे गुणकरण छे तेने कर्त्तादिरूपणो ते सामर्थ्य छे, जाणवो देखवो ते कार्य छे, केटलीक शक्ति जीवमांज छे, अने केटलीक पंचास्तिकाय मध्ये छे. तथा देवसेनकृत नयचक्रमध्ये जीवने अचेतन स्वभाव, मूर्त स्वभाव, तथा पुद्गल परमाणुने चेतन स्वभाव, अमूर्त स्वभाव कह्या ते असत् छे, एतो आरोपपणे कोइक कहे ते कथनमात्र जाणवो. पण ए वात छतीमां नथी, जे धर्म आरोपें तथा उपचारें गवेषाय ते वस्तुनो धर्म नथी. उपाधिथी थाय छे, ते माटे जे उपाधि ते वस्तुनी सत्ता नथी एम धारवुं.

धर्मास्तिकाये अमूर्त्ताचेतनाक्रियगतिसहायादयो गुणाः। अधर्मास्तिकाये अमूर्त्ता चेतनाक्रियस्थितिसहकारादयो गुणाः। आकाशास्तिकाये अमूर्त्ताचेतनाक्रियावगाहनादयो गुणाः। पुद्गलास्तिकाये मूर्त्ताचेतनसक्रियपूरणगलनादयो वर्णगन्धरसस्पर्शादयो गुणाः। जीवास्तिकाये ज्ञानदर्शनचारित्रवीर्याऽव्याबाधामूर्त्ताऽगुरुलघ्वनवगाहादयो गुणाः। एवं प्रतिद्रव्यं गुणानामनन्तत्वं ज्ञेयम्॥

अर्थ—धर्मास्तिकायना गुण चार १ अरूपी, २ अचेतन, ३ अक्रिय, ४ गतिसहाय इत्यादि अनंतगुण छे. अधर्मास्तिकायना गुण चार १ अरूपी, २ अचेतन, ३ अक्रिय, ४ स्थितिसहाय, इत्यादि अनंतगुण छे. आकाशास्तिकायना गुण चार १ अरूपी, २ अचेतन, ३ अक्रिय, ४ अवगाहनादिक अनंतगुण छे. पुद्गलास्तिकायना गुण चार छे १ रूपी, २ अचेतन, ३ सक्रिय, ४ पूरणगलन. १ वर्ण, २ गंध, ३ रस, ४ स्पर्श इत्यादिक गुण अनंता छे. जीवास्तिकायने विषे १ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र, ४ वीर्य, ५ अव्याबाध, ६ अरूपी, ७ अगुरुलघु, ८ अनवगाहादिक अनंतगुण छे, ए रीतें द्रव्यनेविषे अनंतागुण जाणवा.

पर्यायाः षोढा द्रव्यपर्याया असंख्येयप्रदेशसिद्धत्वादयः । १ द्रव्यव्यञ्जनपर्यायाः द्रव्याणां विशेषगुणाश्चेतनादयश्चलनसहायादयश्च, २ गुणपर्यायाः गुणा विभागादयः ३ गुणव्यञ्जनपर्याया ज्ञायकादयः कार्यरूपाः मतिज्ञानादयः ज्ञानस्य, चक्षुर्दर्शनादयो दर्शनस्य, क्षमामार्दवादयः चारित्रस्य, वर्णगन्धरसस्पर्शादयो मूर्त्तस्य इत्यादि ४ स्वभावपर्याया अगुरुलघुविकाराः ते च द्वादशप्रकाराः षट्गुणहानिवृद्धिरूपाः अवाग्गोचराः एते पञ्च पर्यायाः सर्वद्रव्येषु, विभावपर्यायाः जीवे नरनारकादयः ॥ पुद्गले द्व्यणुकतोऽणंताणुकपर्यन्तास्कन्धाः

अर्थ—हवे नयज्ञान करवानो अधिकार कहे छे, तिहां द्रव्यास्तिकनयना मूल बे भेद छे. १ शुद्ध द्रव्यास्तिक, २ अशुद्ध द्रव्यास्तिक, अने देवसेनकृत पद्धतिमां द्रव्यास्तिकना दश भेद कर्या छे ते सर्व ए बे भेद मध्ये समाय छे, तथा ते सामान्य स्वभावमां समाणा छे ते माटे इहां न वखाण्या.

हवे पर्यायना छ भेद कहे छे तिहां प्रथम १ जे द्रव्यने विषे एकत्वपणे रह्या जे जीवादिकना असंख्याता प्रदेश तथा आकाशना अनंता प्रदेश ए द्रव्य पर्याय कहियें, २ सिद्धत्वादिक अखंडत्वादिक तथा द्रव्यनो व्यंजक के० प्रगटपणो जे माने छे ते द्रव्य व्यंजन पर्याय कहियें.

द्रव्यनो विशेष गुण जे अन्य द्रव्यमां नथी तेने विशेष गुण कहियें. ते जीवने चेतनादिक अने धर्मास्तिकायमां चलणसहकार तथा अधर्मास्तिकायमां स्थिरसहकार, आकाशमां अवगाहदान, पुद्गलमां पूरणगलणरूप ए सर्व द्रव्यनी भिन्नतांने प्रगट करे छे ते माटे ए धर्मने द्रव्य व्यंजन पर्याय कहियें.

३ एक गुणना अविभाग अनंता छे तेनो पिंडपणो ते गुणपर्याय कहिये ४ गुणव्यंजन पर्याय ते ज्ञाननो जाणंगपणो तथा चारित्रनो स्थिरतापणो इत्यादिक अथवा ज्ञानगुणना भेदांतर ज्ञानना भेद जे मतिज्ञानादिक पांच तथा दर्शनगुणना चक्षुदर्शनादिक भेद तथा चारित्र गुणना क्षमादिक भेद, पुद्गलनो रूपी गुण तेना भेद वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संस्थानादिक, अरूपी गुणना अवन्ने, अगंधे, अरसे, अफासे, इत्यादिक चार चार जाणवा ते गुण व्यंजन पर्याय, ५ स्वभाव पर्याय ते वस्तुनो कोइक स्वभावज एवो छे ते अगुरुलघुपणे छे. छ प्रकारनी वृद्धि तथा छ प्रकारनी हानि एवी रीते

चार प्रकारें परिणमे छे. इहां कोइ प्रेरकनो योग नथी. वस्तुने मूल धर्मनो हेतु छे. एनुं स्वरूप पुरुं वचनगोचर नथी. अनुभव गम्य नथी. केमके श्रीठाणांगसूत्रनी टीका मध्ये श्रुतज्ञान वृद्धिना सात अंग छे तिहां प्रथम सूत्रअंग, बीजुं निर्युक्ति अंग, ३ भाष्यअंग, ४ चूर्णिवालो सूत्रादि सर्वना अर्थ कहे छे. ५ टीका व्याख्या निरंतर ए पांच अंग तो ग्रंथरूप छे. तथा छठो अंग परंपरारूप छे तथा सातमुं अंग अनुभव ए साते कारणे विनय सहित भणतां सुणतां थकां, साचा अर्थ पामिने आत्मानुं ज्ञान निर्मल थाय. श्री भगवतीसूत्रे "गाथा" सुत्तत्थो खलु पढमो बीओ निज्जुत्तिमिसिओ भणिओ, तइयो अ निरवसेसो, एस विहि होइ अणुओगे, ए पांच पर्याय कह्या ते सर्व द्रव्य मध्ये छे.

विभाव पर्याय ते जीव तथा पुद्गल मध्येज छे, ते विभाव पर्याय जीवने नरनारकीपणुं पामवुं ते तथा पुद्गलनो द्व्यणुक त्र्यणुकादिक खंधनो मिलवुं, अनंताणुक पर्यंत अनंतपुद्गल स्कंधरूप ते विभाव पर्याय कहियें.

मेर्वाद्यनादिनित्यपर्यायाः चरमशरीरत्रिभागन्यूनावगाहनादयः सादिनित्यपर्यायाः सादिसान्तपर्याया भवशरीराध्यवसायादयः अनादिसान्तपर्याया भव्यत्वादयः तथा च निक्षेपाः सहजरूपा वस्तुनः पर्यायाः एवं चत्वारो वत्थुपज्जाया इति भाष्यवचनात् नामयुक्ते प्रति वस्तुनि निक्षेपचतुष्टयं युक्तम् उक्तं चानुयोगद्वारे जत्थ य जं जाणिज्जा, निक्खेवं निक्खिवे निरवसेसं, जत्थवि य नो जाणिज्जा, चउक्कयं निक्खिवे तत्थ, ॥१॥ तत्र नामनिक्षेपः स्थापनानिक्षेपः

द्रव्यनिक्षेपः भावनिक्षेपः तत्र नामनिक्षेपो द्विविधः सहजः साङ्केतिकश्च, स्थापनाऽपि द्विविधा सहजा आरोपजा च, द्रव्यनिक्षेपो द्विविधः आगमतो नोआगमतश्च तत्र आगमतः तदर्थ-ज्ञानानुपयुक्तः नोआगमतो ज्ञशरीरभव्यशरीरतद्व्यतिरिक्तभेदात्त्रिधा, भावनिक्षेपो द्विविधः आगमतो नोआगमतश्च तद्ज्ञानोपयुक्तः तद्गुणमयश्च वस्तु स्वधर्मयुक्तं तत्र निक्षेपा वस्तुनः स्वपर्याया धर्मभेदाः

अर्थ—पुद्गलनुं मेरुप्रमुख ते अनादिनित्यपर्याय छे. जीवनी सिद्धावस्था, सिद्धावगाहनादिक, ते सादिनित्यपर्याय छे, तथा भाव अने शरीर तथा अध्यवसाय ए त्रण प्रकारना योगस्थान जे वीर्यना क्षयोपशमथी ऊपना तेमां कषायस्थान जे चेतनानो क्षयोपशम कषायना उदयथी मिल्या अने संयमस्थान जे चारित्रनो क्षयोपशम परिणमी जे चेतनादिक गुण ए सर्व अध्यवसायस्थानक ते सादिसांतपर्याय छे, तथा सिद्धिगमनयोग्यता धर्म ते भव्यपणो ए पर्याय ते अनादि सांत छे, जे सिद्धत्वपणो प्रगटे भव्यत्वपर्यायनो विनाश छे ते माटे अनादिकालनो छे पण अंत थया सहित छे, माटे अनादि सांतपर्याय छे, एम पर्याय अनेक जाणवा.

तथा वस्तुमां सहजना जे चार निपेक्षा छे ते पण वस्तुना स्वपर्याय छे, ते श्रीविशेषावश्यकनी भाष्यमध्ये कह्यो छे. "चत्तारो वत्थुपज्जाया" ए वचन छे ते माटे स्वपर्याय कहियें. वली श्रीअनुयोगद्वारसूत्रमां कह्यो छे, जिहां जे वस्तुना

जेटला निक्षेपा जाणियें तिहां ते वस्तुना तेटला निक्षेपा करियें. कदाचित् वधता निक्षेपा भासनमां न आवे तोपण १ नाम, २ स्थापना, ३ द्रव्य, ४ भाव, ए चार निक्षेपा तो अवश्य करवा, तेमां नामनिक्षेपाना बे भेद छे.

१ सहजनाम, २ सांकेतिकनाम, ते कोइनो कर्यो नाम, तथा स्थापनना बे भेद छे. १ सहजस्थापना ते वस्तुनी अवगाहनारूप, २ आरोपस्थापना ते आरोपथी थई माटे कृत्रिम कहियें, आरोपजा कहियें. हवे द्रव्य निक्षेपाना बे भेद छे ते कहे छे, १ आगमथी द्रव्य निक्षेपो ते जे जे पुरुषना स्वरूपना जाणपणे हमणां ते उपयोगें नथी ते आत्मद्रव्यनिक्षेप जे वस्तु ते गुणसहित छे, पण हमणां तेपणे वर्तता नथी. तेहना त्रण भेद छे. १ ज्ञशरीर जेहना हता पण मरण पाम्या तेथी तेनुं शरीर जे ऋषभदेवना शरीरनी भक्ति श्रीजंबूद्वीप पन्नतीमां छे, २ भव्यशरीर ते हमणां तो गुणमय नथी पण गुणमय थशे, जेम अप्रमत्तामुनि, ए भव्यशरीर जाणवो, ३ तद्व्यतिरिक्त जे ते गुणे वर्ते छे पण ते उपयोगें हमणां वर्तता नथी.

भावनिक्षेपाना बे भेद १ आगमथी भावनिक्षेपो ते आगमना अर्थनो जाण वली ते उपयोगें वर्ते छे, २ नोआगमथी भावनिक्षेपो ते जेपणे ज्ञ वर्ते छे तेज रूप छे, ए रीतें निक्षेपा कहेवा.

ए चार निक्षेपामां पहेला त्रण निक्षेपा ते कारणरूप छे, अने चोथो भावनिक्षेपो ते कार्यरूप छे, ते भावनिक्षेपाने निपजावतां पहेला त्रण निक्षेपा प्रमाण छे नहीकां अप्रमाण छे. पहेला त्रण निक्षेपा द्रव्यनय छे. एक भावनिक्षेपो ते भावनय छे. भावनिक्षेपाने अणनिपजावतां एकली द्रव्यनी प्रवृत्ति ते निष्फल छे. एम श्रीआचारांगनी टीकामां लोकविजय अध्ययने कह्युं छे ते लखीये छैयें. "फलमेव गुणः फलगुणः फलं च क्रिया भवति तस्याश्च क्रियायाः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र-

रहिताया ऐहिकामुष्मिकार्थं प्रवृत्तायाः अनात्यंतिकोऽनैकान्तिको भवेत् फलं गुणोप्यगुणो भवति सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्र-
क्रिया यास्त्वेकान्तिकानाबाधसुखाख्यसिद्धिगुणोऽवाप्यते एतदुक्तं भवति सम्यग्दर्शनादिकैव क्रियासिद्धिः फलगुणेन फल-
वत्यपरा तु सांसारिकसुखफलाभ्यास एव फलाध्यारोपान्निष्फलेत्यर्थः"

एटले रत्नत्रयी परिणमन विना जे क्रिया करवी ते थकी संसारिक सुख थाय ते क्रिया निष्फल छे ए पाठ छे माटे भाव निक्षेपाना कारण विना पेहेला त्रणे निक्षेपा निष्फल छे निक्षेपा तो मूलगी वस्तुना पर्याय छे द्रव्यनो स्वधर्मज छे.

नयास्तु पदार्थज्ञाने ज्ञानांशाः तत्रानन्तधर्मात्मके वस्तुन्येकधर्मोन्नयनं ज्ञानं नयः तथा "रत्ना-करे" नीयते येन श्रुताख्यप्रमाणविषयीकृतस्यार्थस्यांशस्तदितरांशौदासीन्यतः स प्रतिपत्तुर-भिप्रायविशेषो नयः, स्वाभिप्रेतादंशादितरांशापलापी पुनर्नयाभासः, स व्याससमासाभ्यां द्विप्रकारः व्यासतोऽनेकविकल्पः समासतो द्विभेदः द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिकः तत्र द्रव्यार्थि-कश्चतुर्धा १ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्रभेदात्, पर्यायार्थिकस्त्रिधा, १ शब्द, २ समभिरूढ, ३ एवंभूतभेदात्,

अर्थ—जे नय छे ते पदार्थना ज्ञानने विषे ज्ञानना अंश छे. तिहां नयनुं लक्षण कहे छे. अनंत धर्मात्मक जे वस्तु एटले जीवादिक एक पदार्थमां अनंता धर्म छे तेनो जे एक धर्म गवेष्यो तो पण अन्य के० बीजा अनंता धर्म तेमां रह्या

छे तेनो उच्छेद नही अने ग्रहण पण नही एक धर्मनी मुख्यता करवी ते नय कहियें. ते नयना व्यास के० विस्तारथी अनेक भेद छे अने समास के० संक्षेपथी बे भेद छे १ द्रव्यार्थिक, २ पार्यायार्थिक, ते रत्नाकरावतारिकाग्रंथथी लखियें छैयें "द्रवति द्रोष्यति अदुद्रवत् तांस्तान् पर्यायानिति द्रव्यं तदेवार्थः सोऽस्ति यस्य विषयत्वेन स द्रव्यार्थिकः."

जे वर्त्तमान पर्यायने द्रवे छे अने आगामिककालें द्रवसे तथा अतीतकालें द्रवतो हतो ते द्रव्य कहियें तेज छे अर्थ प्रयोजन विषयपणे जेने ते द्रव्यार्थिक कहिये. एटले पर्याय ते जन्य अने द्रव्य ते जनक कह्यो तथा द्रव्य ते ध्रुव अने पर्याय ते उत्पाद विनाशरूप छे उक्तं च.

"पर्येति उत्पादविनाशौ प्राप्नोतीति पर्यायः स एवार्थः सोऽस्ति यस्यासौ पर्यायार्थिकः" जे उपजवा विणशवानो परि के० नवा नवापणे एति के० पामे तेज अर्थ प्रयोजन तेने पर्यायार्थिक कहियें. ते द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ए बे धर्मने द्रव्य तथा पर्याय कहियें.

इहां कोइक पुछे जे त्रीजो गुणार्थिक केम कहेता नथी ? ते वली रत्नाकरावतारिका मध्ये कह्यो छे "गुणस्य पर्याये एवान्तर्भूतत्वात् तेन पर्यायार्थिकेनैव तत् सङ्गृहात्."

जे गुण ते पर्यायने विषे अंतर्भूत छे ते पर्यायार्थिक मध्येज संग्रह्यो छे. ते पर्याय बे भेदे छे एक सहभावि बीजो क्रम-भावि. तेमां सहभावि ते गुण छे ते पर्यायने विषे अंतर्भूत छे, तिहां द्रव्य पर्यायथी व्यतिरिक्त सामान्य विशेष ए बे धर्म छे माटे सामान्य विशेष बे नयवत्ता केम कहेता नथी ? एम कोइ पुछे तेने उत्तर.

जे "द्रव्यपर्यायाभ्यां व्यतिरिक्तयो सामान्यविशेषयोरप्रसिद्धेः तथाहि द्विप्रकारं सामान्यमुक्तमूर्ध्वतासामान्यं तिर्यक्सामान्यं च तत्रोर्ध्वसामान्यं द्रव्यमेव तिर्यक्सामान्यं तु प्रतिव्यक्तिसदृशपरिणामलक्षणं व्यञ्जनपर्याय एव." ए पाठथी ऊर्ध्व सामान्य ते द्रव्यनो धर्म छे अने तिर्यक्सामान्य ते पर्याय धर्म छे "विशेषोऽपि वैसादृश्यविवर्त्तलक्षणं पर्याय एवान्तर्भवति नैताभ्यामधिकनयावकाशः"

विशेषपणे अनेक रीतें वर्तवानो लक्षण छे ते पर्यायने विषे अंतर्भाव छे ते माटे भिन्न नयनो अवकाश नथी. ए बे नय मध्येज अंतर्भाव छे. तेमां वली द्रव्यार्थिकना चार भेद छे १ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्र तथा पर्यायार्थिकना त्रण भेद छे १ शब्द, २ समभिरूढ, ३ एवंभूत.

विकल्पान्तरे ऋजुसूत्रस्य पर्यायार्थिकताप्यस्ति स नैगमस्त्रिप्रकारः आरोपांशसङ्कल्पभेदाद् विशेषावश्यके तूपचारस्य भिन्नग्रहणात् चतुर्विधः । न एके गमा आशयविशेषा यस्य स नैगमः तत्र चतुःप्रकार आरोपः द्रव्यारोपगुणारोपकालारोपकारणाद्यारोपभेदात् तत्र गुणे द्रव्यारोपः पञ्चास्तिकायवर्तनागुणस्य कालस्य द्रव्यकथनं एतद्गुणे द्रव्यारोपः १ ज्ञानमेवात्मा अत्र द्रव्ये गुणारोपः २ वर्त्तमानकाले अतीतकालारोपः अद्य दीपोत्सवे वीरनिर्वाणं, वर्तमाने अनागतकालारोपः अद्यैव पद्मनाभनिर्वाणं, एवं षड् भेदाः कारणे कार्यारोपः बाह्यक्रियाया धर्मत्वं धर्म-

कारणस्य धर्मत्वेन कथनं । सङ्कल्पो द्विविधः स्वपरिणामरूपः कार्यान्तरपरिणामश्च अंशोऽपि द्विविधः भिन्नोऽभिन्नश्चेत्यादि शतभेदो नैगमः ।

अर्थ—वली विकल्पांतरे ऋजुसूत्र ते पर्यायार्थिकमां पण कह्यो छे. केमके ए विकल्परूप नय छे ते माटे. तेमां नैगमना त्रण भेद छे १ आरोप, २ अंश, ३ संकल्प तथा विशेषावश्यकमां चोथो भेद पण उपचारपण कहे छे, नथी एक गमो अभिप्राय जेनो ते नैगमनय कहियें. एटले अनेक आशयी छे ते नैगमनयना चार भेद छे ते मध्ये आरोपना चार प्रकार छे. १ द्रव्यारोप, २ गुणारोप, ३ कालारोप, ४ कारणाद्यारोप.

१ तिहां गुणादिकने विषे द्रव्यपणो मानवो ते द्रव्यारोप. जेम वर्तना परिणाम ते पंचास्तिकायनो परिणमन धर्म छे तेने कालद्रव्य कहि बोलाव्यो ए काल ते भिन्न पिंडरूप द्रव्य नथी. पण आरोपें द्रव्य कह्यो छे माटे द्रव्यारोप अने द्रव्यने विषे गुणनो आरोप करवो. जेम ज्ञानगुण छे पण ज्ञानी तेज आत्मा एम ज्ञानने आत्मा कह्यो ते गुणनो आरोप कर्यो माटे गुणारोप. तथा जेम श्रीवीरनिर्वाण थया तेने तो घणो काळ गयो छे पण आज दीवालीना दीवसें वीरनो निर्वाण छे एम कहेवुं ए वर्त्तमानमां अतीतनो आरोप कर्यो. अथवा आज श्रीपद्मनाभ प्रभुनो निर्वाण छे, एम कहेवुं तेम वर्त्तमानने विषे अनागत कालनो आरोप छे. एवी रीतें वली अतीतना बे भेद छे तथा एवीज रीते अनागतना बे भेद छे अने वर्त्तमानना बे भेद ऊपर कह्या ते सर्व मली कालारोपना छ भेद जाणवा.

वली कारण विषे कार्यनो आरोप करवो ते कारण चार छे. १ उपादान कारण, २ निमित्त कारण, ३ असाधारण

कारण, ४ अपेक्षा कारण, तेमां बाह्यद्रव्यक्रिया ते साध्यसापेक्षवालाने धर्मनुं निमित्त कारण छे, तोपण एने धर्मकारण कहियें. तेमज श्रीतीर्थंकर मोक्षनुं कारण छे तेथी तेने तारयाणं कह्यो ते कारणने विषे कर्त्तापणानो आरोप कर्यो एम आरोपता अनेक प्रकारें छे. ते कारणाद्यारोप वली संकल्पनैगमना बे भेद छे १ स्वपरिणामरूप जे वीर्य चेतनानो जे नवो नवो क्षयोपशम ते लेवो. बीजो कार्यांतरं नवे नवं कार्यं नवा नवो उपयोग थाय ते ए बे भेद थया. तथा अंशनैगमना पण बे भेद छे, १ भिन्नांश ते जूदो अंशस्कंधादिकनो बीजो अभिन्नांश ते जे आत्माना प्रदेश तथा गुणना अविभाग इत्यादिक ए सर्व नैगमनयना भेद जाणवा एटले नैगमनय कह्यो.

सामान्यवस्तुसत्तासङ्ग्राहकः सङ्ग्रहः स द्विविधः सामान्यसङ्ग्रहो विशेषसङ्ग्रहश्च, सामान्यसङ्ग्रहो द्विविधः मूलत उत्तरतश्च, मूलतोऽस्तित्वादिभेदतः षड्विधः उत्तरतो जातिसमुदायभेदरूपः जातितः गवि गोत्वं, घटे घटत्वं, वनस्पतौ वनस्पतित्वं, समुदयतः सहकारात्मके वने सहकारवनं, मनुष्यसमूहे मनुष्यवृंदं, इत्यादि समुदायरूपः अथवा द्रव्यमिति सामान्यसङ्ग्रहः जीव इति विशेषसङ्ग्रहः तथा विशेषावश्यके "संगहणं संगिन्हइ संगिन्हंतेव तेण जं भेया तो संगहो संगिहिय पिंडियत्थं वउजस्स" संग्रहणं सामान्यरूपतया सर्ववस्तुनामाक्रोडनं सङ्ग्रहः अथवा सामान्यरूपतया सर्वं गृह्णातीति सङ्ग्रहः अथवा सर्वेऽपि भेदाः सामान्यरू-

पतया सङ्गृह्यन्ते अनेनेति सङ्ग्रहः अथवा संगृहीतं पिण्डितं तदेवार्थोऽभिधेयं यस्य तत् सङ्गृहीतपिण्डितार्थं एवंभूतं वचो यस्य सङ्ग्रहस्येति सङ्गृहीतपिण्डितं तत् किमुच्यते इत्याह संगहिय मागहीयं संपिंडियमेगजाइमाणीयं ॥ संगहियमणुगमो वा वइरे गोपिंडियं भणियं ॥१॥ सामान्याभिमुख्येन ग्रहणं सङ्गृहीतसङ्ग्रह उच्यते, पिण्डितं त्वेकजातिमानितमभिधीयते पिण्डितसङ्ग्रहः अथ सर्वव्यक्तिष्वनुगतस्य सामान्यस्य प्रतिपादनमनुगमसङ्ग्रहोऽभिधीयते व्यतिरेकस्तु तदितरधर्मनिषेधाद् ग्राह्यधर्मसङ्ग्रहकारकं व्यतिरेकसङ्ग्रहो भण्यते यथा जीवोजीव इति निषेधे जीवसङ्ग्रह एव जातः अतः १ सङ्ग्रह, २ पिण्डितार्थ, ३ अनुगम, ४ व्यतिरेकभेदाच्चतुर्विधः अथवा स्वसत्ताख्यं महासामान्यं संगृह्णाति इतरस्तु गोत्वादिकमवान्तरसामान्यं पिण्डितार्थमभिधीयते महासत्तारूपं अवान्तरसत्तारूपं "एगं निच्चं निरवयवमक्कियं सव्वगं च सामन्नं * एतत् महासामान्यं गवि गोत्वादिकमवान्तरसामान्यमिति संग्रहः ॥

---

* एकं सामान्यं सर्वत्र तस्यैव भावात् तथा नित्यं सामान्यं अविनाशात्तथा निरवयवं अदेशत्वात्, अक्रियं देशान्तरगमनाभावात् सर्वगतं च सामान्यं अक्रियत्वादिति ॥

अर्थ—हवे संग्रहनय कहे छे सामान्ये मूळ सर्व द्रव्य व्यापक नित्यत्वादिक सत्तापणे रह्या जे धर्म तेनो जे संग्रह करे ते संग्रह कहियें तेना बे भेद छे १ सामान्य संग्रह, २ विशेष संग्रह वळी सामान्य संग्रहना बे भेद छे १ मूळ सामान्य संग्रह, २ उत्तर सामान्य संग्रह वळी मूळ सामान्य संग्रहना अस्तित्वादिक छ भेद छे ते पूर्वे कह्या छे तथा उत्तर सामान्यना बे भेद छे, १ जातिसामान्य, २ समुदायसामान्य तिहां गायना समुदायमां गोत्वरूप जाति छे तथा घटसमुदायमां घटत्वपणो अने वनस्पतिने विषे वनस्पतित्वपणो ते जातिसामान्य कह्यो अने आंबाना समूहनें विष अंबवन कहे तथा मनुष्यना समूहमां मनुष्य ग्रहण थाय ते समुदाय सामान्य ए उत्तर सामान्य ते चक्षुदर्शन तथा अचक्षुदर्शनने ग्राहीक छे अने मूळ सामान्य ते अवधिदर्शन तथा केवळदर्शनथी ग्रहवाय छे अथवा १ सामान्यसंग्रह, २ विशेषसंग्रह तिहां छ द्रव्यना समुदायने द्रव्य कह्युं ए सामान्य संग्रह इहां सर्वनो ग्रहण थयो छे अने जीवने जीवद्रव्य कही अजीवद्रव्यथी जूदो भेद पाड्यो ए विशेषसंग्रह ए विशेषसंग्रहनो विस्तार घणो छे तथा विशेषावश्यकथी संग्रहनयना चार भेद ते लखियें छियें मूळ पाठमां कहेली गाथानो अर्थ छे.

संग्रहणं के० एकठो एकवचन मध्ये एक अध्यवसाय उपयोगमां समकालें ग्रहेवुं सामान्यरूपपणे सर्व वस्तुनो आकोडण ग्रहण करवो ते संग्रह कहियें अथवा सामान्यरूपपणे सर्व संग्रह करे ते संग्रह कहियें, अथवा जेथकी सर्व भेद सामान्यपणे ग्रहियें तेने संग्रह कहियें, अथवा संगृहीतं पिण्डितं के० जे वचनथी समुदायअर्थ ग्रहवाय ते संग्रह वचन कहियें तेना चार भेद छे. १ संगृहीत संग्रह, २ पिण्डित संग्रह, ३ अनुगम संग्रह, ४ व्यतिरेक संग्रह.

१ सामान्यपणे वहेंचण विना ग्रहण थाय एवो जे उपयोग अथवा एवुं वचन अथवा एवो धर्म कोइपण वस्तुने विशे होय तेने संगृहीत संग्रह कहियें.

२ अने एकजाति माटे एकपणो मानिने ते एकमध्ये सर्वनो ग्रहण थाय जेम "एगे आया" "एगे पुग्गले" इत्यादि वस्तु अनंति छे पण जाति एक माटे ग्रहवाय छे ते बीजो पिंडित संग्रह कहियें.

३ जे अनेक जीवरूप अनेक व्यक्ति छे ते सर्वमां पामियें जेम सत्‌चित्‌मयो आत्मा एटले सर्वजीव तथा सर्वप्रदेश सर्वगुण ते जीवनां लक्षण छे एने अनुगम संग्रह कहियें.

तथा जेने ना कहेवे तेथी इतरनो सर्व संग्रहपणे ज्ञान थाय ते जेम अजीव छे तेवारें जे जीव नही ते अजीव कहिये एटले कोइक जीव छे एम व्यतिरेक वचने ठेर्या तथा उपयोगें जीवनो ग्रहण थाय ते व्यतिरेक संग्रह कहियें.

अथवा संग्रहनय बे भेदें कहेवाय छे. १ महासत्तारूप, २ अवांतरसत्तारूप ए रीतें पण संग्रहनो स्वरूप कह्यो छे.

"सदिति भणियम्मि जम्हा, सव्वत्थाणुप्पवत्तए बुद्धी । तो सव्वं सत्तमत्तं नत्थि तदत्थंतरं किंचि ॥१॥" यद्यस्मात् सदित्येवं भणिते सर्वत्र भुवनत्रयांतर्गतवस्तुनि बुद्धिरनुप्रवर्तते प्रधावति नहि तत् किमपि वस्तु अस्ति यत् सदित्युक्ते झगिति बुद्धौ न प्रतिभासते तस्मात् सर्वं सत्तामात्रं न पुनः अर्थांतरं तत् श्रुतसामर्थ्यात् यत् संग्रहेण संगृह्यते तेन परिणमनरूपत्वादेव संग्रहस्येति" एटले त्रणे भुवनमां एहवी वस्तु कोइ नथी जे संग्रहनयने ग्रहणमां आवती नथी जेजे वस्तु छे ते सर्व संग्रहनयमां ग्रहवाणी ज छे ए संग्रहनय कह्यो.

संग्रहगृहीतवस्तुभेदान्तरेण विभजनं व्यवहरणं प्रवर्त्तनं वा व्यवहारः, स द्विविधः शुद्धोऽशुद्धश्च । शुद्धो द्विविधः वस्तुगतव्यवहारः धर्मास्तिकायादिद्रव्याणां स्वस्वचलनसहकारादिजीवस्य लोकालोकादिज्ञानादिरूपः स्वसंपूर्णपरमात्मभावसाधनरूपो गुणसाधकावस्थारूपः गुणश्रेण्यारोहादिसाधनशुद्धव्यवहारः । अशुद्धोपि द्विविधः सद्भूतासद्भूतभेदात् सद्भूतव्यवहारो ज्ञानादिगुणः परस्परं भिन्नः, असद्भूतव्यवहारः कषायात्मादि मनुष्योऽहं देवोऽहं । सोऽपि द्विविधः संश्लेषिताशुद्धव्यवहारः शरीरं मम अहं शरीरी । असंश्लेषितासद्भूतव्यवहारः पुत्रकलत्रादिः, तौ च उपचरितानुपचरितव्यवहारभेदाद् द्विविधौ तथा च विशेषावश्यके "ववहरणं ववहार एस तेण ववहारए व सामन्नं । ववहारपरोव जओ विसेसओ तेण ववहारो ॥" व्यवहरणं व्यवहारः, व्यवहरति स इति वा व्यवहारः, विशेषतो व्यवह्रियते निराक्रियते सामान्यं तेनेति व्यवहारः लोको व्यवहारपरो वा विशेषतो यस्मात्तेन व्यवहारः । न व्यवहारास्वस्वधर्मप्रवर्तितेन ऋते सामान्यमिति स्वगुणप्रवृत्तिरूपव्यवहारस्यैव वस्तुत्वं तमंतरेण तद्भा-

वात् स द्विविधः विभजन, १ प्रवृत्ति, २ भेदात् । प्रवृत्तिव्यवहारस्त्रिविधः वस्तुप्रवृत्तिः १ साधनप्रवृत्तिः २ लौकिकप्रवृत्तिश्च, ३ साधनप्रवृत्तिस्त्रेधा लोकोत्तर, लोकिका, २ कुप्रावचनिक, ३ भेदात् इति व्यवहारनयः श्रीविशेषावश्यके ॥

अर्थ—हवे व्यवहारनयनी व्याख्या करे छे संग्रहनयें गृहीत जे वस्तु तेने भेदांतरे विभजन के० वहेंचवुं ते व्यवहारनय जेम द्रव्य एवुं सामान्य नाम कह्युं तेमां वली वेंहेचण करियें जे द्रव्यना बे भेद छे. १ जीव द्रव्य, २ अजीव द्रव्य, वली तेमां पण वेंहेंचण करियें जे जीवना बे भेद १ सिद्ध बीजा संसारी एम वेंहेचण करवी ते सर्व व्यवहारनयनो स्वभाव जाणवो अथवा व्यवहरण के० प्रवर्त्तन ते व्यवहारनय तेना बे भेद छे. १ शुद्ध व्यवहार, २ अशुद्ध व्यवहार, वली शुद्ध व्यवहारना बे भेद छे. १ सर्व द्रव्यनी स्वरूपरूप शुद्धप्रवृत्ति जेम धर्मास्तिकायनी चलणसहायता तथा अधर्मास्तिकायनी स्थिरसहायता तथा जीवनी ज्ञायकता इत्यादिकने वस्तुगत शुद्ध व्यवहार कहियें, २ द्रव्यनो उत्सर्ग निपजवा माटे रत्नत्रयी शुद्धता गुणस्थाने श्रेणीआरोहणरूप ते साधनशुद्ध व्यवहार कहियें.

वली अशुद्ध व्यवहारना बे भेद छे. १ सद्भूत, २ असद्भूत तेमां जे क्षेत्रे अवस्थाने अभेदें रह्या जे ज्ञानादि गुण तेने परस्पर भेदें कहेवा ते सद्भूतव्यवहार.

तथा जेम क्रोधी हुं मानी हुं अथवा देवता हुं मनुष्य हुं इत्यादि देवतापणो ते हेतुपणे परिणमतां ग्रह्या जे देवगतिवि-

थकी कर्म तेने उदयरूप परभाव छे तेपण यथार्थ ज्ञान विना भेदज्ञानशून्य जीवने एक करी माने छे ते अशुद्ध व्यवहार
कहियें तेना बे भेद छे. १ संश्लेषित अशुद्ध व्यवहार ते जे शरीर मारुं हुं शरीरी इत्यादिक संश्लेषित असद्भूत व्यवहार,
२ असंश्लेषित अशुद्ध व्यवहार ते आ पुत्र मारो धनादिक मारा एम कहेवुं ते असंश्लेषित असद्भूत व्यवहार तेना उप-
चरित अनुपचरित ए बे भेद जाणवा.

तथा विशेषावश्यक महाभाष्यमां कह्युं छे जे व्यवहारनयना मूल बे भेद छे एक वेंहेचणरूप व्यवहार बीजो प्रवृत्ति
व्यवहार ते वली प्रवृत्तिना त्रण भेद छे, १ वस्तु प्रवृत्ति, २ साधन प्रवृत्ति, ३ लौकिक प्रवृत्ति तेमां वली साधन प्रवृ-
त्तिना त्रण भेद छे, १ जे अरिहंतनी आज्ञायें शुद्ध साधननो इहलोक संसार सुखभोग आशंसादि दोष रहित जे
रत्नत्रयीनी परिणति परभावत्याग सहित ते लोकोत्तर साधन प्रवृत्ति, २ जे स्याद्वाद विना मिथ्याभिनिवेश सहित
साधनप्रवृत्ति ते कुप्रावचनिक साधनप्रवृत्ति, ३ अने जे लोकना स्वस्वदेश कुलनी चाले प्रवृत्ति ते लोकव्यवहार प्रवृति
ए त्रण प्रवृत्ति कहियें. ए व्यवहारनयना भेद जाणवा. तिहां द्वादशसार नयचक्रमां एकेक नयना सो सो भेद कह्या छे
ते जैनशासन रहस्यना जाण जीवे ते ग्रंथमांथी धारवा ए व्यवहारनय कह्यो.

उज्जं ऋजुं सुयं नाणमुज्जुसुयमस्स सोऽयमुज्जुओ । सुत्तयइ वा जमुज्जुं वत्थुं तेणुज्जुसुत्तो
त्ति ॥१॥ उज्जति ऋजुश्रुतं सुज्ञानं बोधरूपं ततश्च ऋजु अवक्रमृश्रुतमस्यसोऽयमृजुश्रुतं वा अथवा

ऋजु अवक्रं वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्र इति कथं पुनरेतदभ्युपगतस्य वस्तुनोऽवक्रत्वमित्याह ॥
पच्चुपन्नं संपयमुप्पन्नं जं च जस्स पत्तेयं । तं ऋजु तदेव तस्सत्थि उ वक्कम्मन्नंति जमसंतं ॥२॥
यत्सांप्रतमुत्पन्नं वर्त्तमानकालीनं वस्तु, यच्च यस्य प्रत्येकमात्मीयं तदेव तदुभयस्वरूपं वस्तु प्रत्युत्पन्नमुच्यते तदेवासौ नयः ऋजु प्रतिपाद्यते तदेव च वर्तमानकालीनं वस्तु तस्यार्जुसूत्र-स्यास्ति अन्यत्र शेषातीतानागतं परकार्यं च यद्यस्मात् असदविद्यमानं ततो असत्त्वादेव तद्वक्र-मिच्छत्यसाविति । अत एव उक्तं निर्युक्तिकृता "पच्चुपन्नगाही उजुसुयनयविही मुणेयवोति" यत् कालत्रये वर्तमानमंतरेण वस्तुत्वं उक्तं च यतः अतीतं अनागतं भविष्यति न सांप्रतं तद् वर्तते इति वर्तमानस्यैव वस्तुत्वमिति अतीतस्य कारणता अनागतस्य कार्यता जन्यजन-कभावेन प्रवर्तते अतः ऋजुसूत्रं वर्तमानग्राहकं तद् वर्तमानं नामादिचतुःप्रकारं ग्राह्यम् ॥

अर्थ—हवे ऋजुसूत्रनय कहे छे ऋजु के० सरल छे श्रुत के० बोध ते ऋजुसूत्र कहियें ऋजु शब्दें अवक्र एटले समो छे श्रुत जेने ते ऋजुसूत्र कहियें अथवा ऋजु अवक्रपणे वस्तुने जाणे कहे ते ऋजुसूत्र कहियें ते वस्तुनो वक्रपणो केम जाणियें ते कहे छे सांप्रत के० वर्तमानपणे उपनो जे वर्तमानकालें वस्तु ते ऋजुसूत्र कहियें अन्य जे अतीत अना-

गत ते ऋजुसूत्रनी अपेक्षायें अछतो छे केमके अतीत तो विणसीगयो छे अने अनागत आव्यों नथी तेवारें अतीत-अनागत ए बे अवस्तु छे अने जे वर्तमानपर्यायें वर्ते ते वस्तुपणो छे जे पूर्वकाल पश्चात्काल लेची वस्तु कहेवी ते नैगमनय छे आरोपरूप छे तिहां कोइ पुछे जे संसारीसकर्मी जीवने सिद्धसमान कहे छे ते तो अनागतकालें सिद्ध थशे तो तमे अनागतने अवस्तु केम कहोछो तेनो उत्तर जे हे भव्य! ए अनागत भावि माटे कहेता नथी एतो वर्तमान सर्व गुणनी छति आत्मप्रदेशे छे ते आवरण दोषें प्रवर्तति नथी तेथी तिरोभावीपणा माटे संग्रहनयें कहियें पण वस्तुमां सर्व केवलज्ञानादि गुण छता वर्त्ते छे ते माटे सिद्ध कहियें छैयें.

अने जे वस्तु ते नामादिक पर्याय सहित वर्त्ते छे माटे नामादिक निक्षेपा ते सर्व ऋजुसूत्रनयना भेद छे तथा नामादिक त्रण निक्षेपा तो द्रव्य छे अने भावते भाव छे ए व्याख्या कारण कार्यभावनी वेंचण करियें ते माटे छे पण वस्तुमां सहज चार निक्षेपा ते भाव धर्मज छे तथा ए स्वस्वकार्यना कर्त्ताज छे ए ऋजुसूत्रना बे भेद दिगंबर कहे छे, १ सूक्ष्मऋजुसूत्र, २ स्थूलऋजुसूत्र जे वर्तमानकालनो एक समय तेने सूक्ष्मऋजुसूत्र कहियें अने जे बहुकालि ते स्थूलऋजुसूत्र ए पण कालापेक्षी भाव छे तथा ए भावनय छे अने योगावलंबीपणो ते बाह्य छे तेपण द्रव्य माटे एक द्रव्य मध्ये गणे छे ए ऋजुसूत्रनय कह्यो.

'शप आक्रोशे' शपनमाह्वानमिति शब्दः, शपतीति वा आह्वानयतीति शब्दः, शप्यते आहूयते

वस्तु अनेनेति शब्दः, तस्य शब्दस्य यो वाच्योऽर्थस्तत्परिग्रहात्तत्प्रधानत्वान्नयशब्दः यथा कृत-कत्वादित्यादिकः पंचम्यंतः शब्दोऽपि हेतुः। अर्थरूपं कृतकत्वमनित्यत्वगमकत्वान्मुख्यतया हेतुरुच्यते उपचारतस्तु तद्वाचकः कृतकत्वशब्दो हेतुरभिधीयते एवमिहापि शब्दवाच्यार्थपरि-ग्रहादुपचारेण नयोऽपि शब्दो व्यपदिश्यते इति भावः। यथा ऋजुसूत्रनयस्याभीष्टं प्रत्युत्पन्नं वर्त्तमानं तथैव इच्छत्यसौ शब्दनयः। यद्यस्मात्पृथुबुध्नोदरकलितमृन्मयं जलाहरणादिक्रिया-क्षमं प्रसिद्धघटरूपं भावघटमेवेच्छत्यसौ न तु शेषान् नामस्थापनाद्रव्यरूपान् त्रीन् घटानिति। शब्दार्थप्रधानो ह्येष नयः, चेष्टालक्षणश्च घटशब्दार्थो 'घट चेष्टायां' घटते इति घटः अतो जलाहरणादिचेष्टां कुर्वन् घटः। अतश्चतुरोऽपि नामादिघटानिच्छतः ऋजुसूत्राद्विशेषिततरं वस्तु इच्छति असौ। शब्दार्थोपपत्तेर्भावघटस्यैवानेनाभ्युपगमादिति अथवा ऋजुसूत्रात् शब्द-नयः विशेषिततरः ऋजुसूत्रे सामान्येन घटोऽभिप्रेतः, शब्देन तु सद्भावादिभिरनेकधर्मैरभि-प्रेत इति ते च सप्तभङ्गाः पूर्वं उक्ता इति ॥

अर्थ—हवे शब्दनयनुं स्वरूप कहियें छैयें शपति के० बोलावे तेने शब्द कहियें अथवा शपियें बोलावियें वस्तुपणे ते शब्द कहियें ते शब्दें जे वाच्य अर्थ तेने ग्रहे एहवो छे प्रधानपणो जे नयमां तेपण शब्दनय कहियें जेम कृतक ते जे कर्यों तेनो हेतु जे धर्म ते जे वस्तुमां होय ते बोलाय एटले शब्दनुं कारण तो वस्तुनो धर्म थयो जेम जलाहरण धर्म जेमां छे तेने घट कहियें छैयें एम इहां पण शब्दें वाच्यअर्थ ग्रहे ते माटे ते नयनो नाम पण शब्द कहेवाय जेम ऋजुसूत्रनयने वर्त्तमानकालना धर्म इष्ट छे तेम शब्दादिकनयने पण वर्त्तमानताना धर्मज इष्ट छे.

केमके पेटे पृथु के० पहोलो बुध्न के० गोल संकोचित उदरकलितयुक्त जलाहरणक्रियाने समर्थ प्रसिद्ध घटरूप भाव-घट तेनेज घट इच्छे छे पण शेष नाम स्थापना अने द्रव्यरूप त्रण घटने ए शब्दनय घट माने नहीं घट शब्दना अर्थने ते संकेतनेज घट कहे. घट धातु ते चेष्टावाची छे अतः कारणात् के० ए कारणपणा माटे ए शब्दनय ते चेष्टाकर्त्तानेज घट कहे एटले ऋजुसूत्रनय चार निक्षेपा संयुक्तने घट माने अने शब्दनय ते भावघटनेज घट माने एटलो विशेषपणो छे. शब्दना अर्थनी जिहां उपपत्ति होय तेनेज ते वस्तुपणे कहे एटले ऋजुसूत्रनयें सामान्य घट गवेष्यो अने शब्दनयें सद्भाव जे अस्तिधर्म तथा असद्भाव जे नास्तिधर्म ते सर्व संयुक्त वस्तुने वस्तुपणें कहे.

एटले वस्तुने शब्दें बोलावतां सातभांगे बोलाववो माटे ए सप्तभंगी जेटलाज शब्दनयना भेद जाणवा ते सप्तभं॰गीनो स्वरूप पूर्वें कह्युं छे. ए शब्दादिकनय वस्तुना पर्यायने अवलंबीने वस्तुना भावधर्मना ग्राहक छे, ते माटे वस्तुना भाव निक्षेपा ए नयें मुख्य छे धुरना चार नयमां नामादिक त्रण निक्षेपा मुख्य छे ए शब्दनयनुं स्वरूप कह्युं.

गाथा ॥ जं जं सण्णं भासइ ॥ तं तं चिय समभिरोहइ जम्हा ॥ सण्णंतरत्थविमुहो, तओ नओ समभिरूढोत्ति ॥१॥ यां यां संज्ञां घटादिलक्षणां भाषते वदति तां तामेव यस्मात्संज्ञान्तरार्थविमुखः समभिरूढो नयः नानार्थनामा एव भाषते यदि एकपर्यायमपेक्ष्य सर्वपर्यायवाचकत्वं तथा एकपर्यायाणां सङ्करः पर्यायसङ्करे च वस्तुसङ्करो भवत्येवेति मा भूत्संकरदोषः, अतः पर्यायान्तरानपेक्ष एव समभिरूढनय इति ॥

अर्थ—हवे समभिरूढनयनी व्याख्या कहियें छैयें. जे शब्दनय ते इंद्र, शक्र, पुरंदर इत्यादिक सर्व इंद्रना नामभेद छे, पण एक इंद्र पर्यायवंत इंद्र देखी तेना सर्व नाम कहे. "उक्तं च विशेषावश्यके एकस्मिन्नपि इंद्रादिके वस्तुनि यावत् इन्दन शकन–पुरदारणादयोऽर्था घटन्ते तद्वशेनेन्द्रशक्रादिबहुपर्यायमपि तद्वस्तु शब्दनयो मन्यते समभिरूढवस्तु नैवं मंस्यते इत्यनयोर्भेदः

जे एक पर्याय प्रगटपणे अने शेषपर्यायने अणप्रगटवे शब्दनय तेटला सर्वनाम बोलावे पण समभिरूढनय ते न बोलावे एटलो शब्दनय तथा समभिरूढनयमां भेद छे माटे हवे समभिरूढनय कहे छे.

घटकुंभादिकमां जे संज्ञानो वाच्य अर्थ देखाय तेज संज्ञा कहे जेमां संज्ञांतर अर्थने विमुख छे तेने समभिरूढनय कहियें. जो एक संज्ञामध्ये सर्व नामांतर मानियें तो सर्वनो संकर थाय तेवारें पर्यायनो भेदपणो रहे नही अने जे पर्या-

यांतर होय तेतो भेदपणेज होय तेथी पर्यायांतरनो भेदपणोज रह्यो ते माटे लिंगादिभेदने सापेक्षपणे वस्तुनो भेदपणोज मानवो. ए समभिरूढनय वखाण्यो. ए नयमां पण भेदज्ञाननी मुख्यता छे.

एवं जह सद्दत्थो. संतो भूओ तदन्नहाभूओ ॥ तेणेवभूयनओ, सद्दत्थपरो विसेसेणं ॥१॥ एवं यथा घट चेष्टायामित्यादिरूपेण शब्दार्थो व्यवस्थितः तहत्ति तथैव यो वर्त्तते घटादिकोऽर्थः स एवं सन् भूतो विद्यमानः 'तदन्नहाभूओत्ति' वस्तु तदन्यथा शब्दार्थोल्लंघनेन वर्त्तते स तत्त्वतो घटाद्यर्थोपि न भवति किंभूतो विद्यमानः येनैवं मन्यते तेन कारणेन शब्दनयसमभिरूढनयाभ्यां सकाशादेवंभूतनयो विशेषेण शब्दार्थनयतत्परः । अयं हि योषिन्मस्तकारूढं जलाहरणादिक्रियानिमित्तं घटमानमेव चेष्टमानमेव घटं मन्यते न तु गृहकोणादिव्यवस्थितं । विशेषतः शब्दार्थतत्परोयमिति । वंजणमत्थेणत्थं च वंजणेणोभयं विसेसेइ । जह घडसद्दं चेट्ठावया तहा तंपि तेणेव ॥१॥ व्यज्यते अर्थोऽनेनेति व्यञ्जनं वाचकशब्दो घटादिस्तं चेष्टावता एतद्वाच्येनार्थेन विशिनष्टि स एव घटशब्दो यश्चेष्टावन्तमर्थं प्रतिपादयति, नान्यम्

इत्येवं शब्दमर्थेन नैयत्ये व्यवस्थापयतीत्यर्थः । तथार्थमप्युक्तलक्षणमभिहितरूपेण व्यञ्जनेन विशेषयति चेष्टापि सैव या घटशब्देन वाच्यत्वेन प्रसिद्धा योषिन्मस्तकारूढस्य जलाहरणादि-क्रियारूपा, न तु स्थानतरणक्रियात्मिका, इत्येवमर्थं शब्देन नैयत्ये स्थापयतीत्यर्थः इत्येवमु-भयं विशेषयति शब्दार्थौ नार्थः शब्देन नैयत्ये स्थापयतीत्यर्थः । एतदेवाह यदा योषिन्मस्तका-रूढश्चेष्टावानर्थो घटशब्देनोच्यते स घटलक्षणोऽर्थः स च तद्वाचको घटशब्दः अन्यदा तु वस्त्वंतरस्येव तच्चेष्टाभावादघटत्वं, घटध्वनेश्चायमित्थमेवमुभयविशेषक एवंभूतनय इति ॥

अर्थ—हवे एवंभूतनयनो स्वरूप कहिये छैयें एवं के० जेम घटचेष्टावाची इत्यादिक रूपे शब्दनयनो अर्थ कह्यो छे ए रीते जे घटादिक अर्थ वर्ते ते एवं के० एमज जे विद्यमानपणे शब्दना अर्थने ओलंघीने वर्त्ते ते तेशब्दनो वाच्य नथी अने शब्दार्थपणो जेमां न पामियें ते वस्तु ते रूपे नही माटे जो शब्दार्थमांथी एक पर्याय पण ओछो होय तो एवंभूतनय तेने ते पणो कहे नही ते माटे शब्दनयथी तथा समभिरूढनयथी एवंभूतनय ते विशेषांतर छे.

ए एवंभूतनय ते स्त्रीने मस्तके चढ्यो, पाणी आणवानी क्रियानो निमित्त मार्गे आवतापणानी चेष्टा करतो होय तेने घट माने पण घरने खूंणे रह्यो जे घट तेने घट करी माने नही. केमके ते चेष्टाने अणकरतो छे ते माटे.

जे थकी अर्थने व्यंजीये के० प्रगट करीयें तेने व्यंजन कहियें व्यंजन ते वाचक शब्द छे ते अर्थने कहे ते क्रियावंत थको तेनेज ते वस्तु कहे बीजाने न कहे अने तेहिज अर्थं कह्युं. जे लक्षण ते कह्याने रूपें विशेष थाय जेम चेष्टा घट शब्द वाचे प्रसिद्ध छे योषित् के० स्त्रीने माथे पाणी लावतो ते घट तथा स्थानकें रह्यो अथवा तरण क्रिया करताने एवंभूतनय घट कहे नही. ए शब्दें अर्थ तथा अर्थं शब्दने थापे छे एनुं ए रहस्य छे जे स्त्रीने मस्तकें चढ्यो चेष्टावंत अर्थ ते घट शब्दें बोलावे तेथी अन्यथा तेने तेपणे बोलावे नही जेम सामान्य केवली जे ज्ञानादिक गुणे समान छे तेने समभिरूढनय अरिहंत कहे पण एवंभूतनय तो समवसरणादि अतिशय संपदा सहित तथा केवली ते इंद्रादिकें पूजतां युक्त होय तेनेज अरिहंत कहे ते विना न कहे. वाच्य वाचकनी पूर्णताने कहे ए स्वरूपें एवंभूतनय जाणवो.

ए साते नयना भेद ते विशेषावश्यकने अनुसारे कह्या. नैगमना दस भेद, संग्रहना छ भेद अथवा बार कह्या. व्यवहारना भेद आठ अथवा चउद कह्या. ऋजूसूत्रना चार अथवा छ कह्या शब्दना सात भेद कह्या. समभिरूढना बे भेद अने एवंभूतनो एक भेद कह्यो. ए रीते सर्वना भेद कह्या. वळी नयचक्रमां नयना भेद सातसो कह्या छे ते पण जाणवा.

एवमेव स्याद्वादरत्नाकरात् पुनर्लक्षणत उच्यते नीयते येन श्रुताख्यप्रामाण्यविषयीकृतस्यार्थस्य शस्तादितरांशौदासीन्यतः सम्प्रतिपत्तुरभिप्रायविशेषो नयः । स्वाभिप्रेतादंशादपरांशापलापी पुनर्नयाभासः । स समासतः द्विभेदः द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिक आद्यो नैगमसंग्रह व्यवहार ऋजु-

सूत्रभेदाच्चतुर्धा केचिदृजुसूत्रं पर्यायार्थिकं वदन्ति ते चेतनांशत्वेन विकल्पस्य ऋजुसूत्रे ग्रहणात् श्रीवीरशासने मुख्यतः परिणतिचक्रस्यैव भावधर्मत्वेनांगीकारात् तेषां ऋजुसूत्रः द्रव्यनये एव धर्मयोर्धर्मिणोर्धर्मधर्मिणोश्च प्रधानोपसर्जन आरोपसङ्कल्पांशादिभावेनानेकगमग्रहणात्मको नैगमः सत्चैतन्यमात्मनीतिधर्मयोः गुणपर्यायवत् द्रव्यमिति धर्मधर्मिणोः क्षणमेको सुखी विषयासक्तो जीव इति धर्मधर्मिणोः सूक्ष्मनिगोदीजीवसिद्धसमानसत्ताकः अयोगीनो संसारीति अंशग्राहो नैगमः धर्मधर्मादीनामेकान्तिकपार्थक्याभिसन्धिर्नैगमाभासः

अर्थ—हवे स्याद्वादरत्नाकरथी नयस्वरूप लखियें छयें नीयते के॰ पमाडीयें जे थकी श्रुतज्ञान स्वरूप प्रमाणे विषये कीधो जे पदार्थनो अंश ते अंशथी इतर के॰ बीजो जे अंश ते थकी उदासीपणो तेने पडियजवा वालानो जे अभिप्राय विशेष तेने नय कहियें एटले वस्तुना अंशने ग्रहे अने अन्यथी उदासीनपणो ते नय कहियें. एक अंशने मुख्य करीने बीजा अंशने उत्थापे ते नयाभास कहियें. ते नयना बे भेद छे एक द्रव्यार्थिक बीजो पर्यायार्थिक तेमां द्रव्यार्थिकना १ नैगम २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्र ए चार भेद छे. केटलाक आचार्य ते ऋजुसूत्रने विकल्परूप माटे भावनय गवेषे छे ते रीते द्रव्यार्थिकना त्रण भेद छे.

हवे नैगमनयनुं स्वरूप कहे छे. जे धर्मने प्रधानपणे अथवा गौणपणे अथवा धर्मीने प्रधानपणे अथवा गौणपणे तथा धर्म धर्मी ए बेउने प्रधानपणे तथा गौणपणे जे गवेषवो एटले धर्मोनी प्राधान्यता ते वारे पर्यायोनी प्रधानता थयी अने जिहां धर्मीनो प्रधानपणो तिहां द्रव्यनो प्रधानपणो तेमज गौणपणो तथा धर्म धर्मीनो प्रधान गौणपणो ए रीते जे द्रव्य पर्यायनो गौण प्रधानपणानी गवेषणा रूप ज्ञानोपयोग ते नैगमनय जाणवो तेना बोधने नैगम बोध कहिये तेना उदाहरण कहेछे.

सत् के० छतापणे चैतन्य के० जाणपणो ए बे धर्म मध्ये एक धर्म ग्रही मुख्यपणे गणे अने बीजाने गौणपणे न गवेषे. ए रीतें नैगमनय जाणवो. इहां चैतन्य नामे जे व्यंजन पर्याय तेने प्रधानपणे गणे केमके चैतन्यपणो ते विशेष गुण छे अने सत्वनामा व्यंजन पर्याय छे ते सकल द्रव्य साधारण छे ते माटे तेने गौणपणे लेखवे ए नैगमनो प्रथम भेद कह्यो.

तथा वली "वस्तु पर्यायवद् द्रव्यं" एम बोलवुं ते धर्मीनो नैगम छे इहां "पर्यायवत् द्रव्यं" एम वस्तु छे इहां द्रव्यनो मुख्यपणो वली वस्तुने पर्यायवंत कहेवुं ते वस्तुनो गौणपणो अने पर्यायनो मुख्यपणो इहां उभयगोचरपणा माटे ए नैगमनो बीजो भेद कह्यो.

"क्षणमेकः सुखी विषयासक्तो जीव इति धर्मधर्मिणोरिति" इहां विषयासक्त जीवाख्य जे धर्मिना मुख्यताना विशेषणाथी सुखलक्षण धर्मनी प्रधानता ते विशेषणपणे करीने धर्मधर्मिने आलंबने ए त्रीजो नैगम जेवारे धर्म तथा धर्मि

ए त्रेने अवलंबे, ग्रहण, करे तेवारे संपूर्ण वस्तुनो ग्रहण थयो तेवारे ए ज्ञानने प्रमाण कह्यो तिहां उत्तर द्रव्य पर्याय ते बेहुने प्रधानपणे अनुभवतो जे ज्ञान प्रमाण थाय इहां बे पक्षने विषे एकनी गौणता बीजानी मुख्यता लइने ज्ञान थाय छे ते माटे नय कहियें तथा वली सुक्ष्मनिगोदि जीव ते समान सत्तावंत छे अथवा अयोगी केवली जिन तेने संसारी कहेवुं ते अंशनैगम.

हवे नैगमाभास कहे छे. वस्तुमां धर्म अनेक छे ते एकांते माने पण एकबीजाने सापेक्षपणे न माने एटले एक धर्मने माने अने बीजा धर्मने न माने ते नैगमाभास कहियें ए दुर्नय जाणवो. केमके अन्य नयने गवेषे नही माटे जेम आत्माने विषे सत्व तथा चैतन्य ए धर्म भिन्नभिन्न छे तेमां चैतन्यपणो न माने ते नैगमाभास कहियें एटले नैगमनय कह्यो.

यथाऽऽत्मनि सत्वचैतन्ये परस्परं भिन्ने सामान्यमात्रग्राही सत्तापरामर्शरूपसङ्ग्रहः स परापरभेदाद् द्विविधः तत्र शुद्धद्रव्य सन्मात्रग्राहकः परसङ्ग्रहः चेतनालक्षणोजीव इत्यपरसङ्ग्रहः सत्ताद्वैतं स्वीकुर्वाणः सकलविशेषान् निराचक्षाणः सङ्ग्रहाभासः सङ्ग्रहस्यैकत्वेन 'एगे आया' इत्यनभिज्ञानात् सत्ताद्वैत एव आत्मा ततः सर्वविशेषाणां तदितराणां जीवाजीवादिद्रव्याणामदर्शनात् द्रव्यत्वादिनावान्तरसामान्यानि मन्वानस्तद्भेदेषु गजनिमीलिकामवलम्बमानः परा-

परसङ्ग्रहः धर्माधर्माकाशपुद्गलजीवद्रव्याणामैक्यं द्रव्यत्वादिभेदादित्यादिद्रव्यत्वादिकं प्रतिजानानस्तद्विशेषान् निन्हुवानस्तदाभासः यथा द्रव्यमेव तत्त्वं तत्त्वपर्यायाणामग्रहणाद्विपर्यास इति सङ्ग्रहः

अर्थ—हवे संग्रहनय कहे छे. सामान्यमात्र समस्तविशेषरहित सत्यद्रव्यत्वादिकने ग्रहेवानो छे. स्वभाव जेनो ते सं० के० पिंडपणे विशेषराशीने ग्रहे पण व्यक्तपणे न ग्रहे स्वजातिना दीठा जे इष्ट अर्थ तेने अविरोधें करीने विशेष धर्मोने एकरूपपणे जे ग्रहण करवो ते संग्रहनय कहियें ए भावना छे तेना बे भेद छे १ परसंग्रह, २ अपरसंग्रह तेमां "अशेषविशेषोदासीनं भजमानं शुद्धद्रव्यं सन्मात्रमभिमन्यमानः परसंग्रह इति" जे समस्तविशेषधर्म स्थापनानी भजना करतो एटले विशेषपणाने अणग्रहतो थको शुद्धद्रव्यसत्तामात्रप्रतें माने जेम द्रव्य ए परसंग्रह विश्व एक सत्पणा माटे एम कह्याथी छतापणाना एकपणानुं ज्ञान थाय छे एटले सर्व पदार्थनो एकपणो ग्रहण छे ते परसंग्रह कहियें.

तथा जे सत्तानो अद्वैत स्वीकारे अने द्रव्यांतरभेद न माने समस्त विशेषपणाने ना कहेतो थको जे ग्रहण करे ते अद्वैतवादि वेदांत तथा सांख्यदर्शन ए परसंग्रहाभास छे केमके जे भेदधर्म छता देखाय छे तथा द्रव्यांतरपणो तेने न माने माटे परसंग्रहाभास कहियें अने जैन तो विशेष सहित सामान्यने ग्रहे छे माटे संग्रहनय कहियें.

"द्रव्यत्वादिनयांतरसामान्यानि मत्वा तद्भेदेषु गजनिमीलिकामवलंबमानः अपरसंग्रह." द्रव्य जे जीव अजीवादिक

जे अवांतर सामान्यने मानतो अने जीवने विषे प्रति जीवनो विशेष भेद भव्य अभव्य सम्यक्त्वी मिथ्यात्वी नरनारकादिं जे भेद तेने गजनिमीलिका के० मस्ताइयें न गवेषवो ते अपरसंग्रह कहियें अने द्रव्यने सामान्यपणे माने पण स्वद्रव्यनी परिणामिकत्वादिक धर्मने न माने ते अपरसंग्रहाभास कहियें ए संग्रहनयनुं स्वरूप कह्युं.

सङ्ग्रहेण च गोचरीकृतानामर्थानां विधिपूर्वकमवहरणं येनाभिसन्धिना क्रियते स व्यवहारः, यथा यत् सत् तत् द्रव्यं पर्यायश्चेत्यादिः यः पुनरपरमार्थिकं द्रव्यपर्यायप्रविभागमभिप्रैति स व्यवहाराभासः चार्वाकदर्शनमिति व्यवहारदुर्नयः ।

अर्थ—हवे व्यवहारनय कहे छे संग्रहनयें ग्रह्या जे वस्तुना तत्त्वादिक धर्म तेनेज गुणभेदें वेहेंचे भिन्नभिन्न गवेषे तथा पदार्थनी गुणप्रवृत्ति तेनेज मुख्यपणे गवेषे ते व्यवहारनय कहियें जेम द्रव्य छे तेना जीव पुद्गलादिक पर्यायना क्रमभावी तथा सहभावी ए रीतें बे भेद छे तेमां वली जीव बे प्रकारें १ सिद्धना, २ संसारी तेमज पुद्गलना बे भेद परमाणु तथा खंध इत्यादिक कार्यभेदें भिन्न माने तथा क्रमभावी पर्यायना बे भेद एक क्रियारूप बीजो अक्रियारूप इम वेहेंचण जे सामर्थ्यादिक गुणभेदें पडे ते सर्व व्यवहारनय जाणवो अने जे परमार्थ विना द्रव्यपर्यायनो विभाग करे ते व्यवहाराभास जाणवो.

जे कल्पना करी भेदें वेंचे ते चार्वाकमत प्रमुख ए व्यवहारनयनो दुर्नय छे जेम चार्वाक प्रमाणपणें छतो जीवपणो

लोकप्रत्यक्षमां दृष्टिगोचर नथी आवतो ते माटे जीव नथी एम कहे अने जगतमां पंचभूतादिक वस्तु नथी एम कल्पना करी स्थूललोकने कुमार्गे प्रवर्त्तावे ते व्यवहारदुर्नय कहियें ए व्यवहारनयनुं स्वरूप कह्युं.

ऋजु वर्तमानक्षणस्थायिपर्यायमात्रप्राधान्यतः सूत्रयति अभिप्रायः ऋजुसूत्रः । ज्ञानोपयुक्तः ज्ञानी, दर्शनोपयुक्तः दर्शनी, कषायोपयुक्तः कषायी, समतोपयुक्तः सामायिकी । वर्तमानापलापी तदाभासः यथा तथागतमत इति ॥

अर्थ—हवे ऋजुसूत्रनय कहे छे ऋजु के० सरलपणे अतीत अनागतने अणगवेषतो अने वर्त्तमानसमय वर्त्तता जे पदार्थना पर्यायमात्र तेने प्रधानपणे सूत्रके० गवेषे ते ऋजुसूत्रकहियें। ते ज्ञानने उपयोगें वर्त्तताने ज्ञानी कहे, दर्शनोपयोगें वर्त्तताने दर्शनी कहे, कषायपणे वर्त्तता जीवने कषायी कहे, समताने उपयोगें वर्त्तता जीवने सामायिकवंत कहे, इहां कोइ पुछे जे उपर कह्या मुजब तो ऋजुसूत्र तथा शब्दनय ए बे एकज थाय छे तेने उत्तर कहे छे जे विशेषावश्यकमां कह्युं छे "कारणं यावत् ऋजुसूत्रः" एटले ज्ञानने कारणपणे वर्त्ततो ते ऋजुसूत्र ग्रहे छे अने जे जाणपणारूप कार्यपणे थाय ते शब्दनय कहियें ए फेर छे.

वर्तमानकालनेपण ग्रहण न करे ते ऋजुसूत्राभास कहियें, जे छता भावने अछता कहे जेम अथवा विपरीत कहे जीवने अजीव कहे, अजीवने जीव कहे इत्यादिक ते तथागत के० बौद्धनो मत छे जे छतो सदा सर्वदा वर्त्ततो जीवादि द्रव्य तेना पर्यायने पलटवे सर्वथा द्रव्यने विनाशि माने तेने ऋजुसूत्रनयाभासाभिप्राय जाणवो ए ऋजुसूत्रनय कह्यो.

एकपर्यायप्राग्भावेन तिरोभाविपर्यायग्राहकः शब्दनयः, कालादिभेदेन ध्वनेरर्थभेदं प्रतिपाद्यमानः शब्दः, जलाहरणादिक्रियासमर्थ एव घटः, न मृत्पिंडादौ; तत्त्वार्थवृत्तौ शब्दवशादर्थप्रतिपत्तिः तत्कार्यधर्मं वर्त्तमानवस्तु तथा मन्यानः शब्दनयः। शब्दानुरूपं अर्थपरिणतं द्रव्यमिच्छति त्रिकालत्रिलिंगत्रिवचनप्रत्ययप्रकृतिभिः समन्वितमर्थमिच्छति तद्भेदे तस्य तमेव समर्थमाणस्तदाभासः।

अर्थ—हवे शब्दनय कहे छे जे वस्तुना एक पर्यायने प्रगट देखवे बीजा शब्दवाचकपर्यायने तिरोभावें अणप्रकटवें पण ते पर्यायने ग्रहे अथवा काल त्रण वचन त्रण लिंग त्रण तेने भेदें शब्दनो भेद पडे ते भेदेंज अर्थने कहे अथवा जलाहरणादि समर्थने घट कहे तथा कुंभादिक चिन्ह पर्याय जेटला छे तेटलानो अर्थ वर्ततो न देखाय तो पण तेने नाम कही बोलावे एम जेमां कार्यनो सामर्थ्यवंतपणो छे तेने ग्रहे पण माटीना पिंडने घट कहे नही ते शब्दनय कहियें अने जे संग्रह तथा नैगमनयवालो कहे ते सत्ता योग्यता अंशना ग्राहक छे तथा तत्त्वार्थटीका मध्ये शब्दवशथी अर्थ पडिवजेवो ते शब्दें बोलावतो होय जे अर्थ ते वस्तुमां धर्मपणे प्रगट देखाय तेनेज ते वस्तु माने ए नयने शब्दानुयायी अर्थ परिणति जे वस्तु कहे छे काललिंगादिभेदें अर्थनो भेद छे ते भेद तेम ते धर्मे वस्तु माने ते शब्दनय कहियें अने ते अर्थ विना ते वस्तुमध्ये तेपणो वर्ततो देखातो नथी तेने ते वस्तुपणे समर्थन करे ते शब्दाभास कहिजे एटले शब्दनय कह्यो.

एकार्थावलंबिपर्यायशब्देषु निरुक्तिभेदेन भिन्नमर्थं समभिरोहन् समभिरूढः । यथा इंदनादिंद्रः, शकनाच्छक्रः, पुरदारणात् पुरंदरः इत्यादिषु । पर्यायध्वनिनामाभिधेयनानात्वमेव कक्षीकुर्वाणस्तदाभासः; यथा इंद्रः शक्रः पुरंदर इत्यादि भिन्नाभिधेये.

अर्थ—हवे समभिरूढनय कहे छे जे एक पदार्थने अविलंबी जेटला सरिखा नाम तेटला पर्याय नाम थया ते पर्याय नाम जेटला होय तेटला निरुक्ति व्युत्पत्ति भिन्न होय ते अर्थनो पण भेद होय ते अर्थने सं० के० सम्यक प्रकारें आरोहतो एटले एटला सर्व अर्थ संयुक्त जे होय ते समभिरूढनय कहियें जेम इदि धातु परमैश्वर्यने अर्थे छे ते परम ऐश्वर्यवंतनें इंद्र कहियें, तथा शकन कहेतां नवि नवि शक्तियुक्तने शक्र कहियें, पुर के० दैत्यने दरे के० विदारे ते पुरंदर, अने शचि जे इंद्राणी तेनो पति स्वामी ते शचिपति कहियें. एटला सर्व धर्म ते इंद्रमां छे ते माटे जे देवलोकनो धणी छे तेने इंद्र एवे नामें बोलावे छे बीजा नामादिक इंद्रने ए नामे न बोलावे जेटला पर्याय नाम छे तेना जे अर्थ थाय ते सर्वने भिन्न भिन्न अर्थ कहे छे पण एकार्थ न जाणे ते समभिरूढाभास कहिये एटलें समभिरूढनय कह्यो.

एवं भिन्नशब्दवाच्यत्वाच्छब्दानां स्वप्रवृत्तिनिमित्तभूतक्रियाविशिष्टमर्थं वाच्यत्वेनाभ्युपगच्छन्नेवंभूतः । यथा इंदनमनुभवन्निंद्रः, शकनाच्छक्रः, शब्दवाच्यतया प्रत्यक्षस्तदाभासः । तथा विशि

घटचेष्टाशून्यं घटाख्यवस्तुनः घटशब्दवाच्यं घटशब्दद्रव्यवृत्तिभूतार्थशून्यत्वात् पटवदित्यादि.

अर्थ—हवे एवंभूतनय कहे छे शब्दनी प्रवृत्तिनो निमित्तभूत जे क्रिया ते विशिष्ट संयुक्त जे अर्थ तेने वाच्य जे धर्म तेने जे पहोंचतो होय एटले ते कारण कार्य धर्म सहित तेने एवंभूतनय कहियें तथा ऐश्वर्य सहित ते इंद्र, शक्र-रूप सिंहासने बेशे ते शक्र, शचि के० इंद्राणीने साथे बेठो तेवारें शचीपति कहे, एटले जे शब्दना जेटला पर्याय ते सर्व तेमां पहोंचता भावने ते नाम कहि बोलावे अने जे पर्याय पहोंचतो देखे नही ते पर्यायनी ना कहे, जिहां सुधी एक पर्याय ऊणो छे तिहां सुधी समभिरूढनय कहियें, अने सर्व वचन पर्यायने पहोंचे ते वारें एवंभूतनय कहियें. जे पदार्थनो नामभेदनो भेद देखीने पदार्थनी भिन्नता कहे ते एवंभूतनयाभास कहिजे, नामभेदे ते वस्तुज भिन्न जेम हाथी, घोडा, हिरण्य भिन्न छे तेम भिन्नपणो माने जेम अर्थ भिन्नपणा माटे घटथी पट भिन्न छे तेम इंद्रपणाथी पुरंदरपणो भिन्न माने ते एवंभूतनयनो दुर्नय जाणवो; एटले एवंभूतनय कह्यो, ए रीते सातनयनी व्याख्या कही.

अत्र आद्यनयचतुष्टयमविशुद्धं पदार्थप्ररूपणाप्रवणत्वात्, अर्थनया नाम द्रव्यत्वसामान्यरूपा नयाः । शब्दादयो विशुद्धनयाः शब्दावलंबार्थमुख्यत्वादाद्यास्ते तत्त्वभेदद्वारेण वचनमिच्छन्ति शब्दनयास्तावत् समानलिंगानां समानवचनानां शब्दानां इंद्रशक्रपुरंदरादीनां वाच्यं भावा-र्थमेवाभिन्नमभ्युपैति न जातुचित् भिन्नवचनं वा शब्दं स्त्री दाराः तथा आपो जलमिति सम-

भिरूढवस्तुप्रत्यर्थं शब्दनिवेशादिंद्रशक्रादीनां पर्यायशब्दत्वं न प्रतिजानीते अत्यंतभिन्नप्रवृत्तिनिमित्तत्वादभिन्नार्थत्वमेवानुमन्यंते घटशक्रादिशब्दानामिवेति एवंभूतः पुनर्यथा सद्भाववस्तुवचनगोचरं आपृच्छतीति चेष्टाविशिष्ट एवार्थो घटशब्दवाच्यः चित्रालेख्यतोपयोगपरिणतश्च चित्रकारः । चेष्टारहितस्तिष्ठन् घटो न घटः, तच्छब्दार्थरहितत्वात् कूटशब्दवाच्यार्थवन्नापि भुंजानः शयानो वा चित्रकारः शिल्पनिर्वेदश्चित्रज्ञानोपयोगपरिणतिशून्यत्वाद्गोपालवदेवमभेदभेदार्थवाचिनोनैकैकशब्दवाच्यार्थावलंबिनश्च शब्दप्रधानार्थोपसर्जनाच्छब्दनया इति तत्त्वार्थवृत्तौ । एतेषु नैगमः सामान्यविशेषोभयग्राहकः, व्यवहारः विशेषग्राहकः द्रव्यार्थावलंबिऋजुसूत्रविशेषग्राहक एव एते चत्वारो द्रव्यनयाः शब्दादयः पर्यायार्थिकविशेषावलंबि भावनयाश्चेति शब्दादयो नामस्थापनाद्रव्यनिक्षेपादावस्तुतया जानन्ति परस्पर- सापेक्षाः सम्यक्दर्शनिप्रतिनयं भेदानां शतं तेन सप्तशतं नयानामिति अनुयोगद्वारोक्तत्वात् ज्ञेयं.

अर्थ—ए सात नयमां आद्यना चार नय जे छे ते अविशुद्ध छे शा माटे के जे पदार्थ के० द्रव्य तेने सामान्यपणे

कहेवाना अधिकारी छे ए नयनुं किहां एक अर्थनय ए पण नाम छे ते अर्थ शब्दे द्रव्य लेवुं तथा शब्दादिक त्रण नय ते शुद्ध नय छे केमके शब्दना अर्थनीं एने मुख्यता छे पेहेला नय ते भेदपणे वचनने वांछे छे अने शब्दादिक नय ते लिंगादिके अभेद वचने अभेद कहे तथा भिन्न वचने भिन्नार्थ कही माने अने समभिरूढ ते भिन्न शब्द तेने वस्तु पर्याय न माने तथा एवंभूत ते भिन्नगोचर पर्यायने भिन्न माने जे चेष्टाकरतो होय तेने घट कहे पण खूणे पड्यो घट कहे नही चित्राम करतो होय तथा तेज उपयोगें वर्ततो होय तेने चित्रकार कहे पण तेज चित्रकार सुतो होय अथवा खावा बेठो होय तेने चित्रकार न कहे केमके ते उपयोगें रहित छे माटे ए नय ते शब्द तथा अर्थने अभेदपणो माने छे अने अर्थथी शून्य शब्द ते प्रमाण नथी अने शब्द प्रधान अर्थ ते द्रव्यने गौणपणे वर्तता शब्दादिक त्रण नय छे एम तत्त्वार्थ टीका मध्ये कह्यो छे.

ए सात नयने विषे पेहेलो नैगमनय ते सामान्य विशेष बेहुने माने छे संग्रहनय ते सामान्यने माने छे व्यवहारनय विशेषने माने छे अने द्रव्यार्थावलंबी छे तथा ऋजुसूत्र तो विशेष ग्राहक छे ए चार ते द्रव्यनय छे अने पाछला शब्दादिक त्रण नय ते पर्यायार्थिक विशेषावलंबी भावनय छे तथा शब्दादिक नय ते नाम स्थापना द्रव्य ए पेहेला त्रण निक्षेपाने अवस्तु माने छे "तिण्हं सद्दनयाणं अवत्थु" ए अनुयोगद्वार सूत्रनुं वचन छे ए साते नय परस्पर सापेक्षपणे ग्रहे ते समकेति जाणवा अने जो ए नय परस्पर विरोधी होय तो मिथ्यात्वी जाणवा तथा एकेका नयना सो सो भेद थाय छे एम साते नयना मळी सातसो भेद थाय छे ए अधिकार श्रीअनुयोगद्वार सूत्रथी कह्यो छे.

पूर्वपूर्वनयः प्रचुरगोचरः । परास्तु परिमितविषयाः । सन्मात्रगोचरात् संग्रहात् नैगमो भावाभावभूमित्वाद् भूरिविषयः, वर्त्तमानविषयाद् ऋजुसूत्राद्व्यवहारस्त्रिकालविषयत्वात् बहुविषयकालादिभेदेन भिन्नार्थोपदर्शनात् भिन्नऋजुसूत्रविपरीतत्वान्महार्थः । प्रतिपर्यायमशब्दमर्थभेदमभीप्सितः समभिरूढाच्छब्दः प्रभूतविषयः । प्रतिक्रियां भिन्नमर्थं प्रतिजानानात् एवंभूतात् समभिरूढः महान् गोचरः । नयवाक्यमपि स्वविषये प्रवर्त्तमानं विधिप्रतिषेधाभ्यां सप्तभंगीमनुव्रजति । अंशग्राही नैगमः, सत्ताग्राही संग्रहः, गुणप्रवृत्तिलोकप्रवृत्तिग्राही व्यवहारः, कारणपरिणामग्राही ऋजुसूत्रः, व्यक्तकार्यग्राही शब्दः, पर्यायांतरभिन्नकार्यग्राही समभिरूढः तत्परिणमनमुख्यकार्यग्राही एवंभूत इत्याद्यनेकरूपो नयप्रचारः । "जावंतिया वयणपहा तावंतिया चेव हुंति नयवाया" इति वचनात् उक्तो नयाधिकारः ।

अर्थ—ए प्रकारे पूर्व के० पूर्वलो जे नैगम नय तेनो विस्तार घणो जाणवो अने तेथी ऊपरलो नय तेनो परिमित विषय छे एटले थोडो विषय छे केमके सत्तामात्रनो ग्राहक संग्रहनय छे. छति सत्ताने संग्रहनय ग्रहे अने नैगम ते छता भाव अथवा संकल्पपणे अछता भाव सर्वने ग्रहे अथवा सामान्य विशेष बे धर्मने ग्रहे ते माटे नैगमनो विषय घणो छे.

तथा संग्रहनय ते सत्तागत सामान्य विशेष बेहुने ग्रहे छे, अने व्यवहार ते सत् एक विशेषनेज ग्रहे छे; माटे संग्रहनयथी व्यवहारनयनो विषय थोडो छे अने व्यवहारनयथी संग्रहनय ते बहुविषयी छे. तथा ऋजुसूत्रनय ते वर्त्तमान विशेष धर्मनो ग्राहक छे, अने व्यवहारथी ऋजुसूत्रनय ते कालविषयनो ग्राहक छे; ते माटे व्यवहार बहुविषयी छे अने व्यवहारथी ऋजुसूत्र अल्पविषयी छे. ऋजुसूत्रनय ते वर्त्तमानकाल ग्रहे, अने शब्दनय कालादिवचन लिंगथी बेहेंचता अर्थने ग्रहे, अने ऋजुसूत्रनय ते वचन लिंगने भिन्न पाडतो नथी; ते माटे ऋजुसूत्रथी शब्दनय अल्पविषयी छे, ऋजुसूत्र बहुविषयी छे. अने शब्दनय सर्व पर्यायनो एक पर्यायने ग्रहता ग्रहे, अने समभिरूढ ते जे धर्म व्यक्त ते वाचक पर्यायने ग्रहे; ते माटे शब्दनयथी समभिरूढनय ते अल्पविषयी छे. केमके समभिरूढ ते पर्यायनो सर्वकाल गवेष्यो छे, अने एवंभूतनय ते प्रतिसमयें क्रियाभेदें भिन्नार्थपणो मानतो अल्पविषयी छे; ते माटे एवंभूतथी समभिरुढ बहुविषयी जाणवो अने एवंभूत अल्पविषयी जाणवो.

जे नय वचन छे ते पोताना नयने स्वरूपें अस्ति छे, अने परनयना स्वरूपनी तेमां नास्ति छे; एम सर्व नयनी विधिप्रतिषेधें करीने सप्तभंगी ऊपजे पण नयनी जे सप्तभंगी ते विकलादेशीज होय अने जे सकलादेशी सप्तभंगी ते प्रमाण छे पण नयनी सप्तभंगी न ऊपजे.

उक्तं च रत्नाकरावतारिकायां "विकलादेशस्वभावा हि नयसप्तभंगी वस्त्वंशमात्रप्ररूपकत्वात्, सकलादेशस्वभावा तु प्रमाणसप्तभंगी संपूर्णवस्तुस्वरूपप्ररूपकत्वात्" ए वचन छे एटले यथायोग्यपणे नयनो अधिकार कह्यो.

सकलनयग्राहकं प्रमाणं, प्रमाता आत्मा प्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धः चैतन्यस्वरूपपरिणामी कर्त्ता साक्षाद् भोक्ता स्वदेहपरिमाणः प्रतिक्षेत्रभिन्नत्वेनैव पञ्चकारणसामग्रीतः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रसाधनात् साधयते सिद्धिः। स्वपरव्यवसायिज्ञानं प्रमाणं तद् द्विविधं प्रत्यक्षपरोक्षभेदात्स्पष्टं प्रत्यक्षं परोक्षमन्यत् अथवा आत्मोपयोगत इन्द्रियद्वारा प्रवर्तते यज् ज्ञानं न तत्प्रत्यक्षं; अवधिमनःपर्यायौ देशप्रत्यक्षौ, केवलज्ञानं तु सकलप्रत्यक्षं, मतिश्रुते परोक्षे; तच्चतुर्विधं अनुमानोपमानागमार्थापत्तिभेदात्, लिङ्गपरामर्शोऽनुमानं लिङ्गं चाविनाभूतवस्तुकं नियतं ज्ञेयं यथा गिरिगुहिरादौ व्योमावलम्बिधूम्रलेखां दृष्ट्वा अनुमानं करोति, पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वात्, यत्र धूमस्तत्राग्निः यथा महानसं; एवं पञ्चावयवशुद्धं अनुमानं यथार्थज्ञानकारणं. सदृश्यावलंबनेनाज्ञातवस्तूनां यज्ज्ञानं उपमानज्ञानं, यथा गौस्तथा गवयः गोसादृश्येन अदृष्टगवयाकारज्ञानं उपमानज्ञानं. यथार्थोपदेष्टा पुरुष आप्तः स उत्कृष्टतो वीतरागः सर्वज्ञ एव। आप्तोक्तं वाक्यं आगमः, रागद्वेषाज्ञानभयादि दोषरहितत्वात् अर्हतः वाक्यं आगमः, तदनुयायिपु-

र्वापराविरुद्धं मिथ्यात्वासंयमकषायभ्रान्तिरहितं स्याद्वादोपेतं वाक्यं अन्येषां शिष्टानामपि वाक्यं आगमः। लिङ्गग्रहणाद् ज्ञेयज्ञानोपकारकं अर्थापत्तिप्रमाणं, यथा पीनो देवदत्तो दिवा न भुङ्क्ते तदा अर्थाद्रात्रौ भुङ्क्ते एव, इत्यादि प्रमाणपरिपाटीगृहीतजीवाजीवस्वरूपः सम्यक्-ज्ञानी उच्यते.

अर्थ—हवे प्रमाणनुं स्वरूप कहे छे सर्व नयना स्वरूपने ग्रहण करनारो तथा सर्व धर्मनो जाणंगपणो छे जेमां एहवुं जे ज्ञान तेने लक्षण कहियें जे प्रकाश ते मापवानुं नाम छे. त्रण जगत्ना सर्व प्रमेयने मापवानुं प्रमाण ते ज्ञान छे अने ते प्रमाणनो कर्त्ता आत्मा ते प्रमाता छे ते प्रत्यक्षादि प्रमाणे सिद्ध के० ठहेरयो छे चैतन्य स्वरूप परिणामी छे. वली भवन धर्मथी उत्पाद व्ययपणे परिणमे छे ते माटे परिणामिक छे. तथा कर्त्ता छे तथा भोक्ता छे. जे कर्त्ता होय तेज भोक्ता होय. भोक्तापणा विना सुखमयी कहेवाय नही ते चैतन्य संसारीपणे स्वदेह परिमाण छे प्रतिक्षेत्र के० प्रत्येके शरीर भिन्नपणा माटे भिन्न जीव छे ते जीव पांच कारणनी सामग्री पामीने सम्यग्दर्शन सम्यक्ज्ञान सम्यक्चारित्रने साधवाथी संपूर्ण, अविनाशी, निर्मल, निःकलंक, असहाय, अप्रयास, स्वगुण निरावरण, स्वकार्य प्रवृत्ति, अक्षर, अव्याबाध, सुखमयी, एवी सिद्धता निष्पन्नता नीपजे एज साधन मार्ग छे.

स्व शब्दें करी आत्मा परशब्दें परद्रव्य स्व आत्माथीभिन्न अनंता पर जीव धर्मादिक तेना व्यवसायी व्यवच्छेदक जे

ज्ञान तेने प्रमाण कहियें. तेना मूल भेद बे छे, एक प्रत्यक्ष बीजो परोक्ष. तिहां स्पष्ट ज्ञान ते प्रत्यक्ष कहियें तेथी इतर के० बीजो जे अस्पष्ट ज्ञान ते परोक्ष कहियें. अथवा आत्माना उपयोगथी इंद्रियनी प्रवृत्ति विना जे ज्ञान ते प्रत्यक्ष कहियें. तेना बे भेद छे. एक देशप्रत्यक्ष बीजो सर्वप्रत्यक्ष, तेमां अवधिज्ञान तथा मनःपर्यवज्ञान ते देशप्रत्यक्ष छे. केमके अवधिज्ञान एक पुद्गल परमाणुने द्रव्यें तथा क्षेत्रें अने कालें तथा भावें केटलाक पर्यायने देखे. तथा मनःपर्यवज्ञानी मनना पर्यायने प्रत्यक्ष जाणे पण बीजा द्रव्यने न जाणे माटे बेहु ज्ञानने देशप्रत्यक्ष कहियें. कारण के देशथी वस्तुने जाणे पण सर्वथी न जाणे माटे, अने केवलज्ञान ते जीव तथा अजीव रूपी तथा अरूपी सर्व लोकालोकना त्रण कालना सर्व भावने प्रत्यक्षपणे जाणे माटे सर्व प्रत्यक्ष कहियें.

तथा मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान ए बे अस्पष्ट ज्ञान छे माटे परोक्षछे ते परोक्ष प्रमाणना चार भेद छे. १ अनुमान प्रमाण, २ उपमान प्रमाण, ३ आगम प्रमाण, ४ अर्थापत्ति प्रमाण. तिहां चिन्हें करीने जे पदार्थने ओलखवुं तेने लिंग कहियें. ते परामर्श के० संभालवाथी जे ज्ञान थाय तेने अनुमानज्ञान कहियें. लिंग ते जे विना ते वस्तु होयज नही ते वस्तुनुं लिंग जाणवुं. ते लिंगने देखवाथी वस्तुनो निर्धार करवो ते अनुमान प्रमाण जाणवो.

जेम गिरि गुहिरने विषे आकाशावलंबी धूमनी रेखा देखीने अनुमान करे जे ए पर्वत अग्नि सहित छे ए पक्ष तथा साध्य कह्यो. जे पक्ष ते पर्वत, अने साध्य ते अग्निवंतपणो, साधवो ते हेतु जे धूमवंतपणा माटे एटले जिहां धूम होय तिहां अग्नि अवश्य होयज. आकाशने पहोंचती जे धूम रेखा ते अग्नि विना होय नही तिहां दृष्टांत कहे छे.

जेम महानसे के० रसोडाने विषे रसोइथाए धूम्र तथा अग्निने भेला दीठा ते माटे इहां आ अमुक पर्वतने विषे धूम्र छे तो तिहां निश्चेथी अग्नि छेज एहवी व्याप्ति निर्धारीने ज्ञान करवो ते पंचावयवें शुद्ध अनुमान प्रमाण कहियें. ते अनुमान प्रमाण मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननुं कारण छे. ते अनुमाने जे यथार्थ ज्ञान थाय तेने मान के० प्रमाण कहियें अने जे अयथार्थ ज्ञान थाय ते प्रमाण नही.

तथा सरिखावलंबीपणे अजाणी वस्तुनो जे जाणपणो थाय जेम गो के० बलद तेम गवय के० गवो ए गो सरिखो गवयनुं ज्ञान थयुं ते उपमान प्रमाण कहियें.

यथार्थ भावनो उपदेशक जे पुरुष ते आप्त कहियें ते उत्कृष्ट आप्त वीतराग रागद्वेषरहित सर्वज्ञ केवलज्ञानी ते आप्तनो कह्यो जे वचन तेने आगम कहियें. जे राग द्वेष तथा अज्ञान ए दोषे आगो पाछो अधिको ओछो बोलाय छे ते आगम नही अने राग द्वेष भय अज्ञान रहित जे अरिहंत तेनुं वचन ते आगम प्रमाण जाणवो.

तथा वली ते अरिहंतना वचनने अनुयायी पूर्वापर अविरोधि मिथ्यात्व असंयम कषायथी रहित ते भ्रांतिविना स्याद्वादें युक्त तथा जे साधक ते साधक, बाधक ते बाधक, हेय ते हेय, उपादेय ते उपादेय, इत्यादिक वहेंचण सहित जे होय तेनो कह्यो ते आगमप्रमाण जाणवो. उक्तं च "सुत्तं गणहररइयं, तहेव पत्तेयबुद्धरइयं च ॥ सुअकेवलिणा रइयं अभिन्नदशपुव्विणा रइयं ॥ १ ॥" इत्यादिक सदुपयोगी भवभीरु जगत जीवोना उपकारी एवा श्रुत आम्नायधर जे श्रुतने अनुसारें कहे तेनो वचन पण प्रमाण मानवुं.

तथा कोइक फलरूप लिंगे करीने जे अजाण्या पदार्थनो निर्धार करियें ते अर्थापत्ति प्रमाण कहियें. जेम देवदत्तनो पीन के० पुष्ट शरीर छे पण ते देवदत्त दिवसनो जमतो नथी तेवारें अर्थापत्तिथी जाणीयें जे रात्रें जमतो हशे माटे पुष्ट शरीर छे. एम अर्थापत्ति प्रमाण जाणवो. ए प्रमाण ते जाते अनुमाननो अंश छे ते माटे श्री अनुयोगद्वारमां प्रथम कह्यो नथी.

इहां दर्शनांतरीयो जे प्रमाण माने छे पण ते सत्य नथी जेम छ प्रकारना इंद्रिय सन्निकर्षथी ऊपनो जे ज्ञान तेने नैयायिक प्रत्यक्ष प्रमाण कहे छे, अने परब्रह्मने इंद्रिय रहित माने छे ज्ञानानंदमयी माने छे तेवारें इंद्रिय रहित ज्ञान ते अप्रमाण थाय छे. इत्यादिक अनेक युक्ति छे ते माटे ते प्रमाण नही. तथा चार्वाक मतवाला मात्र एक इंद्रियप्रत्यक्षनेज प्रमाण माने छे एम दर्शनांतरीयना अनेक विकल्प टालीने सर्व नय निक्षेप सप्तभंगी स्याद्वादयुक्त जे वस्तु जीव तथा अजीवनो जो सम्यक् ज्ञान जेनामां होय तेने सम्यक् ज्ञानी कहियें ए ज्ञाननुं स्वरूप कह्युं.

तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं। यथार्थहेयोपादेयपरीक्षायुक्त(ज्ञानेन)ज्ञानं सम्यग्ज्ञानं। स्वरूपरमणपरपरित्यागरूपं चारित्रं। एतद्रत्नत्रयीरूपमोक्षमार्गसाधनात्साध्यसिद्धिः। इत्यनेनात्मनः स्वीयं स्वरूपं सम्यग्ज्ञानं ज्ञानप्रकर्ष एवात्मलाभः ज्ञानदर्शनोपयोगलक्षण एवात्मा छद्मस्थानां च प्रथमं दर्शनोपयोगः केवलिनां प्रथमं ज्ञानोपयोगः पश्चाद्दर्शनोपयोगः सहकारीकर्तृत्वप्रयोगात्

उपयोगसहकारेणैव शेषगुणानां प्रवृत्यभ्युपगमात् इत्येवं स्वतत्वज्ञानकरणे स्वरूपोपादानं तथा स्वरूपरमणध्यानैकत्वेनैव सिद्धिः ।

अर्थ—हवे श्रीवीतरागना आगमथी जाण्यो जे वस्तु स्वरूप तेने हेयोपादेयपणे निर्धार करवो ते सम्यक् दर्शन कहियें तिहां तत्त्वार्थने विषे कह्यो छे के जे तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यक् दर्शनम् । उक्तं च उत्तराध्ययने जीवा जीवा य बंधो ॥ पुन्नं पावासवो तहा ॥ संवरो निज्झरा मुक्खो ॥ संति एतहिया नव ॥ १ ॥ तहियाणं तु भावाणं सदभावे उवए-सण ॥ भावेण सद्दहंतस्स ॥ समत्तंति वियाहियं ॥ २ ॥ इत्यादिक दशरुचिथी सर्व जाणवुं जे तत्त्वार्थ जीवादि पदार्थनो श्रद्धान निर्धार ते सम्यक् दर्शन कहियें अने जे सम्यक् दर्शन ते धर्मनुं मूल छे. तथा जे हेय ते तजवा योग्य, अने उपा-देय ते ग्रहण करवा योग्य, एहवी परीक्षा सहित जे जाणपणो ते सम्यक् ज्ञान छे. जेमां हेयोपयोग संकोच अकरण बुद्धी नथी पण उपादेयने उपयोगें एहवी चिंतवणा थाय जे हवे किवारे करुं? ए विना केम चाले! एहवी जो बुद्धि नथी तो ते संवेदन ज्ञान छे तेथी संवर कार्य थाय एवो निर्धार नथी.

तथा स्वरूप रमण परभाव राग द्वेष विभावादिकनो त्याग ते चारित्र कहियें, ए रत्नत्रयीरूप परिणाम ते मोक्षमार्ग छे. ए मार्गने साधवाथी साध्य जे परम अव्याबाधपद तेनी सिद्धि निष्पत्ति थाय. जे आत्मानो पोतानुं रूप ते यथार्थ ज्ञान छे. तथा चेतना लक्षण तेज जीवपणो छे, अने ज्ञाननो प्रकर्ष बहुलपणो ते आत्माने लाभ छे; ज्ञान तथा दर्शननो

उपयोग लक्षण आत्मा छे. तिहां छद्मस्थने प्रथम दर्शनोपयोग पछे ज्ञानोपयोग छे, अने केवलीने प्रथम ज्ञानोपयोगपछे; दर्शनोपयोग छे; जे सर्व जीव नवो गुण पामे तेनो केवलीने ज्ञानोपयोग ते कालें थाय ते माटे प्रथम ज्ञानोपयोग वर्ते.

अने सहकारी जे कर्तृताशक्ति ते जेम हतो तेमज छे. एक गुणने साह्य करे अने बीजा गुणनो उपयोग सहकारें वर्ते छे सहकार ते ज्ञानोपयोग विशेष धर्मने जाणे ते जाणतां विशेष ते सामान्यने आधारें वर्त्ते छे ते सहित जाणे एटले विशेष ते भेला सामान्य ग्रहवाणा अने सामान्य ग्रहतां सामान्य ते विशेषता जन कहेतां सहित जाणे ते माटे सर्वज्ञ सर्वदर्शीपणो जाणवो ए रीतेस्वतत्त्वनुं ज्ञान करवुं. तेथी स्वधर्मनो उपादान के० लेवापणुं थाय पछे स्वरूपने पामवे स्वरूपमां रमण थाय ते रमण थकी ध्याननी एकत्वता थाय एटले निश्चें ज्ञान निश्चें चारित्र तथा निश्चें तपपणो थाय जे थकी सिद्धि के० मोक्ष निपजे ए सिद्धांत जाणवो.

तत्र प्रथमतः ग्रन्थिभेदं कृत्वा शुद्धश्रद्धानज्ञानी द्वादशकषायोपशमः, स्वरूपैकत्वध्यानपरिणतेन क्षपकश्रेणीपरिपाटीकृतघातिकर्मक्षयः, अवाप्तकेवलज्ञानदर्शनः, योगनिरोधात् अयोगीभावमापन्नः, अघातिकर्मक्षयानंतरं समय एवास्पर्शवद्गत्या एकांतिकात्यंतिकानाबाधनिरुपाधिनिरुपचरितानायाशाविनाशिसंपूर्णात्मशक्तिप्राग्भावलक्षणं सुखमनुभवन् सिध्यति साद्यनंतंकालं तिष्ठति परमात्मा इति । एतत् कार्यं सर्वं भव्यानां ॥

अर्थ—ते प्रथम ग्रंथिभेद करीने शुद्धश्रद्धावान् तथा शुद्ध ज्ञानी जे जीव ते प्रथम त्रण चोकडीनो क्षयोपशम करीने पाम्यो जे चारित्र ते ध्यानें एकत्व थयीने क्षपकश्रेणि मांडी अनुक्रमे घातिकर्म क्षय करीने केवल ज्ञान केवलदर्शन पामे. पछे ए सयोगी गुणें जघन्यथी अंतर्मुहूर्त अने उत्कृष्टी आठ वरश उणापूर्वकोडी रहीने कोइक केवली समुद्‌घात करें, कोइक केवली समुद्‌घात न करे; पण आवर्जिकरण सर्व केवली करे ते आवर्जिकरणनुं स्वरूप कहे छे–इहां आत्मप्रदेशे रह्या जे कर्मदल ते पेहेला चलेछे, पछे उदीरणा थाय छे, पछे भोगवी निर्जरे छे. तिहां केवलीने जिवारे तेरमें गुणठाणे अल्पायु रहे तिवारें आवर्जिकरण करे छे. ते आत्मप्रदेशगत कर्म्मदलने प्रति समयें असंख्यातगुण निर्जरा करवी छे तेटला दलने आत्मवीर्यें करीने सर्व चलायमान करी मूके एवुं जे वीर्यनुं प्रवर्तन ते आवर्जिकरण कहियें. एम करतां त्रण कर्म्मदल वधतां रह्या तो समुद्‌घात करे नहीतो न करे ते माटे आवर्जिकरण सर्व केवली करे. पछे तेरमा गुणठाणाने अंते योगनो रोध करीने अयोगी अशरीरी, अनाहारी अप्रकंप घनींकृत आत्मप्रदेशी थको, पांच लघुअक्षर जेटलो काल अयोगी गुणठाणे रहीने, शेषसत्तागत प्रकृति विद्यमान तथा अविद्यमान स्तिवुक संक्रमें सत्ताथी खपावी, सकल पुद्गल संगपणाथी रहित थयी, तेहिज समयें आकाश प्रदेशनी बीजी श्रेणिने अणफरसतो थको लोकांते सिद्ध कृतकृत्य संपूर्ण गुण प्रागूभावी पूर्ण परमात्मा परमानंदी अनंतकेवलज्ञानमयी, अनंतदर्शनमयी, अरूपी सिद्ध थाय. उक्तं च उत्तराध्ययने "कहिं पडिहया सिद्धा, कहिं सिद्धा पयट्ठिया ॥ कहिं बोंदि चइत्ताणं ॥ कत्थ गंतूण सिज्झई ॥ अलोए पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पइट्ठिया ॥ इह बोंदिं चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झई ॥" इत्यादि ते सिद्ध एकांतिक आत्यंतिक,

अनाबाध, निरुपाधि, निरुपचरित, अनायास, अविनाशी, संपूर्ण आत्मशक्ति प्रकटरूप सुखप्रते अनुभवे अव्याबाध सुखते प्रदेशें प्रदेशें अनंतो छे उक्तं च उववाइसूत्रें "सिद्धस्स सुहोरासि ॥ सव्वद्धा पिण्डियं जह हविज्जा ॥ सोणंतवग्गोभइयो ॥ सव्वागासे न माइज्जा ॥ १ ॥ " इति वचनात् ए रीते परमानंद सुख भोगवता रहे छे. सादि अनंतकाल पर्यंत परमात्मापणे रहे छे. तो एहिज कार्य सर्व भव्यने करवो, ते कार्यनो पुष्ट कारण श्रुताभ्यास छे ते श्रुतअभ्यास करवा माटे ए द्रव्यानुयोग नय स्वरूप लेशथी कह्यो. ते जाणपणो जे गुरुनी परंपराथी हुं पाम्यो ते गुर्वादिकनी परंपराने संभारुं छुं.

काव्य

गच्छे श्रीकोटिकाख्ये विशदखरतरे ज्ञानपात्रा महान्तः, सूरिश्रीजैनचंद्रा गुरुतरगणभृत्शिष्य-
मुख्या विनीताः ॥ श्रीमत्पुण्यप्रधानाः सुमतिजलनिधिपाठकाः साधुरंगाः, तच्छिष्याः पाठ-
केंद्राः श्रुतरसरसिका राजसारा मुनींद्राः ॥ १ ॥ तच्चरणांबुजसेवालीना श्रीज्ञानधर्मधराः ॥
तच्छिष्यपाठकोत्तमदीपचंद्राः श्रुतरसज्ञाः ॥ २ ॥ नयचक्रलेशमेतत्तेषां शिष्येण देवचंद्रेण ॥
स्वपरावबोधनार्थं कृतं सदभ्यासवृद्ध्यर्थं ॥ ३ ॥ शोधयन्तु सुधियः कृपापराः, शुद्धतत्त्वर-
सिकाश्च पठंतु ॥ साधनेन कृतसिद्धिसत्सुखाः, परममंगलभावमश्नुते ॥ ४ ॥

दोहा.

सूक्ष्मबोध विणु भविकने । न होये तत्त्व प्रतीत ॥ तत्त्वालंबन ज्ञान विण । न टले भवभ्रमभीत ॥ १ ॥
तत्त्वते आतमस्वरूप छे । शुद्धधर्म पण तेह ॥ परभावानुग चेतना । कर्मगेह छे एह ॥ २ ॥
तजी परपरिणतिरमणता । भज निजभाव विशुद्ध ॥ आतमभावथी एकता । परमानंद प्रसिद्ध ॥ ३ ॥
स्याद्वाद गुणपरिणमन । रमता समतासंग ॥ साधे शुद्धानंदता । निर्विकल्परसरंग ॥ ४ ॥
मोक्षसाधनतणु मूल ते । सम्यग्दर्शनज्ञान ॥ वस्तुधर्म अवबोध विणु । तुसखंडन समान ॥ ५ ॥
आतमबोध विणु जे क्रिया । ते तो बालकचाल ॥ तत्त्वार्थनी वृत्तिमें । लेजो वचन संभाल ॥ ६ ॥
रत्नत्रयीविणु साधना । निश्फल कही सदीव ॥ लोकविजयअध्ययनमें । धरो उत्तमजीव ॥ ७ ॥
इंद्रिविषयआसंसना । करता जे मुनिलिंग ॥ खूता ते भवपंकमें । भाखे आचारंग ॥ ८ ॥
इम जाणी नाणी गुणी । न करे पुद्गलआस ॥ शुद्धात्मगुणमें रमे । ते पामे सिद्धिविलास ॥ ९ ॥
सत्यारथ नयज्ञानविनुं । न होये सम्यग्ज्ञान ॥ सत् ज्ञान विणु देशना । न कहे श्रीजिनभाण ॥ १० ॥
स्याद्वादवादी गुरु । तसु रसरसिया शीस ॥ योगे मिले तो नीपजे । पूरण सिद्ध जगीस ॥ ११ ॥
वक्ता श्रोता योगथी । श्रुतअनुभवरस पीन ॥ ध्यानध्येयनी एकता । करता शिवसुख लीन ॥ १२ ॥

इम जाणी शासनरुचि । करजो श्रुतअभ्यास ॥ पामी चारित्रसंपदा । लेहेसो लीलविलास ॥ १३ ॥
दीपचंद्रगुरुराजने । सुपसायें उल्लास ॥ देवचंद्र भविहितभणी । कीधो ग्रंथप्रकाश ॥ १४ ॥
सुणसे भणशे जे भविक । एह ग्रंथ मनरंग ॥ ज्ञानक्रियाअभ्यासतां । लहेशे तत्त्वतरंग ॥ १५ ॥
द्वादशसार नयचक्र छे । मल्लवादिकृत वृद्ध ॥ सप्तशतिनय वाचना । कीधी तिहां प्रसिद्ध ॥ १६ ॥
अल्पमतिना चित्तमें । नावे ते विस्तार ॥ मुख्यथूलनयभेदनो । भाष्यो अल्पविचार ॥ १७ ॥
खरतरमुनिपति गच्छपति । श्रीजिनचंद्रसरीश ॥ तास शीस पाठकप्रवर । पुन्यप्रधान मुनीश ॥ १८ ॥
तसु विनयी पाठकप्रवर । सुमतिसागर सुसहाय ॥ साधुरंग गुणरत्ननिधि । राजसार उवज्झाय ॥ १९ ॥
पाठक ज्ञानधर्म गुणी । पाठक श्रीदीपचंद ॥ तास सीस देवचंदकृत ॥ भणतां परमानंद ॥ २० ॥

इति श्रीनयचक्रविवरणं समाप्तम् ॥

इति जीवविचारादिप्रकरणसंग्रहः तथा

आगमसार–नयचक्रसारः समाप्तः।